ISSN No : 2583-3855

अनुस्वार

साहित्य एवं कला की त्रैमासिक पत्रिका

वर्ष : 2 मूल्य : 50/- त्रैमासिक-अंक 6 एवं 7 संयुक्तांक अप्रैल-सितम्बर 2022

सलाहकार मंडल

सलाहकार संपादक
डॉ. प्रेम जनमेजय
डॉ. एस.एस.मुद्गिल
डॉ. सुशील कुमार त्रिवेदी

प्रबंध संपादक
डॉ. मनोरमा

कार्यकारी संपादक
कामिनी

मुख्य संपादक
डॉ. संजीव कुमार

प्रकाशक एवं स्वामी
डॉ. संजीव कुमार

प्रकाशकीय/संपादकीय कार्यालय : अनुस्वार सी-122, सेक्टर-19, नोएडा-201301 गौतमबुद्ध नगर (दिल्ली एनसीआर)
मुद्रण कार्यालय : बालाजी ऑफसेट, (न्यू-एम-28), 1/11844, उल्धनपुर, नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032
वितरण कार्यालय : इंडिया नेटबुक्स प्रा. लि., सी-122, सेक्टर-19, नोएडा-201301 गौतमबुद्ध नगर (दिल्ली एनसीआर)

© **स्वत्वाधिकार :** मुख्य संपादक : डॉ. संजीव कुमार

आवरण चित्र : शुभ्रामणि
आवरण सज्जा : विनय माथुर

मूल्य : सामान्य प्रति : 50 रुपये
वार्षिक मूल्य : 600 रुपये
द्विवार्षिक मूल्य : 1100 रुपये
आजीवन सदस्यता : 6000 रुपये

भुगतान के लिए :
IndiaNetbooks Pvt.Ltd.
RBL Bank, Noida
A/c No : 409001020633
IFSC : RATN0000191
Paymtm No : 9893561826

नोट : भुगतान करने के उपरान्त रसीद के साथ अपना पता और फोन नं. हमें व्हाट्अप करें इस नं. 9873561826/9810066431 व्हाट्अप करें।

सर्वाधिकार सुरक्षित
प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना इस प्रकाशन का कोई भी हिस्सा, किसी भी रूप में या किसी भी प्रकार से इलेक्ट्रॉनिक, मशीनी या फोटोकॉपी या रिकॉर्डिंग द्वारा प्रतिलिपित या प्रेषित नहीं किया जा सकता।

डॉ. संजीव कुमार, सी-122, सेक्टर-19, नोएडा-201301 गौतमबुद्ध नगर (दिल्ली एनसीआर) द्वारा स्वयं के स्वामित्व में प्रकाशित बालाजी ऑफसेट, (न्यू-एम-28), 1/11844, उल्धनपुर, नवीन शाहदरा-110032, से मुद्रित।

संपादक : डॉ. संजीव कुमार

अनुक्रम

मुख्य संपादक की ओर से	डॉ. संजीव कुमार	5
आवरण कथा	शुभ्रामणि	7
कलाक्षेत्रे		
झुकना	दीपा स्वामिनाथन	9
बोधिसत्व	पारूल तोमर	11
चिंतनधारा		
'रेत समाधि': कथानक, भाषा शिल्प एवं अनुवाद	दिनेश कुमार माली	13
अश्मा : एक आख्यान का पुनर्पाठ	गिरीश पंकज	29
फिल्म सर के लेखक जगदंबा प्रसाद दीक्षित	देवमणि पाण्डेय	33
मन्नू भण्डारी की स्मृति में	मीना झा	39
हरिमोहन झा सामाजिक क्रांति का मुखर स्वर	मेधा झा	42
मेरे मित्र	हरिहर झा	46
व्यंग्य, कहानी, उपन्यास की संरचना और व्यंग्य भाषा	दिलीप तेतरवे	49
संवाद		
दिव्या माथुर के साथ संवाद	डॉ. संजीव कुमार	58
पहली पहली बार		
हरिसुमन बिष्ट की प्रथम रचना एवं पृष्ठभूमि	हरिसुमन बिष्ट	63
कथा-कहानी		
दबी दबी लहरें	मधु कांकरिया	74
परमात्मा नदारद है	हरिप्रकाश राठी	79
डिनर सेट	रंजना जायसवाल	83
मैजिक	सविता चड्ढा	85
थैंक यू कोरोना बनाम काम के गुलाम	डॉ. एस.एस.मुद्गिल	89
बाल साहित्य		
चुटकुले से मामाजी/खाओ सब्जी फल	दिशा ग्रोवर	91
एक बिजूका ऐसा भी	मीनू त्रिपाठी	92
नाटक		
रंग बिरंगा राक्षस	प्रो. राजेश कुमार	95

छोटी-छोटी बूंदे

अपराजिता	अंजू खरबंदा	101
माँ की नज़र	कान्ता रॉय	102
यह कैसा स्वागत	कमलेश भारतीय	103

मिर्ची के रंग

संस्कृति चौराहे पर एक शाम	धर्मपाल महेंद्र जैन	104
काश! भगवान इतने दांत न देता	मुकेश राठौर	106
पांडेय जी सर्दी और आशिकी का लुत्फ	लालित्य ललित	108
आदतें जो ससुराल ले जाएँ	स्मृति कुमार	112
फ्रॉडिये के फेर में फंसा रामखेलावन	रणविजय राव	114
उफ्फ भईया की चोट	हरीश नवल	117

स्वास्थ्य साहित्य

पेशाब की गंध के कारण एवं निवारण	डॉ. श्याम सखा श्याम	120

विधि साहित्य

भारत के संविधान निर्माण में डॉ. अंबेडकर का योगदान	डॉ. सन्तोष खन्ना	122

कविताएँ 126

सौम्या दुआ की ग़ज़लें, शुभ्रमणि की कविताएँ, निर्मला सिंह की कविताएँ, सूर्यदीप कुशवाहा की कविताएँ, केशव शरण की कविताएँ, डॉ. संजीव की कविताएँ, जगदीश डागर की कविताएँ, दिनेश चमोला की कविताएँ, कर्नल प्रवीण त्रिपाठी की कविताएँ, आराधना झा की कविताएँ, अनीता कपूर की कविताएँ, शैल अग्रवाल के मुक्तक छंद।

पुस्तक समीक्षा

आम आदमी का प्रतिनिधि है रामखेलावन	विवेक रंजन श्रीवास्तव	139
राज लक्ष्मी सहाय की कहानी संग्रह 'जय हिंद' की समीक्षा	विनय भरत	141

साहित्य समाचार

डॉ. संजीव कुमार की 100 पुस्तकों के प्रकाशन पर साहित्यकारों द्वारा अभिनंदन	बलराम अग्रवाल	144
अनूठे व्यक्तित्व के सम्मान में अनूठा समारोह	एस.एस.मुद्गिल	147
व्यंग्य मानव के सभ्य होने का उद्घोष है	रणविजय राव	149
प्रेम जनमेजय को मिला 'पं. माधव राव सप्रे सम्मान	विनोद पाराशर	151
वैश्विक हिंदी : संभावनाएँ एवं चुनौतियाँ	डॉ. मनोरमा	153

अन्ततः

सलाहकार संपादक उवाच : चौराहे पर हिंदी	प्रेम जनमेजय	155

मुख्य संपादक की ओर से

अनुस्वार का यह छठा अंक आपके समक्ष प्रस्तुत है। अगर विश्व में हो रही गतिविधियों पर दृष्टि डालें तो वैश्विक स्तर पर अनिश्चितताओं के बादल दिखते हैं। रूस और उक्रेन के युद्ध में प्रवृत्त होने से न केवल पूर्वी यूरोप में अस्थिरता प्रवेश कर गई है बल्कि सच तो यह है कि विश्व के लगभग सभी देश निम्नांधिक प्रभावित हुए हैं। देश में भी सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियां अस्थिरता की ओर संकेत करती हैं। परिणाम प्रत्याशित है। लगभग सभी अर्थव्यवस्थाएं चिंतित भी हैं और प्रभावित भी हैं। हम जानते हैं कि PEST (पेस्ट विवेचना)- अर्थात राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक एवं तकनीकी परिवर्तन जब समाज के बीच घटित होते हैं तो उनका प्रभाव समाज पर पड़े बिना नहीं रहता तो परिवर्तित परिस्थितियां समाज को महंगाई की ओर ले जाने का संकेत दे रही हैं।

अनुस्वार का चौथा और पांचवा संयुक्त अंक आदरणीय प्रताप सहगल के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डालता है। जिसे पाठकों ने उत्साह के साथ पढ़ा। वरिष्ठ साहित्यकारों के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर विशेषांक लाने के उद्देश्य किसी का महिमामंडन नहीं है अपितु पाठकों के लिए, (जिसमें नवोदित रचनाकारों के साथ-साथ शोधार्थी भी शामिल हैं) को विशिष्ट शोध सामग्री उपलब्ध कराना भी है, और इसी उद्देश्य से अनुस्वार के विशेषांक निष्पक्ष भाव से चयनित व्यक्तित्व के संबंध में आवश्यक सामग्री प्रस्तुत करने का प्रयास होता है। इस सामग्री में विभिन्न साहित्यकारों द्वारा चयनित व्यक्तित्व की विभिन्न विषयों पर आलेख दिए जाते हैं। अनुस्वार के विशेषांक पाठकों द्वारा जिस तरह सराहे गए हैं उससे हमारे उद्देश्य की सफलता के संकेत मिलते हैं किंतु यह स्पष्ट समझ लेना चाहिए कि अनुस्वार का हर अंक विशेषांक नहीं हो सकता। हमारे प्रयास चयनित स्तरीय, सामग्री को उपलब्ध करते रहेंगे।

वर्तमान समय में कई घटनाएं सामने आई हैं किंतु हिंदी साहित्य पर बुकर प्राइस की शुभ दृष्टि पड़ना एक नए अध्याय की शुरूआत लगती है। ज्ञातव्य है कि श्रीमती गीतांजलि कृत कृति 'रेत समाधि' को इस वर्ष का बुकर सम्मान प्रदान किया गया है। इस संबंध में एक आलेख प्रस्तुत अंक में शामिल किया गया है। चिंतन धारा में विविधता को समाहित करने का प्रयास किया गया है। इस अंक में यूनाइटेड किंगडम से दिव्या माथुर के साथ हुए संवाद को भी प्रस्तुत किया गया है। कथा-कहानी में हरि सुमन बिष्ट की प्रथम कहानी एवं मधु कांकरिया, हरि प्रकाश राठी आदि की रचनाएं भी शामिल हैं। जो आपको अवश्य पसंद आएगा। अन्य स्तंभ जैसे बाल साहित्य, कविताएं, लघुकथाएं एवं व्यंग्य आदि पूर्ववत ही शामिल किए गए हैं। इसी प्रकार पुस्तक समीक्षा भी साहित्य समाचारों के साथ अपने स्थाई स्तंभों के रूप में उपलब्ध है।

दूसरी महत्वपूर्ण घटना हमारे लेह लद्दाख की यात्र से जुड़ी है। उल्लेखनीय है 36 गढ़ मित्र द्वारा दिए जाने वाला विशेष पत्रकारिता पुरस्कार प्रदान किया जाना। जिससे न केवल अनुस्वार टीम द्वारा किए गए प्रयासों को मान्यता मिलती है बल्कि टीम का उत्साहवर्धन भी होता है।

इन दो घटनाओं के साथ यह उल्लेख भी महत्वपूर्ण है कि मेरी पुस्तकों के शतक पूर्ण करने पर व्यंग्य यात्रा, स्पंदन यात्रा, भारत दर्शन, सिंगापुर संगम, वातायन, 21वीं सदी के साहित्यकार समूह, पाठक मंच समूह एवं अनुस्वार अंतर्राष्ट्रीय मंच के संयुक्त प्रयासों से हमारे लिए एक विषद कार्यक्रम का आयोजन किया गया। जिसमें अनेकों वरिष्ठ साहित्यकारों द्वारा मुझे आशीर्वचन मिले। इन वरिष्ठ साहित्यकारों में चित्रा मुद्गल, ममता कालिया, प्रताप सहगल, शशि सहगल, लालित्य ललित,

प्रेम जनमेजय, प्रो.राजेश कुमार, बलराम अग्रवाल, संजय द्विवेदी, राहुल देव, रमेश सैनी, सुरेश पाठक, संजीव निगम, कमलेश भारतीय, रणविजय राव, लक्ष्मीशंकर वाजपेयी, श्याम सखा श्याम, विनोद पाराशर, बली सिंह, राजेंद्र सहगल, ममता किरण, फारूख आफरीदी , गिरीश पंकज, हरि प्रकाश राठी, राजेश्वरी मंडोरा, सोनी लक्ष्मीराव, नीला प्रसाद आदि लगभग 100 आंगतुक समारोह में शामिल हुए। सभी उपस्थित अतिथियों ने मेरी 100वीं पुस्तक 'आज की मधुशाला' का विमोचन किया और अपने आशीर्वचन कहे।

अनुस्वार ने काफी तेजी के साथ अपने पाठकों का प्यार पाया है। हमने यह फैसला किया था कि अनुस्वार के प्रथम वर्ष पूरे होने पर ही सदस्यता अभियान पूरे करेंगे। इस अंक के साथ सदस्यता फार्म संलग्न किया है जो पाठक सदस्यता ग्रहण करना चाहते हो वह संलग्न फार्म को भरकर शुल्क के साथ भेज सकते हैं। इस अंक में पूर्ववत सभी स्तंभों को स्थान दिया गया है। इनमें से 'रेत समाधि' पर आलेख दिव्या माथुर (यू.के.) के साथ संवाद, हरि सुमन बिष्ट की प्रथम रचना, मधु कांकरिया की कहानी 'दबी दबी लहरें' और हरि प्रकाश राठी की कहानी 'परमात्मा नदारद है' आदि शामिल की गई हैं। कलाक्षेत्रे में दीपा स्वामिनाथन एवं रूपरेखा चौहान की कलाकृतियां शामिल की गई हैं। आशा है पाठकों को पसंद आयेगी।

ये उल्लेखनीय है कि अनुस्वार में प्रस्तुत सामग्री रोचक एवं प्रेरक तो होती ही है किंतु उसे गुणवत्तापूर्वक होने पर ही स्वीकार किया जाता है। इच्छुक पाठकों और रचनाकारों को अपनी रचनाएं भेजने के लिए आमंत्रण है। आप अपनी रचनाएं anuswaar@gmail.com पर भेज सकते हैं।

अनुस्वार द्वारा लघुकथा प्रतियोगिता 2022 के अंतर्गत काफी ज्यादा संख्या में प्रविष्टिया प्राप्त हुई हैं। और उनमें से 13 पुरस्कार प्रादान किये गये हैं। कथा प्रतियोगिता 2022 की घोषणा की जाएगी।

प्रवासी भारतीयों के लिए कई कार्यक्रम चलाये गए हैं। जो प्रवासी साहित्य संगमन के बैनर तले प्रस्तुत किए जा रहे हैं। इस क्रम में सर्वप्रथम लिखित साक्षात्कारों को वैश्विक स्तर पर आरंभ किया गया था। तदुपरांत प्रवासी कवियों की कविताओं का एक संकलन 'पंछी मेरे देश के' प्रेस में जा चुकी और शीघ्र ही उपलब्ध होगी।

अनुस्वार मंच के द्वारा वैश्विक हिंदी : चुनौतियाँ एवं सम्भावनाएँ विषय पर वैश्विक परिचर्चा का आयोजन हिंदी दिवस के अवसर पर हुआ परिचर्चा को दो खण्डों में आयोजित किया गया। भारतीय विचार माला, प्रवासी विचार माला।

विश्व के महान रचनाकारों के विचार परिचर्चा में सामने आए जिनमें से श्री पद्मेश गुप्ता (यूके), श्री अनूप भार्गव (यूएसए), श्रीमती नीरजा माधव (भारत), श्री राहुल देव, (भारत) श्री संजय द्विवेदी (भारत), श्री रोहित कुमार हैप्पी (न्यूजीलैंड), श्री सुरेन्द्र गम्भीर (यूएसए), श्री अशोक व्यास (यूएसए), श्री जावेद खोलोग (तजाकिस्तान), श्रीमती संध्या सिंह (बैंगलोर), श्री धरम जैन (कनाडा), श्री हरिहर झा (ऑस्ट्रेलिया), प्रो. राजेश कुमार (भारत), श्री लालित्य ललित (भारत), श्रीमती नीलू गुप्ता (यूएसए), तेजेन्द्र शर्मा (यूके), राकेश पांडेय (भारत), बली सिंह (भारत) आदि ने भाग लिया।

अनुस्वार मंच द्वारा प्रेमचंद जी की जयंती पर एक गम्भीर परिचर्चा का आयोजन किया गया, जिसका शीर्षक था 'हम प्रेमचंद को क्यों पढ़ें' इस परिचर्चा में श्री कमल किशोर गोयनका, श्री प्रेम जनमेजय एवं प्रो. राकेश कुमार शामिल हुए परिचर्चा का संचालन मेरे द्वारा किया गया।

इसी प्रकार अनुस्वार के चौथे व पांचवें अंक का विमोचन श्री लक्ष्मीशंकर वाजपेयी, ममता किरण, प्रेम जनमेजय, लालित्य ललित, डॉ. संजीव कुमार, राजेश कुमार, दिविक रमेश, स्नेहा देव, शशि सहगल, प्रताप सहगल बलराम अग्रवाल डॉ. मनोरमा, कामिनी मिश्रा रणविजय राव, राजेश्वरी मंडोरा आदि ने भाग लिया।

इन्हीं शब्दों के साथ अनुस्वार का यह अंक साहित्य मनीषियों एवं पाठकों को समर्पित है।

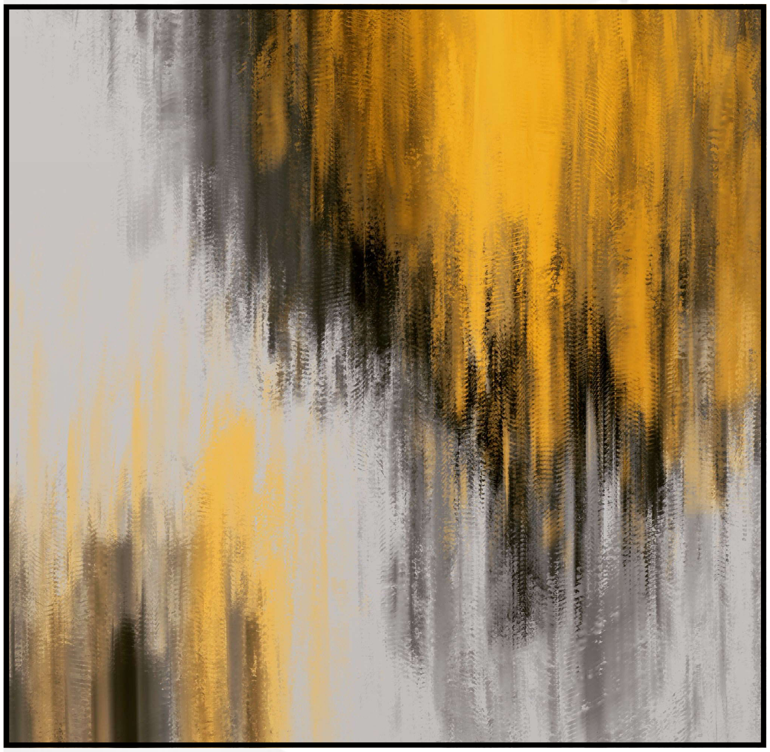

आवरण-कथा

ऊर्जा जीवन का अभिन्न अंग है। भिन्न-भिन्न रूपों में उर्जा हमारी चेतना को जागृत करने के साथ-साथ हमारे क्रियाकलापों को भी शक्ति प्रदान करती है।

आवरण चित्र में ऊर्जा के प्रवाह को स्पष्ट किया गया है।

—शुभ्रामणि

शुभ्रामणि : एक परिचय

शुभ्रामणि एक अमूर्त कलाकार हैं। उनकी प्रेरणा किसी विचार, प्रकृति, वस्तु, भावना या किसी उद्देश्य में छिपी होती है। रंगों और आकारों के माध्यम से उसे कलात्मक रूप में अभिव्यक्त करना उसे एक ऐसी स्वतंत्रता प्रदान करता है जो कई बार शब्दों के माध्यम से अभिव्यक्त नहीं की जा सकती है। अमूर्त कला एक ऐसा माध्यम है जिसमें कलाकार को रंगों के सहारे नए-नए आयाम, नए-नए चित्र बनाने का अवसर मिलता है और हर बार उसकी कला एक अनोखापन लेकर उभरती है। ऐसे ही कुछ नया करने का एहसास और प्रयास शुभ्रामणि की कला का आधार है। एक सलाहकार कम्पनी में काम करते हुए एक कुशल गृहणी के साथ-साथ वह अपने खाली समय का सदुपयोग वह अपने कलात्मक एवं काव्यात्मक अभिव्यक्तियों के द्वारा करती हैं। वह जहाँ एक कलाकार हैं, वहीं एक कवयित्री भी।

झुकना

डाली डाली झुकी हुई है,
तन को अपने भूल गई है,
फल फूलों का ये आनंद उत्सव,
और चहकते पक्षियों का कलरव!
हर भार को कर दे जो आभार,
आतुर देने को नूतन उपहार
कैसे झुक कर करती न्यौछावर,
लुटानो को अपना, सब कुछ सब पर!
वो प्रकृति होगी या कदाचित माँ किसी की,
या फिर प्रेम, पूर्णता और तृप्ति अंतस की!
जो न देखे अपना पराया, न सोचे मेरा कितना
चाहे यदि कुछ तो, वो है कुछ देने की सन्तुष्टता!

–दीपा स्वामिनाथन

दीपा स्वामिनाथन : एक परिचय

जन्म : 10 नवम्बर 1977, दिल्ली
शिक्षा : बी. कॉम (Hons), दिल्ली विश्वविद्यालय, स्नातकोत्तर (विज्ञापन एवं विपणन संचार)
लेखन की विधा : प्रकृति, मानवीय संवेदनाओं से प्रेरित और समाज से उद्वेलित
काव्य, गद्य, व्यंग्य, लघुकथाएँ, लेख, समीक्षा।
कार्य योग्यता :
स्वतंत्र रूप में बैंगलोर में स्थित स्टूडियो से बतौर मिक्स्ड मीडिया आर्टिस्ट एवं
ज्वेलरी डिज़ाइनर कार्यरत २०११-२०१७ दुबई में बतौर स्वतंत्र चित्रकला प्रशिक्षक
६ वर्ष का अनुभव।
दो साँझा काव्य संग्रहों पर कार्यशील
भक्ति संगीत एवं उप शास्त्रीय गायन में सक्रिय : https://youtube.com
channel : /UCd0kSRJgtE1pFr–J–NepK2Q
पता : व्हाइटफील्ड, बैंगलोर, भारत

बोधिसत्व

नील वर्ण गौतम बुद्ध...

जहाँ एक ओर नीला रंग विष का द्योतक माना जाता है वहीं दूसरी ओर आत्मा का रंग भी नीला माना जाता है। इसलिए मैंने गौतम बुद्ध को नीले जलरंग से चित्रित किया।

वितर्क मुद्रा...

गौतम बुद्ध वितर्क मुद्रा में हैं, जो सूचना ऊर्जा और शुभ संचार के प्रवाह का प्रतीक है।

कमल का फूल...

कमल के फूल के विभिन्न रंगों का अर्थ महत्वपूर्ण है। जो बौद्ध धर्म में भाग्य का प्रतीक माना है।

धर्मचक्र...

धर्मचक्र कालचक्र और ज्ञान प्रवर्तन का चिह्न है।

पीपल के पत्ते...

प्रकृति सृष्टि के उद्‌भव और विकास का इतिहास है। जो हमारा शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक पोषण करते हुए, हमें जीवन में आगे बढ़ाती चली आ रही है। हुई थी जिसके कारण उन्हें बोधिसत्व कहा जाता है।

पारुल तोमर : एक परिचय

जन्मस्थल : हिसामपुर (जनपद बिजनौर यूपी)
शिक्षा : एम.ए., पीएचडी हिन्दी
सम्प्रति : स्वतन्त्र लेखन एवं चित्रकारिता
सम्पर्क : parulvineet@gmail.com
प्रकाशित चित्र :
हिन्दी अकादमी, अक्षर प्रकाशन, प्रलेक प्रकाशन, अमन प्रकाशन, इंडिया नेटबुक्स प्रकाशन, शुभदा बुक प्रकाशन आदि प्रकाशनों से अनेक पुस्तकों पर आवरण निरन्तर प्रकाशित।
बाल पत्रिकाओं सहित साहित्य की प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में रेखांकन प्रकाशित।
सूर सागर की चौपाइयों पर आधारित, १२ बाल कृष्ण आकृतियाँ... कविताकोश के वार्षिक कैलेन्डर 2022 में प्रकाशित।
देश की प्रतिष्ठित आर्ट गैलरियों में अनेक कला प्रदर्शनियों में सहभागिता।
विभिन्न विषयों पर अनेक कलाकृतियाँ पुरस्कृत।
लेखन विधाएँ :
कविताएँ, आलेख, संस्मरण एवं व्यंग्य
कादम्बिनी, इन्द्रप्रस्थ भारती, निकट, शब्दिता, इंडिया इनसाइड, अहा जिंदगी, गिरिगौरव, सरिता, महिला अधिकार अभियान, आलोकपर्व, व्यंग्य यात्रा, जनसत्ता, वनिता, सागरिका, अनुगूँज, युद्धरत आम आदमी, जनसंदेश टाइम्म्स, प्रकृति दर्शन, प्रभातखबर, pinkshe अट्टहास, अमर उजाला, दैनिक जागरण, दैनिक जागरण सखी, सुबह सवेरे, डेली न्यूज, मधुराक्षर, भारत भास्कर, नेशनल एक्सप्रेस आदि प्रतिष्ठित राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित।
साझा संग्रहों सहित वेबपत्रिकाओं में भी कविताएँ प्रकाशित।
एकल काव्य संग्रह : संझा बाती (2019) ए पी एन पब्लिकेशन नई दिल्ली।
विभिन्न ई-पत्र पत्रिकाओं में कविताएँ एवम् आलेख प्रकाशित।
आकाशवाणी दिल्ली से कविताएँ प्रसारित।

विश्व लघुकथा प्रतियोगिता-2022

परिणाम

प्रथम पुरस्कार : डॉ. हरीश कुमार सिंह (उज्जैन)
द्वितीय पुरस्कार : डॉ. दुर्गा सिन्हा (यूएसए)
तृतीय पुरस्कार : डॉ. भूपिन्दर कौर (दिल्ली)

सांत्वना पुरस्कार :

1. नीना छिब्बर, जोधपुर
2. क्षमा सिसोदिया, इंदौर
3. वीरेंद्र सरल, धमंतीर
4. मिनी मिश्रा, पटना
5. आशा पाराशर, पालनपुर
6. सुधा आदेश, लखनऊ
7. आभा सिहं, जयपुर
8. प्रमोद त्रिवेदी, निमाड़
9. रणजीत यादव, अयोध्या
10. नमिता सिंह, अहमदाबाद

नोट : सभी विजेताओं से अनुरोध है कि वह अपना पता और मोबाइल नं. inbauthors@gmail.com पर शीघ्र भेजें ताकि उनके पुरस्कार उन्हें भेजे जा सकें।

विश्व कविता प्रतियोगिता-2022

आमंत्रण

विश्व कविता प्रतियोगिता 2022

प्रिय सदस्यों,

अनुस्वार मंच पर "विश्व कविता प्रतियोगिता 2022" का आयोजन किया जा रहा है।

चयनित कविताओं में से तेरह/13 को लॉटरी द्वारा पुरस्कार के लिए चुना जाएगा। प्रथम, द्वितीय, तृतीय एवं दस सांत्वना पुरस्कार दिए जाएंगे। पुरुस्कार में गिफ़्ट हैम्पर/किताबों के लिए कूपन रहेंगे।

पुरस्कृत रचनाओं को "अनुस्वार" पत्रिका में स्थान मिलेगा। इसके साथ ऑनलाइन कविता पाठ प्रोग्राम में इन्हें ब्रॉडकास्ट भी किया जाएगा।

उचित संख्या में कविताएँ उपलब्ध हो गयी तो इन्हें पुस्तक के रूप देकर प्रकाशित किया जाएगा। (लेखक ये पुस्तकें पचास प्रतिशत डिस्काउंट पर ले सकेंगे।)

प्रविष्टि भेजने की अंतिम तिथि : 31 अक्टूबर-2022।

15 दिनों के बाद प्रतियोगिता का रिजल्ट घोषित किया जाएगा। उसके बाद 15 दिनों में सर्टिफिकेट्स और पुरस्कार प्रसारित किए जाएंगे।

अपनी कविताएँ फोटो, संक्षिप्त परिचय, एवं अपने पूर्ण पते, फ़ोन नम्बर के साथ निम्नलिखित ईमेल पर भेजें। (ईमेल भेजते समय सब्जेक्ट के स्थान पर 'अपना नाम' और "विश्व कविता प्रतियोगिता", अवश्य लिखें।)

ईमेल : Inbauthors@gmail.com

bpafoundation@gmail.com

BPA Foundation

बीपीए फाउंडेशन महिला सशक्तीकरण एवं बाल विकास के कार्यों में संलग्न है। यदि आप कोई अवदान करना चाहते हैं तो निम्न बैंक खाते में सीधे जमा कर सकते हैं।

भुगतान के लिए :
BPA Foundation
ICICI Bank, Mayur Vihar, A/c No: 629705015913
IFSC : ICIC0006297, **Paymtm No :** 9810066431

अनुस्वार

anuswaar@gmail.com

सूचित किया जाता है कि 1 अप्रैल 2022 से अनुस्वार की सदस्यता उपलब्ध करवाई जा रही है। सदस्यता शुल्क :
वार्षिक : 600 रु., द्विवार्षिक : 1100 रु. आजीवन : 6000 रु.

भुगतान के लिए :
IndiaNetbooks Pvt.Ltd.
RBL Bank, Faridabad, A/c No: 409001020633
IFSC : RATN0000191, **Paymtm No :** 9893561826

रेत समाधि : कथानक, भाषा, शिल्प एवं अनुवाद

दिनेश कुमार माली

कथानक :

महर्षि पतंजलि के 'योगसूत्र' में मनुष्य के पूर्ण कल्याण तथा शारीरिक, मानसिक और आत्मिक शुद्धि के लिए अष्टांग योग (आठ अंगों वाले योग) को विस्तार से बताया है। योग के ये आठ अंग हैंः यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि। ध्यान की उच्चतम अवस्था होती है समाधि। निर्विकल्प और सविकल्प। इस उपन्यास में समाधि का साधारण भाषा में दूसरा अर्थ भी लिया गया है, जैसे अक्सर यह कहा जाता है कि अमुक महात्मा ने वहां समाधि ली या अमुक महात्मा की समाधि वहाँ खुदी हुई है या बनी हुई है। खासकर पौराणिक या उदात्त चरित्रों की मृत्यु को महिमा मंडित करने के लिए इस समाधि शब्द का सम्मान के अर्थ में प्रयोग किया जाता है, उदाहरण के तौर पर राम भगवान ने सरयू नदी में जल समाधि ली, यह नहीं कहा जाएगा कि उन्होंने आत्महत्या की।

'रेत समाधि' उपन्यास में समाधि शब्द का अभिनव प्रयोग हुआ है क्योंकि रेत में घुसकर कोई साधु संत या महात्मा समाधि नहीं लेते हैं। यह दूसरी बात है, हो सकता है, उनकी मृत्यु के बाद उन्हें वहाँ गाड़कर ऊपर रेत डाल दी जाए। इस उपन्यास में देश विभाजन के दौरान थार मरुस्थल में आने वाली आंधी, रेतीले तूफान, घूर्णावृत आदि की वजह से पाकिस्तान से ट्रक भर भरकर लाई गई हिन्दू लड़कियों को थार के असीम रेत समुंदर में दफन होने की दास्तान का सजीव वर्णन है। रेत के समुद्र में जल नहीं है, केवल रेत ही रेत है, इसलिए उपन्यासकार ने 'जल समाधि' शब्द का प्रयोग जान बूझकर नहीं करते हुए 'रेत समाधि' शीर्षक हेतु शब्द चयनित किया है।

भाषा और संस्कृति के दृष्टिकोण से अगर देखा जाए समाधि विशिष्ट संस्कृति का परिचायक है, जो अनुवाद शब्द है, अतः इसका अनुवाद Tomb न होकर समाधि रहना ज्यादा उपयुक्त है।

Tomb किसी दरगाह, कब्रिस्तान या मकबरे की याद दिलाता है, जहाँ मुस्लिम संप्रदाय के मुर्दो को गाढ़ा जाता है और उनकी याद में यथाशक्ति कब्र, मीनार या महल बनाया जाता है। इस वजह से Tomb से न तो समाधि की तरह ध्यान की उच्चतम अवस्था का संकेत मिलता है और यह भी जरूरी नहीं है कि समाधि में बैठा हुआ कोई पुरुष या योगी मुर्दा लाश ही हो, क्योंकि समाधि टूटने पर वह अपनी सामान्य अवस्था में लौट आता है, जबकि Tomb से क्या कभी कोई मुर्दा जीवित लौटा है?

सांस्कृतिक पार्थक्य होने के कारण या फिर किसी संस्कृति के विशेष शब्दों पर बौद्धिक आक्रमण की राजनीति से उनके सही अर्थ नहीं मिलने की वजह उनके लगभग समतुल्य शब्दों का प्रयोग किया जाता है, उससे उस शब्द का महत्त्व धीरे-धीरे क्षीण होता जाता है।

'रेत समाधि' उपन्यास भारत पाकिस्तान विभाजन पर आधारित है। यह विभाजन 1947 में हुआ था तो यह सवाल उठना लाजमी है कि क्या उपन्यासकार ने भारत पाकिस्तान विभाजन के वे दृश्य अपनी आंखों से देखे हैं या खुद भोगे हैं? उत्तर मिलेगा, नहीं। उपन्यासकार का जन्म देश विभाजन के लगभग एक दशक बाद हुआ और फिर विभाजन के सात दशक बाद उन भूली बिसरी स्मृतियों को कुरेदने के पीछे क्या सार्थकता रही होगी इस तरफ ध्यान जाना ज्यादा जरूरी है। मानवता का संदेश देने या भारत पाकिस्तान के विलय के वातावरण तैयार करने या भारत में हो रहे हिंदू मुस्लिम झगड़ों को शांत करने की पहल करने या अपनी गुरु कृष्णा सोबती के प्रति सम्मान व्यक्त करने हेतु उन्होंने इस उपन्यास की रचना की। जो भी कारण रहे हो, यह सत्य है कि यह उपन्यास अतीत के इतिहास को पूरे तरीके से

झकझोर देता है, पुराने जख्मों को ताजा करता है और वर्तमान पीढ़ी को अपनी पूर्व पीढ़ी के संघर्षों, यातनाओं, प्रताड़नाओं की याद दिलाता है। मानवीय धरातल पर बहुत कुछ कह जाता है यह उपन्यास। धर्म, जाति, संप्रदाय और सीमा रेखा से कोसों दूर भभक उठती है प्रेम की एक अनोखी महक। राजनेताओं ने धर्म के आधार पर समाज में घृणा भाव पैदा कर अलग-अलग देश बांटे, लोगों को ऐसे बांटा मानो वे अलग-अलग देश हो। देश की सीमा से लोगों को जोड़ने का काम करना चाहिए, समन्वय का काम करना चाहिए, न कि उन्हें तोड़ने का काम। बंटवारे से पूर्व कभी पाकिस्तान वाली जगह में हमारे देश के अग्रज रहा करते थे, आज उनसे मिलने के लिए, अपने पूर्वजों की या अपनी जन्मस्थली के दर्शन के लिए, वहाँ अपने बीते दिन, जलवायु परिवेश का सान्निध्य पाने के लिए पासपोर्ट वीजा की जरूरत होती है? जैसे कृष्णा सोबती की कहानी 'सिक्का बदल गया' में कभी अपना शुभचिंतक रहा व्यक्ति ही कहानी के पात्र का जानलेवा दुश्मन बन जाता है, वैसे ही इस उपन्यास में भी मां को गोली मारने वाला और कोई नहीं, बल्कि अपने पहले प्रेमी अनवर का पुत्र अली अनवर ही होता है। अली अनवर मां के पुत्र के तुल्य है, वह बदल जाता है। ऐसा क्यों? क्या विवशता है धर्म की, मान मर्यादा की, राजनीति की, देश भक्ति की। यशपाल के उपन्यास 'झूठा सच' में असद अपनी प्रेमिका तारा से शादी नहीं कर पाता है, मगर उसे सरहद तक पहुंचाने में मदद अवश्य करता है, वैसे ही 'रेत समाधि' में अनवर अपनी प्रेमिका चंदा यानि चंद्र प्रभा, उपन्यास की प्रमुख पात्र मां से स्पेशल मैरिज एक्ट 1870 के तहत शादी तो कर लेता है, मगर धर्म के आधार पर बंटे देश पाकिस्तान में अनवर उसे छोड़ देता है। यह कैसा समय रहा होगा क्या बीती होगी उन बिछड़े हुए युगलों पर देश विभाजन पर आधारित साहित्य की रचना करने वाले भीष्म साहनी, बलवंत सिंह, जोगिंदर पाल, मंटो, राही मासूम रजा, कृष्णा सोबती, इंतजार हुसैन, खुशवंत सिंह, रामानंद सागर, मंजूर एहेतशाम, राजेंद्र सिंह बेदी, कृष्ण बलदेव वेद, टोबा टेक सिंह, फजलदिन सभी को उपन्यासकार गीतांजलि श्री ने सम्मानपूर्वक याद किया है और उनकी प्रमुख रचनाओं को भी, जैसे 'झूठा सच', 'तमस', 'सूखा बरगद', 'ए ट्रेन टू पाकिस्तान', 'गुजरात पाकिस्तान से गुजरात हिंदुस्तान, 'जिंदगीनामा' आदि कृतियों को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से इस कृति में यथोचित स्थान दिया है। निस्संदेह यह कृति लेखिका के अर्जित अनुभवों पर आधारित है, न कि स्वयं के द्वारा भोगे हुए। इस वजह से लेखिका ने ऐसे प्रमुख पात्र की कल्पना की है,जिसने देश विभाजन से दस-पंद्रह साल पूर्व से लेकर आज तक आधुनिक पाकिस्तान वाली जगह पर जीवन जिया हो और देश विभाजन के बाद एक दीर्घ समय हिंदुस्तान में बिताया हो। इसके अतिरिक्त, उसका भरा पूरा परिवार हो, बेटी-बेटा, पोता, सगे संबंधी सभी हो।

ऐसा पात्र मिला उन्हें चंद्रप्रभा के रूप में। देश की आजादी के समय वह तेरह-चौदह साल की स्कूल पढ़ने वाली छात्रा रही होगी। अपने प्रेमी अनवर के साथ पाकिस्तान के बाजारों में गोश्त खाते समय 'ला इलाहा ईल्लल्लाह मोहम्मदुर रसूलल्लाह' और घर आकर अपने माता-पिता के सामने 'ओम भूर्भुव स्व' गायत्री मंत्र का जाप करती प्रगतिशील विचारधारा वाली महिला थी। हिंदू और मुस्लिम धर्मभीरुता से ऊपर थी उनकी जिंदगी। मगर राजनीतिक पलटवार ने उनकी जिंदगी में भूचाल ला दिया। हिंदू हिंदुस्तान बन गया और मुसलमान पाकिस्तान। एक दूसरे के जानलेवा कट्टर दुश्मन। चंद्रप्रभा हिंदुस्तान लौट आई और अनवर रह गया पाकिस्तान में ही। यद्यपि गीतांजलि श्री के उपन्यास की मुख्यपात्र माँ फ्लैशबैक तकनीक से अपने बुढ़ापे की आंखों के लेंस उसे अपने बचपन की यात्रा कराती है।

'पीठ' भाग में मां सोई हुई है दीवार की ओर पीठ किए, अपने पति की मृत्यु के बाद अवसादग्रस्त होकर। उठ नहीं रही है, घरवाले उसे उठाने की भरसक कोशिश करते हैं तो मां की पीठ इस उपन्यास की पृष्ठभूमि बन जाती है, जिससे यादों के अजस्र स्रोतें फूटने लगते हैं। नहीं, नहीं उठने का कहने के बावजूद नई-नई और अंत में वह पूरी तरह से नयी होकर उठती है। वहीं से स्वच्छंद नारीवादिता के स्वर मुखरित होने लगते हैं।

मां के बेटे विदेशों में रहते हैं, पाश्चात्य संस्कृति में रचे-बसे भारत और भारतीयता उन्हें रास नहीं आती है। हर

चीज में बुराई नजर आने लगती है। उनके चेहरे पर हंसी नहीं है। आधुनिक जीवन की आपाधापी में न केवल उनके चेहरे की हंसी छीन ली है, वरन उनकी भाषा में भी अनर्गल शब्दों की बाढ़ ला दी है। भाषा की शुद्धता और शुचिता बची नहीं रह गई। हिंदी, अंग्रेजी और देशज बाहुल्य शब्दों वाली मिश्रित भाषा में 'फक यू', 'स्क्रू यू', 'वाऊ', 'ओ शिट' 'रेनबो चमकोड हियर', 'ए रेनबो चमकोइंग दियर', 'लंच टर्ण्ड डिनर','आरा हिले छपरा हिले', 'अरे ओ सांभा कितने आदमी थे!', 'माइक पर भाषण पेलते', 'भकोस गया', 'कुछ पैसा आ जाएगा तो कोनो हर्ज नहीं', 'हाथ तेज चलेब ही करबे', 'चिल्ल ग्रेनी बुगीवुगी', 'मैलिआ दे', 'लिंगेमरमर', 'अटकलपच्चू', 'गेंदतड़ी' जैसे अनेक वर्तमान की बोलचाल की भाषा के शब्दों का भरपूर प्रयोग हुआ है। अनेकता में एकता वाले युग का शब्द भंडार! एक जगह तो गीतांजलि श्री ने लगभग दो पेज एक ही सांस में बिना रुके लिख डाले अर्थात् न कहीं अर्धविराम, न कहीं पूर्णविराम, न कोई संबोधन सूचक और न ही विस्मयादि बोधक चिह्न!! ऐसा प्रयोग मैंने तो अपने जीवन में पहली बार हिंदी भाषा में देखा हो सकता है और लगता है कि भाषा के माध्यम से आधुनिक जमाने की जटिलता को प्रकट करने के लिए लेखिका ने यह जोखिम भरा कदम उठाया हो। मगर पाठक तो अपने हिसाब से ही पढ़ता है, दीर्घ वाक्यों को तोड़-तोड़कर। जबकि इन दो पेजों के अनुवाद में विराम चिन्हों का भरपूर प्रयोग हुआ है।

आधुनिक युग की आपाधापी की वजह से मां के बड़े विदेशी लड़के के चेहरे पर हंसी हमेशा गायब रहती है वाक्य से लेखिका ने व्यंगात्मक रूप से आधुनिक जीवन शैली पर करारा प्रहार किया है, इसी तरह रीबॉक का उदाहरण देकर भूमंडलीकरण पर। लेखिका के अनुसार रीबॉक बिरादरी ने अपने विस्तार में सिखों, गुज्जूओं और चीनियों को भी पीछे छोड़ दिया है। उनकी भाषा में, एक खबरिया इसी पर अहंकारी हो गया था कि आइसलैंड में सरदार जा पहुँचा है, मय पगड़ी कड़ा किरपान के। मगर रीबॉकों ने इन सबको धता बतला डाला है। और जूते तो जूते, मोज़े, दस्ताने, टोपी, बस्ते, ब्रेसीयर्स की शक्लो सूरत लेकर, कहाँ नहीं शान बघारते हैं। "(रेत समाधि, पृष्ठ-35)"

घर गृहस्थी की छोटी-मोटी वस्तुओं, दैनिक दिनचर्या और गोपनीय रखी जाने वाली बातों जैसे खून से सना ऋतुमती स्त्री का पैड, संयुक्त परिवार के विघटन, नाभिकीय परिवारों में स्त्री के शोषण, समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार, पहुंच वाले लोगों की पूँछ और पूछ, देश के सांस्कृतिक और वैश्विक परिपेक्ष में योगदान, देश के कोहिनूर हीरे, नोबेल तमगे और राष्ट्रपति निवास से घंटा गायब होने के साथ-साथ विलुप्त होने वाली भाषाओं जैसे अंडमान की अ कोबा, अका कोरा, अ पुकिवार, कोचीन की वाइपिन और ऑस्ट्रेलिया की बिदमारा आदि का व्यंग्यात्मक प्रहार करते हुए विशिष्ट संदर्भ दिया है।

कहीं-कहीं गीतांजलि श्री के दार्शनिक विचार भी इस उपन्यास में अपने आप अभिव्यक्त हो जाते हैं, जैसे समय और परिस्थितियों ने दुर्योधन, रावण और जिन्ना को खलनायक का दर्जा दिया, वरना उनमें भी अच्छाई के अंश विद्यमान थे। उन्हीं के शब्दों में, 'दुर्योधन भी सुयोधन का पल पा सकता है रावण तो घोर प्रशंसा भी, और हमारे अपने वक्त में जिन्ना भी अच्छी बुरी स्मृतियों से संजोये जाते हैं, पर कुलजमा बात ये कि जीवन जीवन है और मृत्यु, जो मौत है, और गया गया है, और व्यस्त व्यस्त। सार ये कि बड़ी हस्तियाँ और खज़ाने और स्मृतियाँ जहाँ गयीं और नहीं लौटीं, वहाँ इन रोज के मामूली असबाब की क्या बिसात कुछ नहीं।" (रेत समाधि, पृष्ठ 87) इसी तरह कुछ और दार्शनिक विचार इस उपन्यास में आसानी से पढ़े जा सकते हैं, जैसे इस उपन्यास के पृष्ठ 196 से उद्धृत हैः

"मौत है तभी जीवन अनंत है। आज जीवन खतरे में है क्योंकि वैज्ञानिक पैदा हो गए हैं जो लगे हैं कि मौत को ही खत्म कर दें और चिरकाल के लिए जीवित हो लें। वे जरूर जीवन का खात्मा करने वाले हैं। उन्हें शायद पता नहीं कि ययाति को हमेशा युवावस्था में रहने का वरदान मिल गया तो वे स्वयं उसे तज देने को बेक़रार हो गए। दुश्मनी जवानी से नहीं, हमेशा से थी। क्योंकि हमेशा हो तो उसकी हस्ती मिट जाती है। मौत से ही जीवन है और दुःख से ही सुख। आदि इत्यादि।"

और यथार्थपरक पारिवारिक मसले भी, जैसे हर माँ का एक ऐसा बेटा होता है, जो उसे बताता है कि मां तेरी बलि चढ़ी है परिवार की वेदी पर। औरत हर रंग जाति की इस कसौटी पर खरी उतरती है। (रेत समाधि, पृष्ठ 37)

दूसरे भाग 'धूप' में बेटी माँ के अंतस का अन्वेषण करती है और उसके भीतर जिजीविषा के भाव पैदा करती है। कहीं मां के चेहरे पर दाढ़ी के बाल उगने लगते हैं तो कई योनि में शिश्न जैसा सिस्ट। लेखिका उपन्यास में इस प्रसंग को लिखती है, "क्या शिव जी का दहकता लिंगम जिसे पार्वती ने अपने भीतर खींच लिया था कि शीतल जल में डुबो के उसकी जलन बुझा दें? श्शश शान्त शान्ति... योनि ने धधकते इरादों पर पानी फेर दिया, स्थिर रहें, निर्वाण, साधना, समाधि, जैसे हर शिव मन्दिर में देख लो। योनि और योगी।" (रेत समाधि, पृष्ठ 222) बेटी नारीवादी विचारों की प्रबल समर्थक है और वह माँ को उसके बुढ़ापे में उन्मुक्त भाव से जीवन जीते देखना चाहती है। वह जानती है कि एक ही खोल में माँ और प्रेमिका दोनों एक साथ नहीं रह सकती हैं या तो उस खोल में प्रेमिका रहेगी या फिर माँ। वह माँ के भीतर प्रेमिका को जगाने का अवसर प्रदान करती है। वह माँ के दोस्त हिंजड़ा रोजी बुआ और दर्जी मास्टर रजा से भी मिलने का अवसर प्रदान करती है। लेखिका ने नारीवादिता संबंधित अपने अंतर्मन के विचार तुलसीदास की रामचरित मानस के कागभुशुंडी की तरह अपने काल्पनिक किरदार कौए की पत्नी कौवी के मुख से कहलवाए हैं, "वो अपने वक्त की दबंग फेमिनिस्टों में, जिन्होंने ये हक अपनी बहनों को दिलाया कि हम मादाएँ भी हर मीटिंग में आयेंगी और पूरी बिरादरी के निर्णयों में हमारी भी साझेदारी होगी। यह भी कि कोई अपना अंडा दूसरे के घोंसले में कौवाकाहिली में नहीं छोड़ेगा, और न सींक तिनका फेंकफांक कर घरौंदा बनेगा हम भी करीने से रहेंगी, और कौवा भी अंडे से, गाए क्योंकि जो बच्चे होंगे वो उसके भी हैं।" (रेत समाधि, पृष्ठ 185)

रोजी बुआ के चरित्र चित्रण के माध्यम से लेखिका ने किन्नर समाज की समस्याओं को भी जनमानस के समक्ष लाने का सफल प्रयास किया है और किन्नर रोजी बुआ के भीतर विद्यमान दयालु हृदय की भावना को उजागर करने में कोई कसर नहीं छोड़ी है। रोजी अपनी व्यथा समाज के समक्ष इन शब्दों में रखती है, "न मेरे लिए फ़िल्म, न साहित्य, न कला, न कपड़े। जो आप उतार दें, उस उतरन में हम उतर लें। अपनी कहीं गिनती नहीं। झील में बाजी डाल आओ तो किसी को पता नहीं चलेगा कि एक कम है।" (रेत समाधि, पृष्ठ 239)

माँ के बाल गूँथने, पैरों की मालिश करने तथा उसके सुख-दुख को बांटने वाली रोजी बुआ देश विभाजन के समय से माँ की साथिन हैं, इसलिए मां का उसके प्रति विशेष लगाव भी साफ दिखाई देता है। वह माँ को अपने पूर्व वतन पाकिस्तान जाने के लिए प्रेरित करती है और कहती है हिंजड़ों के लिए इस समाज में पासपोर्ट और वीसा की क्या जरूरत है? क्या तीसरे लिंग को समाज ने कभी मान्यता दी है? तीसरे लिंग के इस दर्द को उन्होंने अपने उपन्यास में प्रस्तुत किया हैः "मुझे पासपोर्ट से क्या न होने के फ़ायदे हैं। हमारी गिनती न मुस्लमीन किरस्तान में, न यहूदी, पारसी और हिन्दू में न आदमी औरत में, हमारा नाम नहीं लेना, हमें पहचानना नहीं। हमें असल क्या, तसव्वुर से ही गायब रखना चाहते हैं तो हम तो कहीं भी घुस लें।" (रेत समाधि, पृष्ठ 238)

रोजी की मृत्यु के बाद मानवाधिकारों के संवैधानिक रक्षा और सामाजिक स्वीकार्यता हेतु पत्रिका में लंबा लेख लिख कर बेटी का प्रेमी केके एक पत्रिका के संपादक के पास भेजता है तो वे इसे पाठकों के दिलचस्पी के विरुद्ध समझकर लौटा देते है, यहाँ तक कुछ स्वार्थी तत्व रोजी के आगे-पीछे कोई न देखकर उसकी संपत्ति लूटने के चक्कर में उसकी हत्या तक कर देते हैं। इस भाग के बीच-बीच में उपन्यासकार गीतांजलि श्री कृष्णा सोबती की कहानियों और उपन्यासों के दृष्टांत देते हुए उनकी अप्रत्यक्ष रूप से उपस्थिति दर्ज करवाती है। कृष्णा सोबती की कहानी 'ए लड़की' और उनके उपन्यास 'गुजरात पाकिस्तान से गुजरात हिंदुस्तान' आदि के प्रसंगों को पाठकों के सामने रखती है। इस उपन्यास का 'धूप' वाला खंड पाकिस्तान में लाहौर कराची और इस्लामाबाद जाने की पृष्ठभूमि तैयार करता है।

तीसरा और अंतिम खंड 'हद सरहद' में लेखिका सर्वप्रथम देश-विभाजन के कथानक को आधार बनाकर अपनी रचनाएं लिखने वाले सभी रचनाकारों के व्यक्तित्व और कृतित्व को सम्मानित करते हुए बाघा बॉर्डर पर हो रहे ड्रामे में प्रमुख स्थान देती है, जो साहित्यानुरागी पाठकों को रोमांचित करती है और उनमें देश प्रेम का जज्बा पैदा करती है। इस खंड में देश विभाजन के समय होने वाली निर्मम हत्याओं का वर्णन रोंगटे खड़ा करने वाला है। बाप द्वारा अपनी बेटी का सर कलम, पति द्वारा पत्नी की हत्या, बूढ़ी औरत को मोटे डंडे पर बांध कर ले जाना, जान बचाने के लिए पेड़ पर छुपे हुए छोटे बच्चों की गोली मारकर हत्या आदि का वर्णन पाठकों की आँखों में आँसू ले आता है। साथ ही, अखंड भारत के इतिहास को भी बीच-बीच में रखते हुए आगे बढ़ाया गया है। बेटी जब माँ को लेकर पाकिस्तान आती है तो उसके मन में लाहौर का किला, रावी, मांटेगमरी हॉल, शाही हमाम, बाजार पता नहीं क्या-क्या देखने की इच्छा जाग जाती है। यह वही जगह है, जहां उसका अपना बचपन बीता था। अपनी छड़ी को फैला कर उसकी मूठ पर तितलियों को बुलाकर देश विभाजन के जमाने की चार मार्मिक कहानियां सुनाती है। पहली कहानी 'कहानियां' में रसोई में खाना बनाने वाली हिन्दू लड़की को किस तरह मुसलमान लोग उसके रसोईघर से खींच कर, उसका घर जला कर, गाड़ी में जबरदस्ती लादकर, ट्रक में भरकर बेचने के लिए ले जाते हैं। उसे कभी खंडहर में रखते हैं तो कभी किसी कैदखाने में, नहीं तो कभी जानवरों के अस्तबल में उन्हें सुलाया जाता है। यह लड़की और कोई नहीं होती है, होती है वह इस उपन्यास की मुख्य पात्र माँ। जिसका प्रेमी अनवर कहीं दूर लायलपुर सिटी गया होता है, और उधर माँ किसी कैदखाने में, अनवर के साथ अजायबघर में देखी बूढ़े बुद्ध की मूर्ति मिलती है, जिसे वह अपने सीने से चिपकाकर साथ ले जाती है, प्रेम के निशानी के तौर पर। यहीं पर यह कहानी खत्म हो जाती है।

दूसरी कहानी 'मूर्ति और वो लड़की' है। इस कहानी में उस लड़की को अन्य लड़कियों के साथ तारपोलीन ढके ट्रक से खोखरापार रेलवे स्टेशन ले जाया जा रहा होता है कि कहीं दूर से ऊंटों का काफिला उधर आता हुआ दिखाई देता है तो ट्रक वाले उन्हें वही छोड़कर भागने लगते हैं। उस लड़की की मूर्ति कहीं इधर-उधर हो जाती है तो एक गूमड़ वाला आदमी उसे लाकर देता है। जैसे ही वह मूर्ति एक हाथ में पकड़कर लेकर जाने ही वाली होती है कि दूसरा हाथ कोई छोटी लड़की पकड़ लेती है, सिसकती हुई। वह छोटी लड़की और कोई नहीं रोजी होती है। इस तरह गीतांजलि श्री ने माँ का रोजी के साथ पुराने संबंध जोड़कर उपन्यास में एक रोचकता पैदा की है।

तीसरी कहानी का शीर्षक है 'रेत समुंदर'। जिस तरह तेज हवा तूफानी समुंदर में जहाजी बेड़ों की दिशा बदल देती है और उस पर सवार लोगों को इधर-उधर लुढ़का देती है, वैसे ही थार के इस रेत समुंदर में कोई सुनामी रेतीली लहरों को पैदा करती है, जिसमें कई अपहृत लड़कियों की समाधि लग जाती है। यही है 'रेत समाधि' उपन्यास की पराकाष्ठा। वहां एक ऋषि समाधि में मिलता है, मगर धड़ कटा। कुछ सीटी बजाती हुई लड़कियां उस समुद्र से अपने को बचाने का प्रयास करती हैं तो कुछ लड़कियां समुद्र में डूबने लगती हैं।

चौथी कहानी 'डूबों का होना' में मूर्ति, रोजी (वो) और बच्ची (मां) बच जाती हैं, और जब उन्हें होश आता है तो वे मूर्ति के साथ किसी अनजान छावनी के अस्पताल में नजर आती हैं। बाद में उन्हें पता चलता है कि वहां सरहद खींच ली गई है। उपन्यास के अंतिम भाग में भारत विभाजन के निर्मम दृश्य को सजगता और सजीवता के साथ प्रस्तुत किया है। प्रारंभिक दो सौ पृष्ठों तक उपन्यास जनसाधारण पाठक को बोझिल लगने लगता है, वहाँ तीसरे खंड में उपन्यास अपनी यथार्थता, ऐतिहासिकता और सघन अनुभूतियों के बल पर अत्यंत ही रोचक और गतिशील नजर आने लगता है। इस तरह यहाँ तक पहुंचने के लिए पाठकों को मानव मस्तिष्क के विभिन्न पहलुओं से गुजरते हुए मानव मन की क्लिष्टताओं, निस्संगता, प्रेम, दोहरापन, दिखावा और कृत्रिमताओं आदि को महसूस करते हुए जीवन की धूप-छाँव देखते हुए उपन्यास की पराकाष्ठा तक पहुंचते हैं, जहां अस्सी वर्ष की माँ के हृदय में पाकिस्तान भ्रमण के

दौरान खैबर में उसके पहले प्रेम के बीज प्रस्फुटित होकर वृक्ष का रूप धारण कर लेता हैं। वहाँ वह पाकिस्तानी जेल को ही अपना घर समझने लगती है और अपने भीतर पहले प्रेमी अनवर को पाने की गंभीर चाह। इस वजह से न केवल उसकी, बल्कि उसकी बेटी की जान खतरे में पड़ जाती है। वह खैबर में बिना वीसा के भी बिंदास होकर घूमने लगती है। उसे यह आभास हो जाता है कि उसकी अंतिम परिणति होगी मृत्यु। उस अंतिम परिणाम के लिए वह पहले से ही मानसिक तौर पर तैयार हो जाती है और पीठ के बल जमीन पर गिरने का अभ्यास करती है ताकि मरते समय उसकी आंखें आकाश की ओर हो और पीठ जमीन पर, इस दृश्य को ध्यान में रखते हुए डेजी रॉकवेल अपने अनुवाद में इस भाग का नाम 'बैक टू फ्रन्ट' (पीठ से आगे की ओर) रखती हैं। खैबर में उसकी अनवर अली नामक मिलिट्री ऑफिसर से मुलाकात होती है, जो उसके पहले प्रेमी अनवर का पुत्र होता है। वह पहले उसकी मूर्ति को ले जाकर अपने लकवाग्रस्त पिता के सिरहाने पर रखता है और चन्दा को भी उनसे मिलाने ले जाता है। उसे देखकर अनवर के मुंह से एक भी शब्द नहीं निकलता है तो वह अतीत में उसके साथ गाए हुए गानों, भजनों और प्रार्थनाओं को गाकर उसकी स्मृति लौटाने की कोशिश करती है, 'मेरे प्रभु दीनदयाल, अरज करत इब्राहीम मेरे मौला', 'भेजूंगी संदेशवा जब से पिया परदेश गए सुख की नींद ना आए'।

अनवर की आंखों से आंसू टपकने लगते हैं, वह उसके सिर पर हाथ घुमाती है और अपने हाथों में उसके हाथ को रखती है। फिर उससे मिलने नहीं आ पाई, उसके लिए माफी मांगती हैं तो अनवर के होंठ फड़क उठते हैं, 'माफीनामा' शब्द के साथ। मगर इस तरह मनुष्यों द्वारा खींची सरहद उन्हें अलग नहीं कर पाती है। पहले ही सरहद पर माँ मिलिट्री ऑफिसर को लंबा व्याख्यान सुना देती है कि सरहद तोड़ने के लिए नहीं वरन जोड़ने के लिए होती है जैसे रुमाल की किनार, मेजपोश का बार्डर, खेतों की मेड़, आसमान की सरहद, छत की मुंडेर, तस्वीर की फ्रेम आदि सारी सरहदें एक वजूद को घेरती हैं, रोकती नहीं, जोड़ती हैं जैसे रात और दिन, जिंदगी और मौत। सरहद जेल नहीं बल्कि इश्क है,संगम है, मुलाकात है, मगर मां की सरहद वाली विचारधारा अली अनवर को नागवार गुजरती है और उसे अपनी नौकरी, इज्जत, देश प्रेम का ख्याल आते ही चंद्रप्रभा को अपने पति से अश्रुल विदाई लेने के बाद बाहर जाते समय पीछे से वह गोली मारकर माँ की हत्या कर देता है। इस तरह लेखिका अपने उपन्यास त्रासद अंत करती है। गोली मारने को उचित ठहराने के लिए लेखिका अनवर अली के माध्यम से कई काल्पनिक तत्वों का सहारा लेती है जैसे कि वह लाहौर से मूर्ति चुरा कर भाग रही थी, वह उसके देश में जासूसी करने आई थी, उसे भयंकर जानवर समझ कर किसी ने मार दिया आदि आदि जबकि दिल्ली और पाकिस्तान के अखबारों में सुर्खियां इस तरह प्रकाशित होती है 'सीमा को लांघते हुए दिल्ली की अस्सी साला नारी बिना वीजा के पैदल सीमा पर पुराने प्रेमी की खोज में', 'एक और गायब', 'सीमा पार खैबर पख्तून में बुरी फँसी दो हिंदुस्तानी महिलाएं', 'चंद्रप्रभा देवी उर्फ चंदा के दावे', 'चढ़ी जवानी दादी नूँ'। इन तथ्यों को एकत्रित कर बॉलीवुड वाले फिल्म बनाने के स्क्रिप्ट लिखने की तैयारी में लग जाते हैं। वे व्यापारी है न!

अंतिम पन्नों में विभाजन की त्रासदी को झकझोरती किताब राष्ट्र और कौम की सरहदों की कृत्रिमता और अमानवीयता को दिखाती है और लिखती है "हमारी किसे पड़ी, हम हैं ही नहीं, और हैं नहीं तो अपने हक हुकूक क्या, और हैं नहीं तो पासपोर्ट क्यों, ऐसे ही बॉर्डर आर और पार"।

इस तरह देश विभाजन के सात दशक बाद भी मानवीय संवेदना को झकझोरने वाले इस उपन्यास की नई आभा को नमन करते हुए अनुवादिका को, सांस्कृतिक पार्थक्य और अनुवाद की अपनी सीमाओं के बावजूद डेजी रॉकवेल के अद्‌भुत श्रम ने हिंदी को विश्व में बुकर पुरस्कार के माध्यम से अलग पहचान दिलाई है। इसके लिए समूचा हिंदुस्तान आप दोनों के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करता है।

भाषा शिल्प :

डेजी रॉकवेल ने 'टॉम्ब ऑफ सैन्ड' के अंतिम पृष्ठों में दिए 'ट्रांसलेटर', 'नोट' में लिखा है कि मूल उपन्यास कृत्रिम रूप से हिन्दी उन्मुखी है, इसमें हिन्दी, उर्दू, पंजाबी,

बांग्ला, संस्कृत और भोजपुरी आदि अन्य देशज भाषाओं के शब्दों का भरपूर समावेश है। यही वजह है कि इसका अनुवाद कृत्रिम रूप से अंग्रेजी उन्मुखी है। मूल और अनूदित उपन्यास में भाषाओं की मिलावट है, साधारणतया यह वर्ण संकर भाषा फिल्मों में प्रयोग में ली जाती है। 'रेत समाधि' की भाषा को मानक हिन्दी मानना तो बहुत बड़ी गलती होगी। पूरे उपन्यास में कहीं पर भी योजक रेखा का प्रयोग नहीं है उदाहरण के तौर पर बात बात, बड़ी बड़ी, ताल तलैया, काली पीली, टपक टपक, धीरे धीरे, दायें दायें, जरा सी आदि शब्द ज्यों के त्यों लिखे गए हैं। कहीं जगह विभक्तियाँ भी मानक भाषा से पृथक लगती है जैसे माँ पे बरसे, जिलाने के उनके स्वर, सड़क पे निकल आए, कुछेक महीनों आदि। अगर हिन्दी भाषा के पाणिनी आचार्य किशोरीदास वाजपेयी जिंदा होते तो 'रेत समाधि' पर कह उठते कि 'भाषा बहता नीर है',? ठीक है, मगर इसका मतलब यह कदापि नहीं है कि उसमें व्याकरण के नियमों का उल्लंघन किया जाए। अगर उल्लंघन करना ही है तो नियम बनाना ही क्यों? मानकीकरण की बात ही क्यों करना बोलचाल की वर्ण संकर भाषा प्रचलन में है, वही लेखन की भाषा बने। गूगल पर प्रकाशित धीरज तिवारी की एक समीक्षा के अनुसार शैली, कथ्य, शिल्प से आजाद लेखन लेखिका गीतांजलि श्री का दावा है और जो उनके लेखन में झलकता छलकता भी है कि "गाथा की कोई मुख्यधारा जरुरी नहीं उसे छूट है कि भागे, बहे, नदी, झील, नए-नए सोते में"। यह किताब वाकई एक गाथा है जो शैली, कथ्य, शिल्प सब कुछ में मुख्यधारा के लेखन की दीवार को ढाहती लांघती नजर आती है। शब्दों और वाक्यों का निर्माण और प्रयोग जो आमतौर पर हिंदी साहित्यिक लेखन से गायब होता जा रहा है, वह इस किताब की पहली पहचान है। रचना में दैनिक बोलचाल के भदेश शब्दों का चयन और निर्माण व्याकरणीय शुचिता के बोझ से मुक्त है, एक प्रकार से यह लोकभाषा का विश्व अवतार है।

लेकिन मेरे मन में यह सवाल उठना स्वाभाविक है कि क्या हम जिसलिए, दंदफंद, टिन्नाई, नहनाह, खफाती, फंफाती, पींपियाती, फटेला, तना गई, उमगना, गपाष्टक, ठिलठिलाहत, बेहंस, लटालह, चुमकारने, गमकीली, भपारा, साड़ी मौसम, साड़ी कांड, लिंगेमरमर, भकोस गया, मैलिआ दे, माइक पे भाषण पेलते, हुहु फेफे फेन उड़ाते, खक्खों का फूटना, दो ठो, रांडू पांडू आदि और कुछ नए शब्दों जैसे कौवी (Crowes), कौवी हृदय (Heart of Poet), कौवा नियत (Chatment) (Crow Law), कौवा कहिली (Crow pathy), कौविताम (गुंजन elegant crow cnatment) कौवाधिकार (Crowthority), कौवावीय करुणा, कौवानी चमक (Crowishly flash), कागाफूसी (Crowspered) आदि तथा बार-बार कोड परिवर्तन वाले वाक्यों का प्रयोग जैसे मूड पे डिपेंड, सर यहाँ रखिये तनिक गोड़ दबा दूँ, माई री देखि बाल कैसे उलझ गइन हैं, हाथ तेज चलेब ही करबे, कुछ पैसा आ जाएगा तो कौनों हर्ज नाहीं, रेनबो चमकोड हियर, एंड, रेनबो चमकोइंग दियर जहाँ सड़क की भाषा को साहित्य के संसद में पहुंचाती है तो क्या हजारों सालों से बनते-बनते साहित्य की वर्तमान पराकाष्ठा के लिए चुनौती नहीं है यह सवाल भी सोचने लायक है कि जब यह किताब विश्वविद्यालयों में पढ़ाई जाएगी तो क्या इस भाषा को मानक मानकर आने वाली पीढ़ी इसे साहित्यिक भाषा का रूप नहीं देगी? या क्या यह भाषा आने वाली पीढ़ी की साहित्यिक भाषा की भविष्य का प्रतिदर्श है।

कहीं-कहीं तो पात्रों की भाषा पूरी तरह इतर हिन्दी हो गई है जैसेः "मैं भइया के पाँउ दबाइ रहौ हो लेकिन बिनने ध्यान नाएँ हो। बिनकी आँखें मुंदी हीं और म्हों में जैसें कछु फँसो भऔ है, निकारि रये हैं। तभई चिम्पू अखबार लैकें दरबज्जे पै। भय्या जी उछले और बाई म्हों से बाके सामने। बु तौ दैया रे, अखबार फँकि कँ भागो। बु कहतु है कि भइयाजी रोज जइ कत्तैं। उनैं कछु है गऔ है।" (रेत समाधि, पृष्ठ-46)

यह सत्य है किसी भी भाषा में जैसे बोला जाता है वैसे लिखा, कभी-कभी ही गया है, और जब लिखा गया तो वह कालजयी ही हुआ चाहे प्रेमचंद की रचना हो या रेणु का 'मैला आँचल'। 'रेत समाधि' में ऐसे ध्वन्यात्मक अनगिनत प्रयोग हैः

1. नहीं नहीं मैं नहीं उठूँगी। अब तो मैं नहीं उठूँगी।

अब्ब तो मैं नइ उठूँगी। अब्ब तो मैं नईई उठूँगी। अब मैं नयी उठूँगी। अब तो मैं नयी ही उठूँगी। (रेत समाधि, पृष्ठ-13)

2. चिल्ला जाड़ा दिन चालीस, पूस माघ पचीस। च्च चिल्ला ज्ज़ाजाड़ा दिन चयालीस, पूस के पन्द्रह म्माघ पच्चीस। (रेत समाधि, पृष्ठ15)

3. उसे तरह तरह से बजाने में लगे, यों माँ अपनी साँस के संग करने लगी है। लम्बी लम्बी श्वास निःश्वास। गहराती और ध्वनियाँ उनमें "अआ आअहा अहा अआआहो। जम्हाई में मुँह फाड़ते हुए। ऊऊ ऊऊ ईईईईइमा उईउम्मा। कमर झुलाते हुए।

हिस्स्स अंग, एहस्स्स्छ। छड़ी उठा के दीवार पर धूप और हवा छलकते हुए। व्हीईईईईईईईईईईइ। कान में उँगली डाले कस कस खुजाते हुए। अपने बदन के अन्दर बाहर को कुरेद रही है और उसे बोलों में व्यक्त कर रही है। (रेत समाधि, पृष्ठ 135)

4. हर जुम्बिश पर आह कराह ऊह, को। ओओह, आहहहहो खर्राटे। इन नए स्वरों के बीच में माँ जाने पहचाने शब्द भी कभी डाल देती हैं। अआहअच्छा हिस्स, को नहीं फुर्रऐ मुँहेव्ही ऊऊओह्कनटोप ईईपलस्टरऊई। (रेत समाधि, पृष्ठ 135)

भारत की भाषाई विकलांगता को जोरदार धक्का देते हुए लेखिका लिखती है "जिस भी रांडू पांडू से पूछो, जिस भी हिन्दुस्तानी ज़ुबान में, जवाब वो अंग्रेजी में देता है, वो भी गलत अंग्रेजी में, साइनबोर्ड पर हिंदी की भी वर्तनी गलत है, अंग्रेजी की तो माशाअल्लाह"। अंग्रेजी की बीमारी से ग्रसित समाज और सत्ता में अपनी-अपनी भाषा और बोलियों को लेकर जो हीन ग्रंथि है उस पर लेखिका की यह पंक्ति उन्हें औपनिवेशिक गुलामी से मुक्त करने की कोशिश है, न कि अंग्रेजी की आलोचना करना या फिर इसकी जरुरत को नकारना। जिस भाषा में पले बढ़े, जिसमें सपने देखे, जिसमें प्रेम किया, जिसमें रोया, जिसमें हंसा तो उस भाषा को बोलने में यह संकोच, मानसिक गुलामी नहीं तो और क्या है! मुक्त मस्तिष्क के लिए मूल भाषा का कोई विकल्प नहीं होता। मुक्त मस्तिष्क में विशेषणों की भरमार उठती है जैसेः "रक्तलाल, अम्बरीन, हल्दिया, सुरमई, धानी, फिरोजी, बैंगनी, काली, सुगापंखी, सफ़ेद, सभी, सभी। उनके पंखों में छींटे। धारी। छड़ी की मूठ एक चोंच। उसमें मुस्कान, उड़ान, बतियान। (रेत समाधि, पृष्ठ 48)

इसी तरह पर्यावरण के प्रति जागरूकता के लिए उन्होंने व्यंग्यात्मक शैली का प्रयोग किया है,

"ऐ, कांव कांव, अपने घरों को मैला करो, हमारे में क्यों घुसे हो, गन्दगी बजबजाने हमारा घर तो ब्रह्मांड है और प्रकृति, जिसके नाश पे ये बेपंख कौम अपने घर खड़ी कर रही है। खुदकुशी का शौक़ चर्राया है तो करें पर हमें क्यों उसमें घसीटते हैं? हम कहाँ जाएँगे जब हमारा आसमान और हमारे दरख़्त धराशायी कर डालेंगे ये। हमें मल मूत्र पे ऐतराज नहीं था जब तक वो आर्गेनिक थे। हमारे दरख़्तों को आता था दूध पानी अलग करना और खिलना।" (रेत समाधि, पृष्ठ183)

"पेड़" आसमान नदी और पक्षी सबकी इज्ज़त सीमेंट में मिल चुकी है। पानी है बदबू का नाला, आसमान धुएँ का पटल, पक्षी गर कौवा तो चोरने आया या मल मूत छींटने। (रेत समाधि, पृष्ठ 193)

हिंदुस्तान की जनता को भी 'स्वच्छ भारत अभियान' का मखौल उड़ाने के लिए लताड़ा हैः 'बाजी ये हिन्दुस्तान है। जहाँ हगने वाले ज़ंजीर में बँधा तामलोट रेलगाड़ी से उड़ा लेते हैं। ये तो अस्पताल है जहाँ सबको नंगा दूंगा कर देते हैं।' (रेत समाधि, पृष्ठ-221)

जगमगाती जागती, भागती हांफती सभ्यता और उसमें घुटन भर रहे लोगों की कथा भी है यह किताब। स्त्री, वृद्ध स्त्री दुख और वेदना, स्मृति और विस्मृति का प्रतीक ही तो है और यही किताब की केन्द्रीय विषय वस्तु है।

अनुवाद :

हम यह जानते हैं कि एक भाषा से दूसरी भाषा में महत्वपूर्ण ग्रंथों का अनुवाद कभी भी पूरी तरह से सजीव या पूरी तरह से सच और मूल के प्रति वफादार नहीं हो सकता है। वास्तव में शेक्सपियर को समझने और उसकी सराहना करने के लिए आपको शेक्सपियर को उसकी मूल भाषा एलिजाबेथियन अंग्रेजी में पढ़ना होगा। राजीव मल्होत्रा और

सत्य नारायण दास बाबा ने अपनी पुस्तक "Sanskrit Non–translatable: The Importance for Skritizing English" स्पष्ट रूप से दर्शाया है कि संस्कृत जैसी अत्यधिक परिष्कृत, समृद्ध और शक्तिशाली भाषा से अंग्रेजी भाषा में अनुवाद करते समय 'लॉस्ट इन ट्रांसलेशन' का प्रभाव ज्यादा होता है। जिस प्रकार तत्व मीमांसा में सगुण/निर्गुण (qualified/qualityless), आत्मा (Soul), माया (Illusion) जीव (Soul), कैवल्य (Salvation), हिंदू धर्म (Monotheism or polytheism), ॐ (Amen), लौकिक तत्वों में शक्ति (Energy), प्रकृति (नेचर), आकाश (Space), अग्नि (Fire), वायु (Air), शब्द (Word), इंद्रिया (Sense Organ) आदि अननुवादय शब्द है, उनका अंग्रेजी अनुवाद खरा नहीं उतरता है, उसी तरह लोक, स्वर्ग, असुर, देवता, सूक्ष्म शरीर, मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार, अहिंसा, प्राण, चक्र, ध्यान, समाधि, कर्मयोग, ज्ञान योग, भक्ति योग, शास्त्र, श्रुति, इतिहास/पुराण, हिन्दू संस्कार, हनुमान, संस्कृति, धर्म, दास, सेवा, गुरु, श्रद्धा, काम, भाव, रस, लीला, आनंद आदि शब्दों का सटीक अंग्रेजी अनुवाद नहीं हो सकता है।

इस उपन्यास को बौद्धिक रूप से समझा जा सकता है, लेकिन उनमें से कुछ अर्जित अनुभव हैं। हिन्दी ध्वनि के रूप में इस उपन्यास की प्रकृति इसे गैर अनुवाद योग्य बनाती है। उदाहरण के तौर पर "What did India teach us?" पुस्तक में जर्मन और संस्कृत भाषा के विद्वान मैक्स मूलर ने हिरण्यगर्भ का अर्थ 'हिरण के गर्भ' (The foetus of deer) तथा 'अज' शब्द का अर्थ अजन्मा की जगह 'बकरा' (Goat) शब्द के रूप में लेते हैं तो संस्कृत श्लोकों का अर्थ अवश्य अनर्थ हो जाता है, इसी तरह 'रेत समाधि' शब्द का लक्षणार्थ रेत के भीतर दफन होने से है, जबकि अक्सरतया समाधि स्वेच्छा से ली जाती है, कोई देता नहीं है, इसी तरह दफन कोई होता नहीं है, किया जाता है या हो जाता है। इस उपन्यास में 'कल्पतरु' को 'द विशिंग ट्री', उलटबाँसी को 'टॉप्सी टर्वी', पानी के बुलबुले की जगह बुलबुल समझ कर 'नाइटेंजिल', तबला की जगह 'अबला', टीचर से बने व्यंग्यात्मक शब्द टीचरी की जगह 'ट्रेचरी', हिन्दुस्तानी नकलची बंदर की जगह 'indian bandar', फिल्मी कैबरे की जगह 'फिल्मी नंबर', कपड़ों से छोटे दिमाग की जगह 'दिमाग से छोटे कपड़े', कमीज के कॉलर की जगह 'ब्लॉउज कॉलर', समाधि हिलने की जगह 'समाधि शिफ्टिंग', टीवी पर महाभारत आ रहा है का 'महाभारत इज कमिंग', तीसमारखाँ की जगह 'पेटरिज पायजामा', नागमणि की जगह 'वाइपर स्टोन' आदि अनुवाद देखने को मिलते हैं।

पाकिस्तान से लाई गई वाली लड़कियों के रेत के बवंडर में दफन होने के अर्थ में उपन्यासकार ने 'रेत समाधि' शीर्षक का प्रयोग किया है, ठीक उसी तरह जैसे 'जल समाधि' का अर्थ जल में डूबकर होने वाली मृत्यु के संदर्भ में लिया जाता है। इस प्रयोग के आधार पर रेतीले तूफान की चपेट में आकर नाक, कान, आंख और पूरे शरीर रेत से ढक जाने के कारण होने वाली मौत को 'रेत समाधि' के आर्थ में हमारे देश की सांस्कृतिक कारणों की वजह से हिंदी भाषा में सही ठहराया जा सकता है, मगर 'Tomb of Sand ' का अभिधार्थ बालू से बने मकबरे यानि बालू के मकबरे की ओर ध्यान जाता है। अगर 'सेंड समाधि' शीर्षक रखा जाता तो अंग्रेजी और हिंदी भाषा का चांडाल प्रयोग होता, इस वजह से अनुवादक डेजी रॉकवेल ने न चाहते हुए भी इसका शीर्षक 'टॉम ऑफ सैंड' रखा और अपने बचाव में प्रारंभिक पृष्ठ पर समाधि के शब्द कोश से तीन अर्थ दे दिए,

1. A state of deep meditation or trance, the final stage of Yagya

2. Self immolation of an acetic by en Tombment

3. Place of en tombment specially of a -intly personage or one who died heroically

मेरा यह पूछना स्वाभाविक है कि उपर्युक्त तीनों अर्थों से यह कहीं प्रतीत नहीं होता है कि अनुदित उपन्यास में Tomb शब्द का प्रयोग सही है, मगर लाशों के दफन वाले रेतीले स्थान की ओर अवश्य इंगित करता है। यहां लाशें साधारण लोगों की हैं रेतीले टीलों में, न कि किसी साधु पुरुष

या महात्मा की। उपन्यासकार गीतांजलि श्री और अनुवादिका डेजी राक्वेल के व्यक्तित्व और कृतित्व अथवा प्रकाशक की पकड़ या बुकर जैसे बड़े पुरस्कार की ओर ध्यान दिए बगैर आलोच्य कृतियों 'रेत समाधि' और 'Tomb of Sand' पर उन्मुक्त भाव से अनुवाद के संदर्भ में अपने विचार प्रकट करना चाहूँगा।

गीतांजलि स्त्री का उपन्यास 'रेत समाधि' तीन भागों में 'पीठ', 'धूप', 'हद सरहद' में विभाजित है तथा उपन्यास का पूरा कलेवर 375 पृष्ठों में समाया हुआ है, जबकि डेजी रॉकफील्ड द्वारा किया गया अनुवाद 'Tomb of Sand' तीन भागों 'मा'ज बैक', 'सनलाइट', 'बैक टू फ्रंट' में विभाजित है कुल 775 पन्नों में, वह भी एपिलोग, ट्रांसलेटर्स नोट और एक्नॉलेजमेंट को छोड़कर।

इसका मतलब यह भी नहीं है कि अनुवादिका ने अनुवाद प्रक्रिया के दौरान अपनी तरफ से कुछ अतिरिक्त जोड़ने का प्रयास किया है। नहीं, उन्होंने इस कृति की आत्मा को अक्षुण्ण न रखने का भरसक प्रयास किया है, मगर 'रेत समाधि' के पैराग्राफों को उन्होंने अवश्य व्यवस्थित कर अलग पेज से शुरू किया है। 'रेत समाधि' के संक्षिप्त शैली के वाक्यों को पाठकों को समझाने की दृष्टि से कुछ शब्द अवश्य जोड़े हैं, उदाहरण के तौर पर मूल कृति के अनवर अली और अनवर को उन्होंने अनवर अली (जूनियर) तथा अनवर (सीनियर) के नाम से संबोधित किया है, ताकि पाठक आसानी से समझ जाए कि अनवर (सीनियर) अवश्य अनवर (जूनियर) के पिता हैं और उन्हें एक ही नाम की वजह से कथासूत्र पकड़ने के लिए अपने दिमाग पर ज्यादा जोर लगाने की जरूरत नहीं पड़े। इसके अतिरिक्त, हिंदी कविताओं के उद्धरणों को रोमन लिपि में लिखकर उन्होंने उनका अंग्रेजी अर्थ भी लिखा है, एक-दो जगह छोड़कर। जैसे 'अरे ओ सांभा, इसमें कितनी गोलियां थी' को अंग्रेजी में ऐसे ही रहने दिया है, जबकि नागार्जुन की कविता 'बहुत दिनों तक कानी कुत्तिया सोई उसके पास/बहुत दिनों बाद कौवे ने खुजलाई पाँखें' की हिन्दी पंक्तियाँ उद्धृत नहीं करते हुए सीधे अंग्रेजी शब्दानुवाद कर दिया गया किया है, जो निम्न है:

Every ones eyes sparkled for the first time in ever so long, The crow scratched his wings for the first time in ever so long…

यह दूसरी बात है की नागार्जुन की मधुरता इन पंक्तियों में नहीं झलकती है क्योंकि हर भाषा की अपनी मिठास और अपना आंतरिक सौंदर्य होता है, जिसे शब्दानुवाद द्वारा संप्रेषित नहीं किया जा सकता, क्योंकि उन शब्दों में स्थानिकता के साथ-साथ विशिष्ट सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक परिवेश की भी उपस्थिति दर्ज होती है।

शुरू-शुरू में यह भी नजर आया कि अनुवादिका को कई जगहों पर विषय-वस्तु को स्पष्ट करने के लिए कभी बहन को बेटी लिखती है, तो कभी मां को बहू। इसे ध्यान पूर्वक पढ़ने वाले पाठक का मन अस्थिर होने लगता है क्योंकि बहू और मां, बहन और बेटी हिंदी भाषा में बिल्कुल अलग है। उनमें रात-दिन का अंतर है। मूल कृति के इन शब्दों का उन्होंने संशोधन क्यों नहीं किया या फिर प्रोफेशनल एडिटर का बुकर प्राइज जैसी पुरस्कृत बड़ी महत्त्वपूर्ण कृति का संशोधन करते समय इस तरफ ध्यान क्यों नहीं गया, यह सोचने का विषय है। उदाहरण के तौर पर,

1. बहन के बारे में कुछ कहना चाहिए। रेत समाधि, पृष्ठ 20)

Something must be said about daughter Tomb of Sand Page–36

2. जैसे जैसे बहन की जवानी (रेत समाधि, पृष्ठ 20)

When Beti was growing up (Tomb of Sand, Page–36)

3. जैसे बहन! बेचारी बेचारी। (रेत समाधि, पृष्ठ 33)

Like Beti, Poor, poor thing (Tomb of Sand, Page–36)

4. मॉम, जिसे इस बेटे ने मां कहना शुरू कर दिया था कि ये क्या सिद्धार्थ का सिड और पुष्पेश का पुश और शत्रुंजय का शैट और मां का मॉम, को कुछ आभास हुआ कि उसका छोटा फिक्रों में घिरा है। मेरी चिंता करता है, उसे पता था। (रेत समाधि, पृष्ठ 33)

Bahu, whom Serious Son had started to call Maa, because what is all his shortening of siddarth to Sid and Pushpesh to Push and Shatrunajya to Shat and Ma to Mom? Bahu, his mom sensed her little one was besieged by worries. (Tomb of Sand Page–81)

नोट : अनुवाद में देखें तो आपको लगेगा है कि शायद बहू उसकी मां का नाम है, नहीं तो माँ को बहू नाम से क्यों पुकारेगा, जबकि बहू को हिंदी संस्कृति में माँ का दर्जा नहीं दिया जा सकता है और न ही उसे माँ के नाम से संबोधित किया जा सकता है। सांस्कृतिक पार्थक्य की जानकारी मूल लेखिका और अनुवादिका को अवश्य रही होगी। भले ही, देखने में ये छोटी गलतियां लग रही हैं, मगर आगे जाकर अगर किसी यूनिवर्सिटी कोर्स में इन पुस्तकों को शामिल कर लिया जाता है तो अंग्रेजी और हिंदी पाठकों के समझने और उनकी विचारधारा में खलल अवश्य पैदा करेगी।

5. मॉम क्या करें, माथे पे मलहम लगा के उसे सुलाने लगीं और रतिलाल के भतीजे फितरू को स्कूल के बाद बुलावा भेजतीं कि उसके पाँव मलते रहो। (रेत समाधि, पृष्ठ 45)

What was Bahu to do? She began to massge his forehead with balm to help him sleep, and she sent for the servant Rati lal's nephew Fitroo so he could massge his feet after school.(Tomb of Sand Page-85)

6. इतनी कस के डांट पिलाई मेमसाहब ने पर अब मॉम का दिल धड़ धड़ करने लगा और पसीना छूटने लगा और निगरानी जो बढ़ी तो एक रात-रात उन्होंने भी देख लिया। (रेत समाधि, पृष्ठ 46)

Bahu gave them all a tongue–lashing but now her heart began to pound, and she broke into a sweat. She increased her surveillance so that one night she also (Tomb of Sand Page-86)

नोट : अगर यहाँ मेमसाहब बहू है तो हिन्दी में मॉम का दिल धड़क रहा है, जबकि अंग्रेजी में बहू का।

7. ये भी नहीं पता चलेगा जब तक गम्भीर बेटे या उसकी मॉम से बार बार पड़ताल न की जाए और उनके कहे के पीछे भी झाँका जाए, कि हकीम नबीना ने इसमें क्या किरदार निभाया (रेत समाधि, पृष्ठ 48)

We'll never know unless we question and counter–question Serious Son and Bahu, reading between the lines and behind them too, what Pir Nabina's precise role was. (Tomb of Sand Page-89)

8. माँ उर्फ मॉम (रेत समाधि, पृष्ठ 48)

Ma–a.k.a–Bahu (Tomb of Sand Page-90)

नोट : उपरोक्त उदाहरण समझाने के लिए काफी है कि सांस्कृतिक पार्थक्य की वजह से अनुवादिका भारतीय रिश्तों में बहू-बेटी, बहन, माँ अच्छी तरह से नहीं समझ पाई और न ही संपादकों ने इस तरफ ध्यान आकर्षित किया होगा, अन्यथा बुकर पुरस्कार तक पहुँचने वाली पुस्तक एडिटिंग के कई दौर तक गुजरती होगी।

9. खखानी धरती फटती है और बुलबुले उठते हैं और फिर कलकलाते हुए झरने निकल आते हैं। (रेत समाधि, पृष्ठ 21)

Dry earth cracks nightingales rise gurgling springs surface, (Tomb of Sand Page-37)

नोट : हिन्दी की पंक्तियों से सूखी धरती के फटने और उसमें से पानी के बुलबुलों के उठने और कलकलाते झरने में बदल जाने की ओर संकेत मिलता है, न कि धरती फटने से बुलबुल (कोयल) के उड़ने या उठने का अर्थ सामने आता है। ऐसा भी नहीं है कि अनुवादिका को बुलबुलें (बबल्स) का आइडिया नहीं है, अन्यथा 'फुस फस फूटते बुलबुलों' (रेत समाधि, पृष्ठ 43) को The hissing popping bubbles' (Tomb of Sand, Page–79) और 'हंसी के बुलबुले' 'रेत समाधि, पृष्ठ-42) को the bubbles of laughter' (Tomb of Sand, Page-78) नहीं लिखती। यह अनुवाद की दृष्टि से अक्षम्य गलती है। कहाँ बुलबुल और कहाँ बुलबुलें! एक पानी और दूसरी चिड़ियाँ!

10. उस कीड़े ने अभी लुइ व्यत्तों कमीज़ के कॉलर पर

पंजा फेरा, इस ने नाक में उँगली घुसेड़ी! (रेत समाधि, पृष्ठ 19)

That bug just stroked the collar of its Louis Vuitton blouse with its tiny Hand, and that one has stuck its finger up its nose! (Tomb of Sand Page-30)

नोट : 'कमीज का कॉलर' और 'ब्लॉउज के कॉलर' में भिन्नता है।

इक बार मुक़ाबला प्यार हुआ
एक सुक्खड़ एक व्यभिचार हुआ
एक ओट हुआ एक डटा हुआ
ये भेड़ बना वो चरवाहा
ये पाँव रहा वो सर निकला
एक नदीदा एक मरभुक्खा
एक हवामार एक पामाल
इक खिला खिला इक मिटा मिटा (रेत समाधि, पृ. 22)

In love's struggle
one withers, as the other blossoms
one is shaded, the other illuminated
one's a sheep, the other a shepherd
one's the feet, the other a towering head
one's a glutton as the other starves
one rides the winds as the other is trampled underfoot, one blossoms, the other fades (Tomb of Sand Page-33)

नोट : अगर इस blossoms का अर्थ खिला खिला है तो ऊपर में उसका अर्थ व्यभिचार नहीं होना चाहिए।

12. जैसे, एक थी माँ। माँओं जैसी। जिसने बेटे से कहा मेरे तुम भगवान और बेटे ने उससे कहा तुम सबका दुःख हरने वाली महासतायी देवी। दोनों खुद को दूसरे पर लपेटने लगे और एक बना अजगर, एक महबूब। (रेत समाधि, पृष्ठ 23)

For example, once there was a mother. Like all mothers. Who had said to her son, You are my God, and the son said to her, You are the Great Sacrificing Goddess laying waste to every one's sorrows. Both began to map their selves onto one an other, and one became a boa constrictor and the other the object of love. (Tomb of Sand Page-40)

नोट : महासतायी देवी का अर्थ उस देवी से जिसे बहुत सताया गया हो, न कि त्याग करने वाली।

13. अब कुछेक महीनों में अवकाशप्राप्ति होगी, तब चिल्लाना सिड की झोली में गिरेगा, पर अभी तो बड़े में जोश मारता है। लेकिन बड़े बहन पर नहीं चिल्लाये थे। (रेत समाधि, पृष्ठ 25)

Now, in just a few months, he too would retire to ample leisure, and the yelling would fall to Sid. But for now, he still raged. (Tomb of Sand Page-46)

14. आप भी। (रेत समाधि, पृष्ठ 25)

Well, you are the limit (Tomb of Sand Page-46)

15. रेत में समाधि हिली है। (रेत समाधि, पृष्ठ 31)

The Tomb of Sand shifted. (Tomb of Sand Page-57)

16. टीवी पर महाभारत आ रहा है। (रेत समाधि, पृष्ठ 32)

The Mahabharat is coming on TV.(Tomb of Sand Page-59)

17. जिधर देखो वही भदेसपन, वही लालची कंज्यूमरिज़्म, वही नकलची संस्कृति, और वही न इधर के न उधर के न किधर के फरफरे छिछले उथले सिलबिले लोग। (रेत समाधि, पृष्ठ 38)

The Same flittering flimsy frivolous inffectual people who only know how to imitate and ape, so they belong neither here nor there nor anywhere.(Tomb of Sand Page-73)

18. गम्भीर वहाँ से उठ लिया। उजाड़ते लोगों की उजड़ी दुनिया फिर से हर तरफ दिखने लगी। बियर कैन और प्लास्टिक थैलियों से पीड़ित रेत, गोरों द्वारा छेंकी हुई

धरती, थुलथुले हिन्दुस्तानी नकलची बन्दर, प्रकृति को रुलाता अपने को संगीत समझता शोर, हँसते चीखते स्टुपिड लोग, हँसो, कह रहे हैं, है कुछ आपके चलाये इस देश में कि हँसें, भुन भुन भुन गम्भीर भुनभुनाता कमरे लौट गया। (रेत समाधि, पृष्ठ-39)

Serious Son got up and left. The world, wrecked by destructive humans, rematerialized all about him. The Sand, de filed with beer cans and plastic bagS] the earth, colonized by white people, the flabby Indian bandar log, the cacophony that fancies itself music and makes nature weep, the laughing screaming stupid people, laugh, they told him; what's there to laugh about–look at all you've done to this nation! Fume fume fume. Serious Son went back to his room, fuming.And fell asleep.(Tomb of Sand Page-75)

19. दोबारा उसने होंठ फैलाये और जबड़ों से ठिलठिलाहट मारी और तीर की सी तेज़ी से बरामदे में लगे शीशे की तरफ मुड़ा कि हँसी मिटने के पहले देख लूँ। वहाँ फटा कटा चेहरा, फैले होंठ, फूटते दांत, मिचती आँखें। हैं! हँस नहीं सकते (रेत समाधि, पृष्ठ-41)

He stretched his lips wide again and forced a chortling from his jaws, and swift as an arrow, turned toward the veranda win dow to take a look before the laughter dispپeared. That torn face, outstretched lips, protruding teeth, squinting eyes There! Who says I can't Laugh? Isn't that a laugh? It is, isn't it? But the situation only grew more grave. Can't laugh, doesn't. (Tomb of Sand Page-78)

20. गाड़ियों के बीच चिथड़ों में फ़िल्मी कैबरे कर रही है, पढ़ी लिखी लड़कियाँ सड़क क्रॉस कर रही हैं और उनके छोटे कपड़ों से छोटे उनके दिमाग हो गए हैं, और जिस भी रांडू पांडू से पूछो, जिस भी हिन्दुस्तानी जबान में, जवाब वो अंग्रेज़ी में देता है, (रेत समाधि, पृष्ठ 42)

she's dressed in rags performing a filmi number between he cars; educated girls crossing the street, their clothing shrunk smaller then their minds, (Tomb of Sand Page-78)

21. ये कथा बगिया है, यहाँ दूसरी ताब और आफ़ताब वर्षा प्रेमी खूनी चरिंद परिन्द पिजन कबूतर उड़न फलाइ लुक देखो आसमान इस्काई। (रेत समाधि, पृष्ठ 45)

This is a story garden, here, a different light and sunlight rain lover murderer beast bird pigeon fly look sky.(Tomb of Sand Page-83)

22. घर द्वार तरोताज़े बनाये, बेटी की शादी की, बेटे भांजे को नौकरी से लगाया, और टर्म पूरा हुआ और ईमानदारी, गरीबी, टीचरी की खूंटी से वापस गऊ माफ़िक बंध गया। (रेत समाधि, पृष्ठ 51)

He redecorated his home, got his daughter married, got jobs for his son and nephew, and then, when his term was up, he returned, 'docile as a cow, to the bonds of honesty poverty treachery.(Tomb of Sand Page-95)

23. कुर्सी है तो पूछ है, पूछ है तो लम्बी पूँछ है, आगे तो दोनों ही नदारद हो जाते हैं। (रेत समाधि, पृष्ठ 54)

where there's clout there's a queue, but if you lose the first, the second is quick to follow.

24. पर खुदाई तो खुदाई है। खुदा भी, खोदना भी। सब कुछ और कुछ भी वो निकालता है। रेत और मिट्टी से, जल और हवा से, पुरानी हड्डियाँ और कहानियाँ, खुदाई में और खुदाई में, अवतरित होती हैं। (रेत समाधि, पृष्ठ-85)

But digging holes is holy. Whether you are excavating or expiating. It gets out anything and everything. Be they from sand or earth, water or air, old bones and old tales take form through both digging and divinity.(Tomb of Sand Page-163)

25. एक तो हाल का खुलासा है। बौद्ध योगी समाधि में बैठा, हजारों वर्ष पूर्व, और खुदी में मिल गया आज, तो उसे चमड़े में मढ़वाकर हाट में बिठाल दिया और अब वो

पश्चिमी देशों के संग्रहालयों में प्रदर्शनियों में अनचाही अनसोची समाधि गर्दिश में नाच रहा है। (रेत समाधि, पृष्ठ 86)

This one is a recent item: a Buddha sat in yogic Samadhi thou Sands of years ago, was then dug up by egotism, encased in a leather preservative, and plonked down in the marketplace, and now he swirls about Western museums and exhibitions in a tate of wandering Samadhi, undesiring, unthinking.(Tomb of Sand Page-164)

26. जहाँ गार्गी ने याज्ञवल्क को हराया और मंडन मिश्र की पत्नी ने शंकराचार्य को वहाँ रोते हो औरत के तिरस्कार, बलात्कार, बहिष्कार की बना के बकवास (रेत समाधि, पृष्ठ 111)

And how can you carry on about the disrespect, rape and casting out of women, when this is the land where Gargi once beat Yagyavalk and Mandan Mishra's wife beat Shankaracary.(Tomb of Sand Page-218)

27. बेटी ने माँ बनकर माँ को बेटी बनाया और उनके माथे पे हाथ फेरा। आ गयी यहाँ अब न जाने दूँगी। (रेत समाधि, पृष्ठ 125)

Beti became the mother, and made Maa the daughter, and stroked her brow, (Tomb of Sand Page-241)

28. नू घर की न घाट की, न अकेले की न केले की न काम की न खेल की न जागे की न नींद की चौक नींद तो हर हालत में चाहिए और वो हम हर लेंगे और खनखन, खनखन, खुसुरपुसुर खुसुर पुसुर। उनकी भाषा मैं नहीं जानती मगर कुछ तो शैतानी पका रही हैं। कभी तो लग जाता कि आपस में भिड़ के झकझक कर रही हूँ। मैं तुमसे सुन्दर, तुम मुझसे निर्धन न न दोनों का उद्देश्य एक मुझे सोने मत दो, कान में बजो। खी-खी खिखी खनन खनन। (रेत समाधि, पृष्ठ 149)

Not alone, at with KK, not working or playing or waking or sleeping, not though she wants sleep all the time, and We'll kidnap her and jingle jangle jingle jangle whisper whisper whisper. i don't know their language but they're definitely cooking up mischief. Sometimes it seems like they're clashing together and squabing I'm prettier than you–no you're the pathetic, one. No, no, the two of them have a single goal–don't let me sleep, ring in years. Jingle jangle cling clang clang cling.(Tomb of Sand Page-241)

29. थाप से पंचताल बजता है। इस ईंट में जलतरंग, उसमें तबला, इस खम्बे से बीणा, उससे मुर्दाराम पाणों से टकराव तो घटले की जंजीर ख तो घंटी घंटा, स्लाइडिंग दरवाजा खींचो तो शहनाई, धूल फूँको तो शंख, गमला हिलाओ तो डमरू। (रेत समाधि, पृष्ठ 162)

Ma tries it too.At the tap of her fingers, instruments are summoned and notes emerge: sa re ga ma.At the thwap of het foot, the panchtaal plays.A jaltarang from this brick, able from that, a veena from this column, a mridangam from that, knock with your legs you get a ghatam, if you rattle the chains of the swing, bells ring, a shehnai from pulling the sliding door, blow on the dust: a conch; shake a flower pot: damroo.(Tomb of Sand Page-334)

30. मनमाना मौसम मैन माना है और मैन मानता ज़्यादा है, जानता कम है। तो घूम फिर के ईश्वर पे ही लौटा जाता है चूंकि सब कुछ रामभरोसे। (रेत समाधि, पृष्ठ 172)

Wilful weather becomes man–ipulated, and man is a know–it–all who actually knows very little, just struts about, but ultimately re turns to God, because everything is God–willing.(Tomb of Sand Page-344)

31. बादल घुमड़े तो नायिका का दिल बादल और मेघदूतम। कलियाँ चिटकी तो पाँव थिरके और चैतन्य महाप्रभु। ओस की बूँद में टैगोर को दिखा ब्रह्मांड। हवा के

ठहराव में अरस्तु का जागा फ़लसफ़ा (रेत समाधि, पृष्ठ 172)

When the clouds lower, the heart of the heroine is filled with longing as in Kalidasa's play Meghadutam.When blossoms bloom the foot dances and evokes Chitanya Mahaprabhu. In a drop of dew Tagore discerned the cosmos. In the lull of windAristotle's philosophy wakes.(Tomb of Sand Page-344)

32. किसी को नहीं दिखा। क्योंकि कौन हर चीज़ देखने से समझ आती है सामने से दृश्य गुजर जाता है और देख कर भी कोई नहीं देखता, न प्रलय को आते, न प्यारे को जाते, न बिंदु को चौकोराते, न चीता को चींटीयाते, न लकवे को नृतियाते, न बहाव को थम जाते। कभी दीखता है तो हमारी कल्पना का गढ़ा। बाहर वही जो अन्दर है। (रेत समाधि, पृष्ठ 215)

No one Saw it. Because who understands everything just by seeing?A sight passes right before us and even when we see it, we don't, don't see a catastrophe approaching, nor a beloved departing, nor a dot turning square, nor a cheetah becoming an ant, nor the stemming of the tide. If we do notice things occasionally, then what we see is what our imagination has formed for us.Outside me as within.(Tomb of Sand Page-435)

33. तभी मिथ्या नहीं कि नरसिंह नर भेड़िया मत्स्यकन्या कीड़ादिमाग, तितलीहृदय, कछुआमन, रंगीलापतन, चीरहरण सीमावतन, सब जोड़ बेजोड़ व्यक्तित्व हैं, चाहे पूरे या अधूरे। और सब अनंत हैं, चाहे बुलबुले। (रेत समाधि, पृष्ठ 227)

Then it is not false or a myth that wolfman, fish girl, bug brain, butterfly heart, tortoise head, colourfall garb grabbing border homeland are all matched mismatched personalities i whether complete or incomplete.And all infinite, if evanescent.(Tomb of Sand Page-460)

34. दूतालय ऐसे देवालय जहाँ तैयारी के बिना कभी खेल पूरा हो लेता है और कभी छक्के मारते रहे फिर भी हार गए। (रेत समाधि, पृष्ठ 263)

The diplomats are such deities, they can sometimes finish the game with no preparation at all, and sometimes they keep hitting sixes and losing anyway.(Tomb of Sand Page-532)

35. देश बँटे तो दुश्मनी निभती है दोस्ती के साथ, और वीज़ा और बॉर्डर मूडपेडिपेंड रहता है कभी घावित, कभी प्लावित, कभी समाधिस्त। वाघा तक साथ आये बड़े बँटी-बँटी नज़र से अम्मा को बहन के साथ देखते हुए, खुद कोई बॉर्डर हों जैसे समाधिस्त।(रेत समाधि, पृष्ठ 264)

When a country divides, enmity jostles amity and visas and borders depend on the mood–be it slighted, delighted, even far–sighted. Or meditative.In a state of Samadhi. Bade came as far as Wagah, dividing his attention between Maa and Beti as though he himself were a type of border slighted, delighted, far–sighted. Entranced. In a trance. Samadhist Tomb of Sand Page-532)

36. वो इधर का नेशनल बर्ड, तो अपने को बड़ा तीसमारखां समझता था। मगर चतुर चटोरे अपने को तीतरमारखां साबित करने में लगे रहते। (रेत समाधि, पृष्ठ350)

Being the national bird of Pakistan, he thinks he's the partridge's pyjamas. But the wily greedy humans are always out to show what prodigious partridge poachers they are.(Tomb of Sand Page-686)

37. दिल कलौंस जाता है। (रेत समाधि, पृष्ठ 19)

The infamy (Tomb of Sand Page-34)

38. नारी चेतना, लिंगभेद, फ़ीमेल ऑर्गेज़्म, ऊलजलूल, हाय हाय। (रेत समाधि, पृष्ठ-33)

Womens consciousness, sexuality, the female orgasm, what gibberish, good God.(Tomb

of Sand Page-62)

39. कहो उस्ताद अमीर खां तो सूझेगी आमिर खां क्यूएसक्यूटी (रेत समाधि, पृष्ठ 43)

If you Say : Ustad Amir Khan, then everyone thinks Aamir Khan (Tomb of Sand Page-80)

नोट : फ़ैज़ शायद ही कोई अंग्रेज पाठक समझ पाएगा क्योंकि यह आमिर खान की हिन्दी फिल्म 'कयामत से कयामत तक' का संक्षिप्तीकरण है। अतः उन्हें यहाँ पर हिन्दी फिल्म 'कयामत से कयामत तक' का जिक्र करना चाहिए था।

40. गांधी औरताना पालथी में बैठकर सीमा लांघते हैं। (रेत समाधि, पृष्ठ-207)

Sitting legs tacked to one side in womanly pose, Gandhi crosses a boundary,(Tomb of Sand Page-429)

41. अलग इतर स्वाभिमानी अभिमानी उनकी चाल साहित्यिक। (रेत समाधि, पृष्ठ-356)

Literature a scent a soupcon, a je ne sais quoi, all its own. And that is its style.(Tomb of Sand Page-698)

42. कौवी (crowess) तो कौवी हृदय (heart of poet) कैसे?

43. ईसीजी, ईएनटी, एमआरआई (रेत समाधि, पृष्ठ-202)
ECU, ENT, MRI (Tomb of Sand Page-409)
(Printing mistake ECU instead of ECG)

44. काला बैंगन भट्ट Black skinned Baigan Bhatt ?

अनुवाद के बारे में एक जगह लेखिका स्वयं लिखती है, "अनुवाद बलाओं में बला जहाँ मुस्कान माने चक्कू और खाओ का खिलाओ और आ गए का जाते क्यों नहीं और जरूर का बुरे फँसे और आदि का अनंत और अम्मा का बचपना और बेटी का सयाना और इससे भी ज़्यादा डरावना, तो कैसे भाषा गढ़े?" (रेत समाधि, पृष्ठ-214)

लघुकथा

यह कैसा स्वागत

कमलेश भारतीय

अस्पताल में एक उच्च पद पर कार्यरत महिला ने बच्ची को जन्म दिया। अस्पताल की सबसे सीनियर महिला डॉक्टर आई और उस अधिकारी को बुरा सा मुंह बना कर कहने लगी हमने सोचा था कि आप पढ़ी लिखीं हैं और आपने अल्ट्रासाउंड करवा रखा होगा।

पर हमें क्या मालूम था कि आपने भगवान् भरोसे सब कुछ छोड़ रखा है।

महिला अधिकारी चौंकी। फिर पूछा यदि मैंने पहले से सब कुछ करवा रखा होता तो फिर क्या फर्क पड़ता।

कम से कम हमारे स्टाफ को इनाम तो मिल जाता। महिला डॉक्टर ने बड़ी बेशमी से कहा।

बस। इसी कारण आपने मेरी नवजात बच्ची का स्वागत् नहीं किया?

हां। हमारे स्टाफ को कुछ ऐसी ही उम्मीद थी आपसे।

कोई बात नहीं। आप स्टाफ को बुलाइए।

सारा स्टाफ आ गया और महिला अधिकारी ने सबको इनाम दिया लेकिन उसके बाद पति को बुलाकर अपना सारा सामान समेट लिया। पति ने पूछा ऐसा क्यों कर रही हो।

महिला अधिकारी ने पति के गले लगकर आंसुओं में डूबे कहा इस अस्पताल में मैं एक पल और नहीं रहूंगी क्योंकि इन लोगों ने मेरी बच्ची का स्वागत् नहीं किया।

सच्चे बोल

आपकी सफलता या असफलता
इस बात पर निर्भर करती है
कि आपका सलाहकार कौन है–
शकुनि या कृष्ण।

अश्मा: एक आख्यान का पुनर्पाठ

गिरीश पंकज

अहल्या एक ऐसा मिथकीय चरित्र है, जो आज भी हमें प्रभावित करता है। भारत में पूजनीय पांच कन्याएँ प्रातः स्मरणीय हैं। उसमें द्रौपदी, सीता, तारा, मंदोदरी के साथ अहल्या भी शामिल है।

अहल्या के अश्म यानी पत्थर बनने की कथा को लेकर अनेक सृजकों ने अपने-अपने तरीके से कविताएं लिखी हैं। कुछ खंडकाव्य भी प्रकाशित हुए हैं। लेकिन डॉक्टर संजीव कुमार का अहल्या पर केंद्रित काव्य आख्यान लीक से हटकर है।

अहल्या और गौतम की कथा हर कोई जानता है, लेकिन उसे काव्यात्मक ढंग से कहने में संजीव कुमार ने काफी मेहनत की है। उन्होंने अपने आख्यान में इंद्र को नहीं, गौतम को छली बताया है— यह एक बड़ी बात है।

दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि भगवान श्रीराम को जिस आदर्शवादी रूप में प्रस्तुत किया गया है। लोग यही जानते है कि भगवान राम ने शिला का अपने पैर से स्पर्श किया था, जबकि कवि संजीव ऐसा नहीं करते। उन्होंने श्री राम के मर्यादा पुरुषोत्तम वाले रूप को एक गरिमा प्रदान की जिसके तहत श्री राम और लक्ष्मण शिला के चरण स्पर्श करते हैं। उसे पैर नहीं लगाते। यह नारी के सम्मान का उदात्त पक्ष है।

सबसे बड़ी बात जो मैंने महसूस की वो यह है कि कवि ने जो सदीर्घ भूमिका लिखी है, उससे इस महत्वपूर्ण पौराणिक आख्यान के बारे में विस्तार से पता चलता है। उन्होंने वाल्मीकि रामायण और तुलसी रामचरितमानस के अनेक स्कूलों को और चौपाइयों के माध्यम से कुछ महत्वपूर्ण प्रामाणिक बातें कहीं हैं, वे बेहद माननीय हैं।

इनको पढ़कर समझ में आता है कि गौतम मुनि ने ही अहल्या का शोषण किया था। जिस कन्या को बाल्यकाल से पालापोसा, उसी अहल्या के साथ उन्होंने विवाह रचाया। तमाम गंभीर बातों को जानने के लिए कवि संजीव कुमार की भूमिका को पढ़ना बहुत जरूरी है। बिना भूमिका पढ़े, काव्य उपन्यास का पढ़ना सार्थक नहीं होगा।

उन्होंने अहल्या, गौतम और इंद्र को लेकर जो प्रचलित आख्यान हैं, उसके विपरीत शोध करके अपनी एक अलग स्थापना दी है, वह बेहद महत्वपूर्ण है। आँखें खोल देने वाली। पुरानी मान्यताओं को खंडित कर के नई स्थापनाएं देना या उससे परिचित कराना भी एक सजग कवि का धर्म है।

मुझे कवि संजीव की अध्ययनशीलता अभिभूत करती है। यह स्पष्ट हो जाता है कि कवि ने चलताऊ किस्म का लेखन नहीं किया है वरन प्रामाणिकता के साथ लिखने का श्रम किया है।

कवि ने अपनी इस कृति को काव्य-उपन्यास कहा है। यह बहुत हद तक सही है क्योंकि इस खंडकाव्य को पढ़ते हुए उपन्यास जैसा ही आस्वादन पाठकों को मिलेगा। कविताएं छंदबद्ध ही हैं। उसमें जो लय है, प्रवाह है, उससे पाठक का पाठ गतिशील बना रहता है। लगता है, हम कोई नई कृति नहीं, वरन पारंपरिक छंद विधान में सृजित किसी कृति का ही अवगाहन कर रहे हैं। यह बड़ी बात है।

यह कृति एक तरह से अहल्या के प्रसंग पर पुनरविमर्श करने का एक सार्थक उपक्रम भी है।

कृति की अलंकारिक भाषा और संस्कृतनिष्ठ यानी तत्सम शब्दावलियों का प्रचुर उपयोग कृति को पौराणिक संस्पर्श देता है। पौराणिक आख्यानों की भाषा खड़ी बोली में उतना सुखकर प्रतीत नहीं होती। तत्सम प्रयोग से रचना की प्रभविष्णुता और सघन हो जाती है।

पन्द्रह सर्गों में विभाजित पूरा आख्यान पाठकों को अपने शिल्प के कारण बांधे रखता है। पाठक को ऐसा ही महसूस होता है कि वह पद्यात्मक फार्म में एक उपन्यास ही पढ़ रहा है।

प्रथम सर्ग की शुरुआत ही अतिरंजकता के साथ होती

है, और सधी हुई भाषा में अहिल्या से कवि संवाद करता है कि

'कौन तुम शापित सी हो/
इस अरण्य में अश्म बनी?
तुम विस्मित सौंदर्य रूप/
सौंदर्यमूर्ति ज्यों हीर कनी।
दुर्लभ है यह रूप /
देवि, तुम/
विधि की रचना हो
कोई नैनों में कुछ आंसू से हैं/
किस कारण तुम हो रोई।

प्रथम सर्ग में अहल्या का जो रूप वर्णन किया गया है, वह अद्‌भुत है। इसके पहले इस तरह का सुंदर मनोहारी वर्णन साहित्य में कम ही मिलता है। यहां उदाहरण के रूप में उन पंक्तियों को दोहराना ठीक नहीं।

पाठक मेरी बातों की सत्यता इस पूरी कृति को पढ़कर महसूस कर सकता है। भूमिका के रूप में मैं तो सिर्फ इस कृति की शिल्पगत विशेषताओं पर ही अपनी राय संक्षेप में प्रकट कर रहा हूँ। उन समस्त सुंदर, पठनीय पंक्तियों को पुर्नप्रस्तुत करने के मोह को नियंत्रित करना ज़रूरी है। बानगी के तौर पर कुछ का उल्लेख तो हो सकता है। जैसा मैंने किया भी है।

सर्ग दो में अहिल्या अपने शाप के बारे में बताती है कि वह कैसे गौतम द्वारा ही छली गई, जिस कारण शापित होकर उसे पाषाण बनना पड़ा। यहां अहल्या समस्त नारी जाति की तरफ से सवाल भी खड़ा करती है, जो बेहद महत्वपूर्ण है, जो इस काव्यकृति का उद्देश्य भी है। अहल्या पूछती है,

क्या कभी भी होता
नहीं पुरुष अपराधी।
क्यों नारी सदा
जाये गलती से बांधी
क्यों वही परीक्षा देती है
हर युग में।
क्यों अबला है वह
पुरुष सदा से प्रभुमय।

पूरे सर्ग में एक नारी के रूप में अहल्या सवाल उठाती है और पूछती है, क्या कभी किसी नर को अभिशप्त होते हुए सुना। वर्तमान समय में जिस तरह की बलात्कार की घटनाएं तेजी के साथ बढ़ी हैं, उसको अहल्या से जोड़ते हुए कवि उसी के मुँह से कहलवाता है,

क्या बलात्कृता नारी से/
पूछा जाता/
क्या बलात्कार/
किंचित भी उसको भाता
क्या नहीं अस्मिता कोई भी/
नारी की/
क्या नहीं पक्षधर कोई/
सुकुमारी की

अहल्या के उठाए गए सवाल दरअसल आज की नारी के सवाल है। आज भी पुरुष समाज थोड़ी-सी शंका होने पर उसे अपमानित कर के एक तरह से अश्म करने की कोशिश करता है। इस दृष्टि से यह कृति बेहद सामयिक भी बन पड़ी है। लगभग हर सर्ग में लेखक ने अहल्या के बहाने समकालीन परिदृश्य की ही एक तरह से पड़ताल ही की है।

कोई भी कृति तभी महत्वपूर्ण कही जा सकती है, जब वह केवल अतीत का भ्रमण न करे, वरन वर्तमान की प्रासंगिकता से भी जुड़े। इस निष्कर्ष पर 'अश्मा' मुझे समीचीन प्रतीत हो रही है।

तेरहवें सर्ग में वही कथा है, जिसमें इंद्र गौतम का वेश धरकर आता है और अहल्या के साथ रतिक्रिया करता है। गौतम मुनि क्रोधित होते हैं, तब अहल्या स्पष्ट करती है कि मैंने जो कुछ भी किया आपको ही समझ कर किया। कवि लिखता है, "अहल्या बोली मैंने उस पल/ यूँ सूक्ष्म निरीक्षण नहीं किया/ पर सत्य मानिए आपके सिवा/ ध्यान किसी का नहीं किया।" लेकिन अंततः मुनि शाप देते हैं और अहल्या पत्थर में तब्दील हो जाती है।

चौदहवें सर्ग में अहल्या भगवान राम को पुकारती हुए कहती है, आओ हे राम/कृपा अपनी बरसाओ/अहिल्या जपती हे राम/अब तो आ जाओ/पंद्रहवाँ समापन सर्ग बेहद मर्मस्पर्शी है। राम के आगमन का प्रेरक प्रसंग है, जब मर्यादा

पुरुषोत्तम रघुवर पत्थर बनी अहल्या को प्रणाम करते हैं, (पैरों से नहीं छूते) तो वह शिला नारी रूप में परिणत हो जाती है और रो पड़ी है,

"रो पड़ी अहल्या
आँखों में आँसू भर कर।
चेतना जाग्रत हुई
प्रफुल्लित थे रघुवर।
देवों गन्धर्वों ने स्वागत
की ध्वनि कर दी।
तब देवी अहिल्या
शाप से मुक्त हुई।"

शापमुक्त होकर अहल्या प्रभु राम से और कुछ नहीं मांगती। बस, उनसे उनकी ही भक्ति में लीन रहने का वर मांगती है। देखें,

मैं धन्य हुई मैं धन्य हुई
है रघुवर।
मैं भक्तिभाव में लीन रहूँ
ऐसा दो वर।

इस तरह यह आख्यान उर्फ पद्य उपन्यास खत्म होता है और पाठक के सामने चलित दृश्य बंध यकायक स्थगित हो जाता है और उसे पता ही नहीं चलता। तात्पर्य है कि पूरी कृति पाठक को एक चलचित्र की भाँति दृष्टव्य होती है। यही कृति की सफलता है कि पाठक उसका मंत्रमुग्ध हो कर रसास्वादन करे। इस पूरे का काव्य आख्यान को पढ़ते हुए मैंने महसूस किया कि अगर इसका नाट्य मंचन किया जाए तो यह कृति और ज्यादा प्रभावित होकर लोगों तक पहुँचेगी। यह कृति एक तरह से नृत्य-नाटिका में भी सहजता के साथ रूपांतरित हो सकती है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह काव्यकृति एक महत्वपूर्ण साहित्यिक रचना के रूप में चर्चित होगी। 'अश्मा' शब्द हिंदी में कम प्रचलित है। डॉ. संजीव कुमार जी की इस कृति के बहाने यह शब्द भी पाठकों के बीच लोकप्रिय हो जाएगा।

लघुकथा

असली जरूरतमंद

वत्सला भारद्वाज

मंदिर से बाहर निकलते ही एक वृद्ध महिला सामने आकर खड़ी हो गई। एक दो नहीं पूरे सौ रुपये की मांग की। मैं हतप्रभ। पूछा तो कहने लगी, मेरी पोती अस्पताल में पड़ी है। उसके सुई लगानी है, उसमें पैसे कम पड़ रहे हैं। मंदिर के पुजारी ने भी पचास रुपये दिए हैं। बिन मां बाप की बच्ची है। मदद कर दो।

मैं सोच में पड़ गई। आजकल दवा और बीमारी के नाम पर बहुत से लोग ठगी करते देखे गए हैं। समझ नहीं आ रहा था कि मदद करनी चाहिए या नहीं।

कुछ सोचकर मैंने कहा, अस्पताल की पची दे दो, मैं ला देती हूं।

वह कहने लगी, वो तो नहीं है।

मैंने कहा, बिना पची के दवा कैसे लाओगी?

उसने कहा, अस्पताल में मुफ्त इलाज होता है। लेकिन आज अस्पताल की छुट्टी है। इसलिए सुई बाहर से लेनी है।

मैंने दिमाग पर जोर डाला। आज किस बात की छुट्टी है? लेकिन कोई ऐसा अवसर नहीं था जो अवका"ा हो। फिर भी अवका"ा पर नर्सिंग स्टाफ तो रहता ही है। मेरा "ाक पक्का हो गया। कुछ गड़बड़ सा मामला लगा। हांलांकि मेरे पास उसको देने के लिए पर्याप्त रा"ा थी, पर मैंने दस रुपये दिए और घर आ गई।

जेहन में कई देर तक उथल पुथल मची रही। क्या मैंने गलत किया या सही? यदि कभी वास्तव में कोई जरूरतमंद टकराया तो कैसे पहचानूंगी? मदद भी करना एक बवाल लगने लगा। बहुत से लोग मदद से वंचित रह जाते हैं और ढोंगी फायदा ले जाते हैं। क्या समय आ गया है? दान, पुण्य के लिए भी जरूरतमंद खोजने पड़ते हैं। आज याद आ रही थी, डाकू खड्गसिंह और बाबा भारती की कहानी। आज बाबा भारती की सीख चरितार्थ होती दिख रही थी। डाकू खड्गसिंह का छल फैल चुका है।

फिल्म 'सर' के लेखक जगदंबा प्रसाद दीक्षित

देवमणि पाण्डेय

हिंदी के प्रतिष्ठित कथाकार जगदंबा प्रसाद दीक्षित उर्फ़ जे.पी. दीक्षित का फ़िल्म सर (1993) के लेखक के रूप में जय दीक्षित नामकरण उनके प्रिय शिष्य महेश भट्ट ने किया। दीक्षित जी सेंट ज़ेवियर्स कॉलेज मुंबई में हिंदी विभागाध्यक्ष थे। महेश भट्ट उनके छात्र रह चुके हैं। फ़िल्म 'सर' में निरर्थक और निर्दोष लोगों की हत्याओं के विरुद्ध एक सशक्त प्रतिवाद है। कथावस्तु, पात्रों और घटनाओं में ताज़गी है। यह सम्वेदनशील और हृदयस्पर्शी फ़िल्म काफ़ी पसंद की गई। कुल मिलाकर यह एक ऐसी खूबसूरत और मनोरंजक फ़िल्म है जिसका संपूर्ण प्रभाव बहुत आक्रामक और मर्मस्पर्शी है।

दीक्षित के फ़िल्मी कैरियर का पहला अध्याय

अध्यापन के क्षेत्र में आने से पहले जे.पी. दीक्षित नागपुर के एक पत्र में संपादक थे। उस समय उन्होंने विमल राय और केदार शर्मा के लंबे-लंबे इंटरव्यू किए थे। उसी समय सन् 1959 में वे फ़िल्मकार देवेंद्र गोयल के संपर्क में आए। गोयल जी ने सन् 1964 में अपनी फ़िल्म दूर की आवाज़ में एक लंबी भूमिका देकर पत्रकार जे.पी.दीक्षित को अभिनेता दीक्षित बना दिया। कुछ समय बाद फ़िल्मों के इस पहले अध्याय पर जे.पी.दीक्षित ने विराम लगा दिया। वे सीपीएमएल के क्रांतिकारी आंदोलन में शामिल हो गए। गिरफ़्तारी से बचने के लिए जे.पी.दीक्षित को कुछ समय महाराष्ट्र की सीमा पर आदिवासियों के बीच रहना पड़ा। सन् 1970 में दीक्षित जी को गिरफ़्तार कर लिया गया। उन पर षड्यंत्र, हत्या, राजद्रोह आदि कई अभियोग लगाए गए। आरोप साबित न होने पर डेढ़ साल बाद उन्हें जेल से रिहा कर दिया गया। आपातकाल के समय जे.पी.दीक्षित कनाडा में फंस गए। वहां से किसी तरह नेपाल पहुंचे। नेपाल से उन्होंने पर्चे निकाले। सन् 1972 से 1982 तक उन्होंने पीपुल्स पावर नामक अंग्रेजी पत्र का संपादन किया।

दीक्षित के फ़िल्मी कैरियर का दूसरा अध्याय

आपातकाल के बाद जे.पी.दीक्षित के फ़िल्मी कैरियर का दूसरा अध्याय फ़िल्मकार विनोद पांडेय के साथ शुरू हुआ। विनोद पांडेय भी सेंट ज़ेवियर्स कॉलेज में दीक्षित जी के छात्र रह चुके हैं। सन् 1980 में फ़िल्म एक बार फिर बनाने वाले विनोद पांडेय ने फ़िल्म ये नज़दीकियां (1982) में जे.पी.दीक्षित से एक गीत लिखवाया

मैंने इक गीत लिखा है जो तुमको सुनाती हूँ
सोए हुए रंगीं ख़्वाबों को सांसों से सजाती हूँ

रघुनाथ सेठ द्वारा संगीतबद्ध दीक्षित जी का यह प्रेम गीत मुझे पसंद है। इस गीत को शबाना आज़मी और मार्क जुबैर पर फ़िल्माया गया है। इस फ़िल्म में जे.पी. दीक्षित ने एक लघु भूमिका भी अभिनीत की। इसके बाद उन्होंने विनोद पांडेय के साथ सन् 1988 में एक नया रिश्ता फ़िल्म लिखी। विनोद पांडेय के सीरियल 'एयर होस्टेस' के कुछ एपिसोड भी जे.पी.दीक्षित ने लिखे। वीरेंद्र संथालिया की फ़िल्म कशमकश की पटकथा और संवाद दीक्षित जी ने लिखे।

दीक्षित के फ़िल्मी कैरियर का तीसरा अध्याय

जे.पी. दीक्षित के फ़िल्मी कैरियर का तीसरा अध्याय महेश भट्ट के साथ शुरू हुआ। फ़िल्म सारांश (1984) बनाने से पहले महेश भट्ट ने जे.पी.दीक्षित को यह कहानी सुनाई। कहानी दीक्षित जी को पसंद आई मगर काम करने की बात नहीं हुई। जुहू के सेंटॉर होटल में फ़िल्म आशिक़ी (1990) की शूटिंग थी। महेश भट्ट से वहीं जे.पी.दीक्षित की मुलाक़ात हुई। इस बार महेश भट्ट ने जे.पी.दीक्षित के सामने साथ काम करने का प्रस्ताव रखा। महेश भट्ट ने 'अधूरे लोग' नामक एक विषय पर चर्चा की। दीक्षित जी को उसका मुख्य पात्र पसंद नहीं आया तो उन्होंने दिलचस्पी

नहीं दिखाई। इसी दौरान जे.पी.दीक्षित ने अरुण कौल के साथ फ़िल्म दीक्षा (1991) लिखी। फ़िल्म 'दीक्षा' में जे.पी.दीक्षित ने सर मुडाकर अभिनय भी किया।

सन् 1993 में महेश भट्ट ने एक और आइडिया बताया 'फिर तेरी कहानी याद आई'। जे.पी.दीक्षित को कहानी पसंद आई तो उन्होंने यह फ़िल्म लिख डाली। इसी दौरान दीक्षित जी ने महेश भट्ट को एक कॉलेज प्रोफ़ेसर और अंडरवर्ल्ड डॉन के आपसी संबंधों पर आधारित फ़िल्म 'सर' की कहानी सुनाई। अनपढ़ डॉन की पत्नी मर चुकी है। लड़की बिगड़ी हुई है। बाप को दुश्मन समझती है। अपनी लड़की को सुधारने के लिए डॉन एक प्रोफ़ेसर को बुलाता है। वहां जाने पर प्रोफ़ेसर को पता चलता है कि ख़राबी लड़की में नहीं उसके बाप में है। लड़की और प्रोफ़ेसर निकट आ जाते हैं। बाप और प्रोफ़ेसर में टकराव होता है। महेश भट्ट को यह कहानी जँच गई। उन्होंने फ़िल्मकथा के रूप में इस प्लाट को विकसित करने के लिए कुछ महत्वपूर्ण सुझाव दिए। दीक्षित जी ने मेहनत से पटकथा तैयार की। इस पर तुरंत काम शुरू हुआ और फ़िल्म 'सर' (1993) तैयार हो गई। इसी समय ज़ी टीवी का प्रस्ताव लेकर जानी बख़्शी आ गए तो 'फिर तेरी कहानी याद आई' फ़िल्म भी बन गई। जे.पी. दीक्षित ने महेश भट्ट के सहायक विक्रम भट्ट की फ़िल्म जानम (1992) भी लिखी।

बंगलौर में फ़िल्म 'सर' की शूटिंग के दौरान महेश भट्ट ने एक और आइडिया सुनाया। जे.पी.दीक्षित ने इस पर फ़िल्म नाराज़ (1994) लिखी। महेश भट्ट का एक और विषय उन्हें पसंद आया तो उन्होंने फ़िल्म नाजायज़ (1995) लिखी। जे.पी.दीक्षित का कहना था कि 'अर्थ' (1982) और 'सारांश' (1984) ने एक निर्देशक के रूप में महेश भट्ट को प्रतिष्ठा ज़रूर दिलाई लेकिन आर्थिक फ़ायदा नहीं हुआ। महेश भट्ट ने बहुत जल्दी यह समझ लिया कि सार्थक और कमर्शियल सिनेमा के कांबिनेशन के बिना मार्केट में टिकना मुश्किल है। इसलिए वे लगातार व्यावसायिक फ़िल्में बनाते रहे। फ़िल्म 'सर' (1993) एक ऐसी फ़िल्म है जो 'सारांश' (1984) और सड़क' (1991) का कांबिनेशन है। उसमें गुणवत्ता 'सारांश' जैसी है लेकिन 'सड़क' की तरह आम आदमी को थिएटर तक खींच लाने की शक्ति है। 'नाराज़ (1994) और 'नाजायज़ (1995), भी इसी शैली की फ़िल्में हैं।

महेश भट्ट की आत्मकथात्मक फ़िल्में

जीवन के आख़िरी दिनों में अभिनेत्री परवीन बॉबी की विक्षिप्तावस्था के चर्चे अख़बारों में प्रकाशित हुए। फ़िल्म 'तेरी कहानी याद आई' की नायिका (पूजा भट्ट) को भी फ़िल्म में पागलपन के दौरे पड़ते हैं। बांद्रा के रंग शारदा परिसर में 'फ़िल्म तेरी कहानी याद आई' की शूटिंग चल रही थी। जे.पी. दीक्षित ने मुझे गपशप के लिए बुलाया। वहां महेश भट्ट से मुलाक़ात हुई। मैंने पूछा क्या यह फ़िल्म आपकी आत्मकथा पर आधारित है? महेश भट्ट ने जवाब दिया "इस फ़िल्म में मेरे जीवन के और परवीन बॉबी के जीवन के कुछ अंश शामिल हैं मगर यह मेरी आत्मकथा नहीं है। बाक़ी दीक्षित जी आपको बताएंगे।

जे.पी.दीक्षित ने कहा 'सिर्फ़ आत्मकथा पर कोई फ़िल्म नहीं बनाई जा सकती क्योंकि उसमें कई चरित्रों और उनके इर्द-गिर्द घटनाओं का ताना बाना बहुत ज़रूरी हो जाता है। इससे उसका पूरा स्वरूप ही बदल जाता है। हां, आवश्यकता अनुसार फ़िल्म में निजी जीवन के कुछ प्रसंग डाले जा सकते हैं। फ़िल्म 'सर' में मेरे भी जीवन से जुड़े कुछ ख़ास प्रसंग हैं लेकिन यह मेरी आत्मकथा नहीं है। इसी तरह फिर तेरी कहानी याद आई' में महेश भट्ट के जीवन से जुड़े कुछ प्रसंग हैं लेकिन यह उनकी आत्मकथा नहीं है। महेश भट्ट के पिता नाना भट्ट की दो पत्नियां थी। महेश भट्ट और मुकेश भट्ट उनकी दूसरी पत्नी के पुत्र हैं। एक अंग्रेजी पत्रिका से बातचीत में महेश भट्ट ने खुद को नाजायज़ औलाद कह दिया था। इसी के चलते उनकी 'जनम' से लेकर 'नाजायज़' तक को आत्मकथात्मक फ़िल्म के रूप में प्रचारित किया गया।

मीना कुमारी ने दीक्षित को अभिनेता बनाया

जे.पी.दीक्षित के अनुसार अगर फ़िल्म में अभिनेता के रूप में पहचान मिल जाये तो लेखक निर्देशक कुछ भी बनना आसान होता है। लम्बे क़द के जे.पी.दीक्षित को

अभिनय का प्रस्ताव अचानक मिला। फ़िल्मकार देवेंद्र गोयल से अभिनेत्री मीना कुमारी ने जे.पी. दीक्षित के लिए सिफ़ारिश की थी। एक दिन वे देवेंद्र गोयल के साथ मीना कुमारी की फ़िल्म 'चिराग कहां रोशनी कहां' (1959) के सेट पर गए थे। तब मीना कुमारी ने देवेंद्र गोयल से कहा इनसे अभिनय करवाइए। जे.पी.दीक्षित के अनुसार मीना कुमारी ने ही धर्मेंद्र, मनोज कुमार, गुलज़ार आदि कई लोगों को प्रमोट किया था। इस मामले में वे महान कलाकार थीं। उस समय देवेंद्र गोयल 'विधाता' फ़िल्म बना रहे थे। बाद में इसका नाम प्यार का सागर (1961) हो गया। इस फ़िल्म के ज़रिए वे जे.पी. दीक्षित को अभिनेता की पहचान दिलाना चाहते थे। इसके विज्ञापनों में जे.पी. दीक्षित का नाम प्रमुखता से प्रकाशित हुआ। लेकिन अभिनेता राजेंद्र कुमार ने इसकी कहानी बदलवा दी तो यह फ़िल्म देवेंद्र गोयल की पहली फ़िल्म 'आंखें' की रीमेक हो गई। इस बदलाव से बतौर अभिनेता जे.पी.दीक्षित का रोल ख़त्म हो गया। इसके बाद देवेंद्र गोयल ने फ़िल्म 'दूर की आवाज़' (1964) में जॉय मुखर्जी और सायरा बानो के साथ जे.पी.दीक्षित को एक लंबी भूमिका दी। फ़िल्म अच्छी थी मगर इसे व्यावसायिक सफलता नहीं मिली। निर्माता निर्देशक देवेंद्र गोयल ने जब दस लाख (1966) और एक फूल दो माली (1969) आदि फ़िल्में बनाईं तो उस समय जे.पी. दीक्षित सीपीएमएल के क्रांतिकारी आंदोलन में सक्रिय हो गए थे। देवेंद्र गोयल से उनका संपर्क टूट गया था।

साहित्य से अलग सिनेमा एक दृश्य माध्यम

जे.पी.दीक्षित के अनुसार साहित्य से अलग सिनेमा एक दृश्य माध्यम है। लिखित शब्दों की अपनी सीमाएं हैं लेकिन वे अधिक समय तक ज़िंदा रहते हैं। साहित्य एक समय में सिर्फ़ एक ही या कुछ लोगों को ही संबोधित होता है। फ़िल्म एक साथ बहुत बड़े जनसमुदाय को संबोधित होती है। साधारण आदमी अमूर्त और गूढ़ चीज़ें नहीं समझता। उसके सामने मूर्त, ठोस और नग्न सत्य आना चाहिए। फ़िल्म बहुत महंगा माध्यम है। इसलिए ऐसे दबावों के साथ लेखक को समझौता करना अनिवार्य हो जाता है। वह हमेशा उच्च स्तरीय और सुरुचिपूर्ण फ़िल्में ही देगा इस कसौटी पर खरे उतरने की उम्मीद एक फ़िल्म लेखक से नहीं की जानी चाहिए। साहित्य के बल पर ज़िंदगी नहीं चल सकती। अब साहित्य लेखन पार्ट टाइम करना पड़ता है। लेखक की इस स्थिति के लिए प्रकाशक और सरकारी व्यवस्था ज़िम्मेदार हैं।

बिना सेक्स के प्रेम हो ही नहीं सकता

एक बार मैंने जे.पी. दीक्षित से प्रेम के संबंध में उनकी राय पूछी। वे संस्कृत साहित्य की उस प्रेम परंपरा के हिमायती थे जिसमें प्रेम का मतलब काम यानी शारीरिक सुख होता है। जे.पी. दीक्षित की मान्यता है कि बिना सेक्स के प्रेम हो ही नहीं सकता। उन्होंने ज़ोर देते हुए कहा था। अगर एक स्त्री में और एक पुरुष में प्रेम है और दोनों में शारीरिक संबंध नहीं होता है तो उन्हें ख़ुद को डॉक्टर को दिखाना चाहिए। लीजिए प्रेम पर दीक्षित जी के निजी विचार प्रस्तुत हैं।

छायावादी प्रेम नितांत काल्पनिक और अमूर्त है। छायावादी कवियों में स्त्री पुरुष के प्रेम को लेकर अपराध बोध था। उन्होंने रहस्यवाद का पुट देकर इसे आत्मा परमात्मा का प्रेम बना दिया। वास्तव में प्रेम ऐसा नहीं होता है। स्त्री पुरुष के प्रेम में शारीरिकता को हटाया नहीं जा सकता। जो आध्यात्मिक प्रेम की बात करते हैं वे पाखंड करते हैं। प्रकृति में सिर्फ़ वासना है प्रेम है ही नहीं। वासना वहां प्रजनन का उद्देश्य है। सामाजिक विकास के साथ संस्कृति ने स्त्री पुरुष के ऐसे स्वाभाविक संबंधों को प्रेम का नाम दे दिया। शरीर के स्तर पर प्रेम स्वैराचार नहीं है। वह ज्यादा सुंदर और सात्विक है। प्रेम करने वाले व्यक्तियों के बीच आग्रह, समझदारी और आत्मीयता ज़रूरी है।

हमारे प्राचीन साहित्य में प्रेम शारीरिक और मांसल था। इस्लामिक संस्कृति के आगमन के साथ चिलमन देखकर आहें भरने वाला अमूर्त प्रेम आया। 'लैला मजनू' और 'शीरीं फ़रहाद' का प्रेम भारतीय अवधारणा नहीं है। दुष्यंत और शकुंतला का प्रेम भारतीय प्रेम है। शारीरिक और मांसल प्रेम में साथी की आवश्यकता ही विरह काव्य को जन्म देती है।

आगे चलकर साहित्य में शारीरिकता को बुरा मानते हुए प्रेम को आध्यात्मिक बना दिया गया। 'उसने कहा था' जैसी कहानियों में प्रेम, त्याग और बलिदान का प्रतीक बन गया। प्रेमचंद की एक कहानी फ़ातिहा में प्रेम का वास्तविक चित्रण हुआ है। शरतचंद्र ने प्रेम को ज्यादा महत्व नहीं दिया मगर नकारा भी नहीं। बचपन के निर्दोष आकर्षण से शुरू होने वाला देवदास का प्रेम वास्तव में प्रेम नहीं आदत है।

संचार माध्यमों और भौतिकतावादी प्रभाव के कारण अब आत्मा परमात्मा का प्रेम हास्यास्पद हो गया है। प्रेम में अब शरीर प्रधान हो गया है। लड़के लड़कियां पहले एक दूसरे के शरीर से ही प्रभावित होते हैं। वे शरीर की कामना भी रखते हैं। शारीरिकता से रहित अमूर्त प्रेम अब संभव नहीं है। साहित्य समाज के समग्र रूप को लेकर चलता है। प्रेम भी इस समग्रता का एक अंग है। स्त्री पुरुष का प्रेम भले ही शरीर पर आधारित है मगर यौनाचार मुझे स्वीकार नहीं है। प्रेम में रुचिओं, विचारों और भावनात्मक स्तर पर जुड़ाव ज़रूरी है। एक दूसरे को शेयर करने की आत्मीयता हमें ऊपर उठाती है। वासना अपने आप में कुरूप नहीं सुंदर है। प्रेम में एक विशिष्टता ज़रूरी है। यही वह बिंदु है जहां मनुष्य पशुओं से ऊपर उठ जाता है।

गाँधी, अमेरिका और जगदम्बा प्रसाद दीक्षित

सेंट ज़ेवियर्स कॉलेज से सेवानिवृत्ति के बाद जे.पी. दीक्षित मुम्बई के पाक्षिक पत्र जन समाचार के प्रधान सम्पादक बन गए। इस पत्र में नियमित स्तम्भ लिखकर उन्होंने हमेशा अमेरिका की साम्राज्यवादी नीतियों का विरोध किया। महात्मा गांधी से वे पूरी तरह असहमत थे। जे.पी. दीक्षित के अनुसार महात्मा गांधी अंग्रेजों के एजेंट थे। उनका हर क़दम अंग्रेजों यानी अपने मालिकों को खुश करने के लिए होता था। गांधी के ऐसे कार्य और व्यवहार से हमें आज़ादी देरी से हासिल हुई। दीक्षित जी के अनुसार महात्मा गांधी ने सत्य, अहिंसा, धर्म, ईश्वर आदि की बातें कीं। इससे हिंदू और मुसलमानों के बीच दूरियां पैदा हुईं। डॉ नामवर सिंह के पूर्वाग्रही आलोचना कर्म से नाराज़ जे.पी. दीक्षित ने 'साहित्य और समकाल' नामक एक किताब लिखी।

जुहू चौपाटी पर बी.आर. चोपड़ा के बंगले के सामने एक कॉलोनी थी जिसमें सीमेंट के पतरे वाले कॉटेज थे। यहीं एक कॉटेज में जे.पी. दीक्षित अपनी तन्हाई के साथ आबाद थे। उनकी पत्नी को मुंबई रास नहीं आया। इसलिए वे गांव में रह गईं। नौकरी के चलते जे.पी. दीक्षित को आजीवन वनवास काटना पड़ा। बेटी ससुराल में और बेटा जर्मनी में बस गया। प्रोफ़ेसर जगदंबा प्रसाद दीक्षित उम्र की डगर पर हमेशा इकला चलते रहे। वे दोपहर का भोजन कॉलेज की कैंटीन में करते थे। रात में खुद सब्ज़ी बनाते और पड़ोस के बनारसी होटल से चपाती मंगा लेते थे। उनके घर में गिनती के दो चार बर्तन थे। एक रविवार मैं उनसे मिलने गया तो उन्होंने कड़ाही में चाय चढ़ा दी क्योंकि पतीला गंदा था। उसमें वे पहले ही तीन बार चाय पका चुके थे। रीडिंग, राइटिंग और ईटिंग के लिए जे.पी. दीक्षित के पास सदियों पुरानी एक टेबल थी। इस पर लगी हरे रंग की रैक्सीन पर मैल कि हमेशा मोटी परत जमी रहती थी। सेवानिवृत्ति के समय उनकी कॉलोनी एक भवन निर्माता को पसंद आ गई। विस्थापित होने के एवज़ में जे.पी. दीक्षित को साठ लाख रूपये प्राप्त हुए। चालीस लाख रूपए में उन्होंने महाडा चार बंगला अंधेरी में एक फ्लैट ख़रीदा और बीस लाख रुपए फिक्स डिपॉजिट में डाल दिए।

मुरदा घर के लेखक जगदंबा प्रसाद दीक्षित

जगदंबा प्रसाद दीक्षित का जन्म मध्य प्रदेश के बालाघाट में सन् 1933 में हुआ था। आख़िरी दिनों में वे अपने बेटे से मिलने बर्लिन, जर्मनी गए थे। वहीं 20 मई 2014 को उनका निधन हो गया। उनकी अंत्येष्टि में उनके बेटे और बहू के अलावा बर्लिन की हिंदी लेखिका सुशीला शर्मा हक़ शामिल हुईं। उनकी धर्मपत्नी का निधन भी बर्लिन शहर में ही हुआ।

कटा हुआ आसमान, मुरदा घर, अकाल और इतिवृत उनके प्रमुख उपन्यास हैं। उनके कहानी संग्रह का नाम है शुरुआत। दीक्षित जी का उपन्यास 'मुरदा घर' अपनी कथा वस्तु और प्रयोगधर्मी शिल्प के कारण बेहद चर्चित हुआ।

हमारे देश में रोज़गार की तलाश में जब गांव से शहरों की तरफ़ पलायन हुआ तो शहरों में झोपड़पट्टियों की तादाद बढ़ने लगी। इन्हीं झोपड़पट्टियों में रहने वाले बेबस लोगों और बूढ़ी लाचार वेश्याओं की मार्मिक दास्तान है 'मुर्दाघर'। इस उपन्यास में पुलिस और प्रशासन का क्रूर चेहरा भी सामने आता है। इन सबके बीच मुहब्बत भी सांस लेती रहती है।

जनसत्ता की रविवारीय पत्रिका 'सबरंग' में जगदंबा प्रसाद दीक्षित का उपन्यास अकाल प्रकाशित हुआ और पसंद किया गया। मेरे ऊपर उनका इतना स्नेह था कि उन्होंने 'अकाल' में एक जगह लिख दिया "देवमणि हाथ में बंदूक लिए बारात में सबसे आगे आगे चल रहे थे।" इस उपन्यास में ससुर और बहू के बीच शारीरिक संबंध के ज़रिए उन्होंने स्थापित किया कि सेक्स इंसान की मनोवैज्ञानिक और शारीरिक ज़रूरत है। भारतीय राजनीति पर जगदंबा प्रसाद दीक्षित की पुस्तक है भारत में राष्ट्रीय और दलाल पूंजीपति। नेशनल एंड कांप्रेडोर बुर्जुआजी और बोगस थियरी ऑफ़ फ्यूडलिज्म आदि उनके द्वारा लिखी अंग्रेज़ी पुस्तकें हैं।

दीक्षा, सर, नाराज़, नाजायज़, फिर तेरी कहानी याद आई, जानम आदि फ़िल्में लिखने वाले कथाकार जगदंबा प्रसाद दीक्षित फ़िल्म जगत में एक अतृप्त आत्मा की तरह आजीवन भटकते रहे। महेश भट्ट का साथ और प्रतिभा के बावजूद उनको वो कामयाबी और शोहरत नहीं मिली जो कथाकार कमलेश्वर और डॉ. राही मासूम रज़ा को हासिल हुई। कई साल तक मुम्बई में प्रगतिशील लेखक संघ का ज़बरदस्त बोलबाला रहा। यह भी हैरत की बात है कि ख्वाजा अहमद अब्बास से लेकर कृष्णचंद्र तक किसी से भी जगदंबा प्रसाद दीक्षित की दोस्ती नहीं हुई। वे अपनी डगर पर अपनी मस्ती में अकेले चलते रहे। गुज़रने के चंद साल पहले उन्होंने बताया था कि उन्हें अपनी माँ की बहुत याद आती है। रात में अचानक उनकी नींद उचट जाती थी और वे कई कई घंटों तक माँ की याद में खोए रहते थे। अंततः 20 मई 2015 को दीक्षित जी की माँ ने उन्हें ऊपर बुला लिया। वे बेटे से मिलने जर्मनी गए थे। वहीं बीमार पड़े और वहीं उनका इंतकाल हो गया। मेरी यही दुआ है कि दीक्षित जी जहाँ भी हों ऊपर वाला उन्हें शांति प्रदान करे।

कविता

उषाकाल

डॉ. संजीव कुमार

अरुण अरुण सा गगन, क्षितिज पर बिखराती मुस्कान।
उषा पहन कर निकली, स्वर्णिम किरणों के परिधान।।

आभादीप्त सौम्य मुखमंडल, स्मितिमय नयन युगल।
रूपराशि को देख हो उठे, विहग मौनए चंचल।।

वक्षोजों पर धरे कलश, अरुणिम ज्योतिर्मय बिन्दु।
नभ गंगा में मुरझायी सी, रजत कमलिनी इन्दु।।

मुँदने लगीं तारकों की पलकें, थक कर उन्मान।
मौन निशा चल दी समेट कर, नभ से तिमिर वितान।।

आकुलता में रोई रजनी, सारी रात असार।
आँसू के मोती समेट, ले आयी उषा उदार।।

शशि का मौन साक्ष्य, सिहरन से काँपी सुह्द समीर
आँचल में भर तुहिन, पुलकमय, तृण, तरु दल भर, धीर।।

चेतनता का स्पर्श जगत में, मंगल ज्योति प्रसार।
जीवन में जीवन को लाई, देखो उषा उतार।।

खिलने लगीं मुकुल सुमनों की, देख जगत का हर्ष।
जागा भू जीवन में सहसा, तब जीवन उत्कर्ष।।

चंचल विहगों ने पुलकित हो, भरी सुरीली तान।
विशद् धरा पर लगा बिखरने, नवजीवन का ज्ञान।।

सरिता की लहरों में, मंथर मंथर रव किल्लोल।
उन्मद हो करतीं तट पट पर, चंचल केलि विलोल।।

ग्राम धेनुयें पावन पय से, भरतीं घट अनमोल।
गुंजन की लहरों से प्लावित, हैं भ्रमरों के बोल।।

मंदिर में शंखध्वनि की, हो उठी पूत गुंजार।
मंगल मंत्रों का भू जन, करते शुचि आत्मोच्चार।।

नयनों में भर उठा मुखर हो, जीवन का उत्साह।
उषा बहाने लगी जगत में, नूतन प्राण प्रवाह।।

विश्व लघुकथा प्रतियोगिता-2022
प्रथम पुरस्कार प्राप्त लघुकथाएँ

लेखक : हरीश कुमार सिंह

नया मंदिर

उनके पुश्तैनी भवन के बाहरी परिसर में ही बिलकुल सड़क से लगा हुआ एक छोटा मंदिर था जिसमें भक्तिभाव से परिजनों के साथ मोहल्लेवाले भी पूजा अर्चना किया करते थे।

एक बार प्रशासन ने जब सड़क चौड़ी करने के लिए मंदिर को हटाने या भवन के अंदर अन्यत्र स्थानांतरित करने की बात की तो मकान मालिक के साथ मोहल्ले वालों ने भी आसमान सर पर उठा लिया। प्रशासन दवाब में झुक गया तथा बात आई गई हो गई।

कुछ समय पश्चात एक रियल एस्टेट वाले ने भवन मालिक से संपर्क किया तथा साझेदारी में पुश्तैनी भवन तोड़कर बड़ा शॉपिंग कॉम्प्लेक्स बनाने का प्रस्ताव रखा। अगले दिन भवन मालिक मोहल्ले वालों को बता रहा था कि फिलहाल तो मंदिर हटाना पड़ेगा क्योंकि पूरा भवन ही तोड़ा जाएगा। लेकिन नए कॉम्प्लेक्स में नए मंदिर की जगह हम जरूर रखेंगे।

▫ रत्न की दुकान

बस में मेरे पास की सीट पर एक युवक बैठा था द्य काफी उदास और चिंतित दिखाई दे रहा था। बोरियत दूर करने के लिए मैंने पूछा आप कहाँ रहते हो और कहाँ जा रहे हैं।

वो बोला कि मैं उज्जैन में रहता हूँ और कुछ काम से इंदौर जा रहा हूँ। मैंने पूछा टेंशन में क्यों दिख रहे हो वो बोला हाँ आप सही कह रहे हैं, मैं पिछले एक दो साल से काफी परेशान हूँ रुपये, पैसे की चिंता नहीं है मगर घर में क्लेश, अशांति और मानसिक सुख नहीं होने से अवसाद में हूँ मैंने पूछा आप क्या व्यवसाय करते हैं।

वो बोला कि, लोगों की समस्याओं के समाधान के लिए विभिन्न राशियों के रत्न, मोती और मूंगे बेचने की मेरी दुकान है।

विश्व लघुकथा प्रतियोगिता-2022
द्वितीय पुरस्कार प्राप्त लघुकथाएँ

लेखिका : डॉ. दुर्गा सिन्हा

वहम

"सर! आज आप अपने घर रोज़ के रास्ते से मत जाइएगा" जावेद नेअपने बॉस को हिदायत दी

" क्यों? कोई ख़ास बात?"

" नहीं... सर! बस आज ज़रा

हालात ठीक नहीं हैं।

"क्या कुछ करने वाले हो तुम लोग?" हमेशा की तरह राकेश ने तंज कसते हुए कहा।

जावेद उस ऑफ़िस में अकेला कर्मचारी था, वह भी चतुर्थ श्रेणी का। तंज असहनीय होता लेकिन बर्दाश्त कर लेता। रॉकेश बॉस थे।

"हमेशा दंगा फ़साद ही करते रहते हो तुम लोग एकभी किसी की जान बचाने की भी सोचा करो।"

राकेश ने दूसरी तोहमत लगाई और निकल पड़ा घर की ओर।

"सर! यह टोपी लगा लीजिए।"

जावेद एक एक्स्ट्रा टोपी हमेशा

अपने पास रखता था, कब किसके काम आ जाए।

"छोड़ो भी" रॉकेश कुछ और बोलता उससे पहले ही एक पत्थर राकेश के सिर पर लगा।

जावेद ने वही पत्थर पलट कर उसी दिशा में फेंक दिया जिधर सेआया था और रॉकेश को टोपी पहना कर अपने इलाक़े से सुरक्षित लेजाकर

उसके घर पहुँचा आया।

"कैसे कहूँ! बहुत-बहुत शुक्रिया माफ़ करना। मुझे रोकना चाहिए था ऑफ़िस वालों को, लेकिन मैं...मैं भी उनके साथ मिल कर तुम्हें इसी नज़र से देखता रहा पर।

अब अब ऐसा नहीं होगा। तुम बहुत बहादुर और वफ़ादार हो। देश को तुम्हारे जैसों की ही ज़रूरत है।"

विश्व लघुकथा प्रतियोगिता-2022 तृतीय पुरस्कार प्राप्त लघुकथा

लेखिका : डॉ. भूपिंदर कौर

रात के 3:00 बजे

वह मेरी जानकार थी, मुझे बहुत अच्छी लगती थी। बहुत प्यारी सी थी और हरदम खुश रहने वाली जीवन से भरपूर लड़की थी। कहीं जॉब करती थी और स्कूटी पर जाती थी और जाते समय हमेशा मुझे विश करती हुई हेलो भाभी, कैसी हैं आप?

बोलती हुई निकल जाती। मैं भी उसे प्यार से जवाब देती है। एक दिन, रात का समय 11 बजे होंगे, बेल बजी, उसके पिता ने कहा कि श्वेता का एक्सीडेंट हो गया है। सुनकर मैं थोड़ा डर गई पर मुझे नहीं लगा था कि कुछ बहुत बड़ी बात हुई होगी? एक्सीडेंट हुआ है, तो ठीक हो जाएगी और हालचाल पूछती, उससे पहले वह हॉस्पिटल के लिए निकल गए, ज्यादा बात नहीं कर पाई सआकर लेट गई। मन ही मन भगवान से प्रार्थना कर रही थी कि उसे कुछ ना हुआ हो, वह ठीक हो। पर...थोड़ी देर बाद उनके घर से रोने की आवाजें आने लगी स पता चला कि उसका बहुत ही खतरनाक एक्सीडेंट हुआ है, वह बस के नीचे कुचली गई थी।

मेरे पांव तले से जमीन खिसक गई⁄

मैं कल्पना भी नहीं कर सकती थी कि उसे कुछ हो सकता है

अभी तो उसके घर वाले उसकी शादी की तैयारियां कर रहे थे,

और यह अचानक से

एकदम क्या हो गया

मैं बहुत परेशान, और दुखी थी

धीरे-धीरे दिन गुजरने लगे

मैं उसको दिमाग से निकाल ही नहीं पा रही थी।

रात-दिन उसके बारे में सोचती रहती। किसी ने मुझसे कहा कि जो व्यथ्व्रिक्त गुजर जाता है, उसके बारे में ज्यादा नहीं सोचना चाहिए (क्योंकि इनडायरेक्टली आप उसे अपनी तरफ अट्रैक्ट कर रहे होते हैं और अगर हम कमजोर पड़ जाए, तो हमारे साथ कुछ भी हो सकता है। पर चाह कर भी मैं उसे अपने दिमाग से नहीं निकाल पा रही थी। उठते-बैठते हर समय मुझे वही दिखाई देती और मैं उस समय भी उसके बारे में ही सोच रही थी, फिर एकदम से लगा कि जरा बच्चों को देख लूं, ढंग से कंबल डाला है कि नहीं? ठीक से सो, हैं या नहीं और झटके से कंबल उठाकर अपने कमरे से बाहर निकली तो मेरी चीख निकल गयी ऽऽऽऽऽ

यह क्या, वो मेरे कमरे के बाहर खड़ी थी, पर क्योंकि मैं बहुत स्पीड में थी, इसलिए बिना रुके दूसरे कमरे में चली गई। बच्चे सो रहे थे। उनको कंबल ओढ़ा दिया। पर अब अपने कमरे में आने की हिम्मत मुझ में नहीं थी। मेरा शरीर कांप रहा था। मैं पसीने से तरबतर हो गयी थी। घर के सभी लोग सो रहे थे। उन्हें जगाकर मैं परेशान नहीं करना चाहती थी।

क्या करूं

कुछ समझ में नहीं आ रहा था। लग रहा था जैसे वह अब भी बाहर खडी, मेरा इंतजार कर रही है।

और फिर...

बहुत हिम्मत से वाहेगुरु वाहेगुरु करते हुए अपने कमरे की तरफ बढ़ी, मैंने देखा अब वह नहीं थी। कई बार मुझे लगता था कि जैसे वह मुझसे कुछ कहना चाहती है पर मुझे बहुत डर लगता था कभी रात के समय अगर मैं पढ़ रही होती, तो मुझे ऐसा लगता कि वह मेरे सामने ही बैठी है। आज इस बात को 7-8 साल से भी ज्यादा हो गए हैं, पर मेरे लिए वह बात आज भी उतनी ही ताजा है, आज भी उतनी ही डरावनी, आज भी उतनी रहस्यमयी।

मन्नू भण्डारी की स्मृति में

मीना झा

हिन्दी संसार का एक और अनमोल मोती सदा के लिए विदा हो गया। दीर्घ समय तक हिन्दी साहित्य को अपने लेखन से समृद्ध करने वाली मन्नू भण्डारी अब नहीं रहीं उनके लेखन का हिन्दी साहित्य में एक विशिष्ट स्थान है। जीवन को बहुआयामी संतुलित दृष्टि से देखने वाले रचनाकार कम हुए हैं। वह ऐसी ही रचनाकार थीं ऐसी खाली जगहें कभी नहीं भरती। मन्नू भण्डारी को मन्नू भण्डारी की तरह ही याद किया जा सकता है, किसी और तरह नहीं।

इन दिनों प्रतिदिन मन्नूजी की चर्चा होती रही ममता कालिया के साथ उन्होंने कहा "आप मन्नूजी पर कुछ लिखिए" कई बार मैं और ममता जी तय करते कि मन्नूजी से मिलने जाएँगे, मगर मन्नूजी की अस्वस्थता, ममताजी की व्यस्तताएं और कोरोना काल बाधा बनते रहे। इस दिग्गज कथाकार से मिलने की इच्छा बस इच्छा बन कर रह गयी।

"क्या लिखूं मैं उनसे कभी मिल ही नहीं पायी" मैं ने ममताजी से कहा–

"क्यों, उनकी सारी रचनाएँ पढ़ी हैं आपने, उन रचनाओं पर लिखिए" ममता जी हमेशा डांट कर ही मुझसे लिखवाती हैं ठीक ही तो कह रहीं हैं वह, व्यक्ति उड़ गया, परन्तु कथाकार तो मेरे पास है प्रत्येक रचनाकार का व्यक्तित्व अपनी रचनाओं में रचा बसा होता है।

और मेरे हाथों में राजपाल एण्ड सन्ज से प्रकाशित, मन्नूजी की 'मेरी प्रिय कहानियाँ', संस्करण 1982, पुनः आ गयी यह पुस्तक लगभग तीस सालों से मेरे पास है,जब इसकी कीमत मात्र बारह रुपए थी। शुरूआती दौर में कई बार पढ़ी गयी 'अकेली' से 'शायद' तक ये नौ कहानियाँ इस पुस्तक की भूमिका में मन्नूजी ने कहानियों के सन्दर्भ में लिखा है। "यातना और करुणा हमें दृष्टि देती है यातना के क्षणों में हम अपने भीतर जीते हैं हो सकता है उल्लास और प्रसन्नता के क्षण मेरी जिन्दगी के सर्वश्रेष्ठ क्षण रहे हों, लेकिन यातना के क्षण मेरे अपने हैं और सृजनधर्मा हैं इन्हें अभिव्यक्ति न मिली होती तो निस्संदेह जिन्दगी का बहुत कुछ टूट बिखर गया होता इन क्षणों से उपजी कहानियाँ ही मेरी प्रिय कहानियाँ मन्नू भण्डारी के समस्त साहित्य में यह अनूभूत पीड़ा विस्तृत अभिव्यक्ति पाती है। रचनात्मक लेखन में लेखिका अपने होने का अर्थ भी पाती हैं।

कुछ व्यक्तित्व मुखर होते हैं, किन्तु कुछ चुपचाप इतिहास रचने की क्षमता रखते हैं मन्नू जी की रचनाओं में अनुभूत सत्य, वर्तमान को आच्छादित करता भविष्य का संकेत देता है।

उनकी इसी क्षमता ने वैचारिक धरातल पर भूत, वर्तमान और भविष्य के बीच एक सरल सीधी रेखा खींची है संवेदनशील और जागरूक लेखिका ने स्त्री विमर्श के बाजारवादी स्वरुप से बहुत पहले स्त्री जगत की समस्याओं को सहज रूप से साहित्य में उतारा है वहाँ स्त्री के सामान्य मानवी रूप का चित्रण किया गया है।

उनकी सृजनात्मकता ने परम्परा और आधुनिकता के बीच के तनाव, द्वंद्व को स्पष्ट अभिव्यक्ति दी है सयानी बुआ, 'अकेली' की सोमा बुआ, 'मजबूरी' की दादी, 'खाने आकाश नाइं' के स्त्री पात्र, 'यही सच है' की दीपा, 'आपका बंटी' की शकुन आदि चरित्र स्त्री के भविष्य का मार्गदर्शन करते हैं दाम्पत्य, प्रेम और पारिवारिक परिवेश की कहानियाँ मन्नू भण्डारी के सहज स्त्री विमर्श हैं यही सच है में दो संबंधों के बीच स्त्री मन का द्वंद्व यों प्रकट होता है।

कभी दीपा सोचती है कि अठारह वर्ष की उम्र में किया गया प्यार भी कोई प्यार है और कभी उसे पहला प्यार ही सच्चा लगता है तत्सामयिक सामाजिक परिप्रेक्ष्य में स्त्री के अंतर्मन को उद्घाटित करना मन्नू भण्डारी के लेखकीय साहस को दर्शाता है 'तीन निगाहों की एक तस्वीर' में स्त्री के दमित मनोराग का अंतर्द्वंद्व कितना मुखर, मार्मिक और मारक है! लेखकीय आभिजात्य को सम्भालते, बिना अश्लीलता

के सब कुछ कह जाना मन्नूजी की विशेषता है।

मन्नू भण्डारी अपने पिता से बहुत अधिक प्रभावित थीं लेखन के संस्कार उन्होंने पिता से ही पाए स्वतंत्रतापूर्व जब स्त्री शिक्षा अकल्पनीय थी तब उनके पिता ने बेटियों को उच्च शिक्षा दिलवायी अपने आत्मकथ्य में उन्होंने कई बार अपने पिता से विद्रोह की बात कही है, किन्तु पिता किसी न किसी रूप में उनके व्यक्तित्व में समा गये हैं "होश सँभालने के बाद से ही जिन पिताजी से किसी न किसी बात पर मेरी टक्कर ही चलती रही, वे तो न जाने कितने रूपों में मेरे अन्दर हैं कहीं कुंठाओं के रूप में, कहीं प्रतिक्रिया के रूप में तो कहीं प्रतिच्छाया के रूप में" माँ की जिन्दगी के दैन्य ने उन पर नकारात्मक प्रभाव डाला।

पिता की हर ज्यादती को अपना प्राप्य और बच्चों की प्रत्येक उचित-अनुचित ज़िद्द को स्वीकारने वाली माँ की दुर्दशा उन्हें अत्यधिक आहत करती माँ से सारे लगाव के बावजूद उनका त्याग, धैर्य और सहिष्णुता मन्नू जी का आदर्श नहीं बन सके।

संभवतः पिता से विद्रोह इस कारण भी रहा कॉलेज की प्राध्यापिका शीला अग्रवाल से प्रभावित होकर उन्होंने स्वतंत्रता आन्दोलन में भाग लिया शरतचंद्र की भावुकता, प्रेमचंद का यथार्थ, जैनेन्द्र के छोटे सरल वाक्य, अज्ञेय की दुरुहता से प्रभावित होने के बावजूद उन्हें यशपाल सबसे प्रिय थे "रचनाओं से अधिक उनका क्रांतिकारी जीवन इसके पीछे रहा हो।"

अध्ययन के बाद नौकरी, विवाह, नन्हीं रचना और लेखन उनकी जिन्दगी थे राजेन्द्र यादव और मन्नू भण्डारी ने कई प्रसंगों में रचना का जिक्र किया है लेखक द्वय की नन्ही 'रचना', जिसका नाम रखने का सन्दर्भ भी मैं ने कई बार पढ़ा जब उस नन्हीं रचना को देखा तो वह प्रतिष्ठापूर्वक अपने रचनाकार माता-पिता की विरासत सम्भाले एक परिपक्व रचना थीं।

रचनाजी ने अपने माता-पिता को अपना सौ प्रतिशत दिया है, मेरे ख्याल से यह संतुष्टि उन्हें और उदास होने से रोकेगी मन्नू जी की आरंभिक कहानियों की अपेक्षा बाद की कहानियों में स्त्रियाँ अपना स्वतंत्र निर्णय लेती नजर आतीं हैं' 'दीवार, बच्चे और बारिश', 'क्षय' 'इसा के घर इन्सान' आदि इसी तरह की कहानियाँ हैं 'त्रिशंकु' और 'स्त्री सुबोधिनी' अल्हड़पन से भरी नादान युवतियों के लिए लिखी गयी है कथ्य की नवीनता और आवश्यकता इन कहानियों को महत्वपूर्ण बनाती है राजेन्द्र यादव के अनुसार "व्यर्थ के भावोच्छ्वास में नारी के आँचल में दूध और आँखों में पानी दिखाकर उसने पाठकों की दया नहीं वसूली, वह यथार्थ के धरातल पर नारी का नारी की दृष्टि से अंकन करती है।"

उनके उपन्यासों की बात करें तो 'आपका बंटी' स्त्री को अस्तित्वहीनता की स्थिति से निकालने का प्रयास है माता-पिता के अलगाव और नये सम्बन्धों के मध्य पिस रहे छोटे बच्चे के मनोविज्ञान के साथ इसमें एक स्त्री के स्वतंत्र अस्तित्व और अस्मिता की पहचान की गयी है।

इस उपन्यास में बाल मनोविज्ञान के साथ-साथ स्त्री की कामनाएँ और ममत्व का समस्त द्वंद्व इस एक वाक्य में उतर आया है बंटी उसके और अजय के बीच सेतु नहीं बन सका तो वह उसे अपने और डॉक्टर के बीच बाधा भी नहीं बनने देगी, लेकिन तब बंटियों की समस्या आधुनिकता के साथ समाज में और अधिक गहरी होती जा रही है।

विस्मित करता है कि लेखिका ने समय के साथ बढ़ती यह समस्या चालीस साल पहले किस सूक्ष्मता से आंकी है! 'एक इंच मुस्कान' में राजेन्द्र यादव ने पुरुष पात्र और मन्नू भण्डारी ने स्त्री पात्र चित्रित किये हैं राजेन्द्र यादव और मन्नू भण्डारी द्वारा मिल कर लिखा गया यह उपन्यास शिल्प की दृष्टि से एक नया प्रयोग है।

पढ़कर सोचने पर मजबूर हो गयी कि दो विभिन्न प्रतिभाओं ने कैसे इतना प्रभावपूर्ण और प्रवाहपूर्ण उपन्यास रचा! संभवतः प्रतिभा का ही कमाल था 'महाभोज' नामक प्रसिद्ध उपन्यास पारिवारिक, सामाजिक समस्याओं से भिन्न राजनैतिक एवं नौकरशाही के भ्रष्टाचार की पोल खोलता है नेता और सरकारी अधिकारी के बीच पिसते एक आम आदमी की पीड़ादायक स्थिति का यथार्थवादी चित्रण इस उपन्यास को अत्यधिक महत्वपूर्ण बनाता है।

विभिन्न विषयों पर कहानी उपन्यास लिखने के अतिरिक्त मन्नू भण्डारी ने विभिन्न विधाओं में भी लिखा बाल कहानी, नाटक, फ़िल्मों के लिए पटकथा, दूरदर्शन के लिए धारावाहिक भी लिखे उनकी कहानी 'अकेली' पर टेलीफिल्म भी बनी नब्बे के दशक में धारावाहिक 'रजनी' बहुत प्रसिद्ध हुआ इस धारावाहिक में रजनी नामक आम गृहिणी के माध्यम से समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार एवं अन्याय के खिलाफ आवाज़ उठायी गयी।

किसी लेखक के व्यक्तित्व का परिचय उसके लेखन में झलकता है 'एक कहानी यह भी', जिसे मन्नूजी की आत्मकथा या आत्मकथ्य कह सकते हैं, मैं लेखिका के पारदर्शी, ईमानदार एवं सरल व्यक्तित्व की छवि दर्पण की तरह स्पष्ट नजर आती है।

इस पुस्तक में लेखिका ने आरंभिक जीवन, जीविका, लेखन, समकालीन लेखकों की क्षुद्रता महानता और व्यक्तिगत जीवन के संघर्ष बड़ी बेबाकी और ईमानदारी से बयान किये हैं। यह आत्मकथ्य मन्नूजी के जीवन संघर्ष के साथ-साथ उस दौर की कई साहित्यिक, सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों घटनाओं पर भी प्रकाश डालता है। आत्मकथा इतनी ईमानदारी से लिखना अत्यंत कठिन रहा होगा लेखिका के लिए फिर भी उन्होंने लिखा और पूरी तन्मयता से अपने जीवन के श्वेत श्याम पक्षों को हमारे समक्ष रखा है।

आत्मकथ्य में इंदिरा गाँधी द्वारा घोषित आपातकाल, आपातकाल का देशव्यापी प्रभाव, तज्जन्य परिणाम आदि घटनाओं का उल्लेख किया गया है हिन्दी के प्रतिष्ठित लेखक रघुवीर सहाय का संपादक की हैसियत से इंदिरा सरकार के सामने सबसे पहले घुटने टेकने और धर्मवीर भारती का इंदिरा और संजय गाँधी के पक्ष में रंग बदलना उन्हें नागवार था।

सरल हृदया मन्नूजी इन दो घटनाओं से बेहद आहत थीं, पर राजेन्द्रजी बिलकुल सहज थे, मानो कुछ हुआ ही न हो या ऐसा ही होता है व्यक्तित्व की सरलता मन्नूजी को व्यक्तिगत या सामाजिक जीवन में बार-बार आहत करती रही स्वभाव की यही कोमलता उनके लेखन में भी उतर आयी है, लेखकीय कौशल के साथ और यही उन्हें बार-बार छली जाने पर मजबूर करती है उनके शब्दों में राजेन्द्र की मित्रता धीरे-धीरे दूसरी दिशा की ओर मुड़ चली मेरी तो दुनिया ही जगमगा उठी फिर ऐसा क्या हुआ कि वह उस जगमग प्रेम में 'छलात्कार' की शिकार हुई।

निस्संदेह यह उनका सहज विश्वासी व्यक्तित्व और निर्दोष भोलापन था यही भोलापन उन्हें अपने पति को 'ब्लैक स्पॉट' से उबारने एवं सारी जिम्मेदारियां ढ़ोने को बाध्य करता है। वह बिलकुल 'पोज' नहीं कर सकती थीं आडम्बर उनके व्यक्तित्व को छू भी नहीं गया था।

साहित्य एकेडमी की उनकी श्रद्धांजलि सभा में सभी विद्वान उनके व्यक्तित्व के इस पक्ष पर एकमत थे उस दौर की लेखिकाओं कृष्णा सोबती, उषा प्रियंवदा के बर अक्स मन्नूजी अत्यंत मद्धिम आंच पर अपनी रचनाओं को सिद्ध करती हैं। अकड़ और आक्रामकता, तेवर और तीक्ष्णता, काम और कामुकता से कोसों दूर इनकी रचनाएँ जुनून नहीं, एक सुकून का एहसास देती हैं।

मद्धिम आंच पर पकने का यह अर्थ नहीं कि रचनाएँ उद्देश्य में सफल नहीं होतीं, बल्कि अरस्तु के अनुसार पाठकों के मन का विरेचन करती हैं। विरेचन अर्थात् परिष्कार के द्वारा शुद्धिकरण।

अंत में भावनाएं ही जीवन, कला एवं साहित्य को एक विशिष्ट आयाम देती हैं। भावना का अर्थ भावुकता नहीं, विचारों के संतुलन से है, जो इन तीनों के उद्देश्य में ठहराव पैदा करता है।

भावनाओं के बिना गंभीर वैचारिक स्थापनाएं कठिन हैं इनकी रचनाओं में प्रसाद गुण संपन्न भाव सरलतापूर्वक पाठकों को अपने दायरे में समेट लेते हैं साहित्य की सार्थकता भी इसी में है मन्नू भण्डारी का समस्त साहित्य पढ़कर इन्हीं विचारों के संतुलन से गुजरी हूँ मैं उनसे नहीं मिली, इसलिए वह कभी स्मृति शेष नहीं होंगी मेरे लिए अपनी रचनाओं में मुझे मिलती रहेंगी उस सहज सरल लेखिका को हार्दिक नमन!

हरिमोहन झा : सामाजिक क्रांति का एक मुखर स्वर

मेधा झा

"लेखक खट्टर काका आज रामलीला है, चलिएगा। खट्टर काका बोले मैं नहीं जाऊंगा।

लेखक चलिए। मर्यादा पुरुषोत्तम एक से एक आदर्श दिखा गए हैं।

खट्टर काका हां, सो तो दिखा ही गए हैं। अबला को कैसे दुख देना चाहिए। सती साध्वी को कैसे घर से निकाल देना चाहिए। किसी स्त्री की नाक कटवा दो। किसी स्त्री पर तीर छोड़ दो। समझो तो नारी को रुलाने से ही राम की वीरता शुरू होती है और समाप्त होती है।

(खट्टर काका हरिमोहन झा)

आश्चर्यचकित लेखक की दुविधा दूर करते हुए ठठा कर हँसते हैं काका। ससुराल का तो नाई भी गाली देता है तो लोग बुरा नहीं मानते। हम वैदेही के मातृपक्ष से हैं, तो कैसे छोड़ देंगे रामलला को। हाँ, कोई और उन्हें कुछ कह कर दिखा, उन्हें हमारे सामने।

हरिमोहन झा ने अपने काल्पनिक पात्र 'खट्टर काका' के माध्यम से धर्म, दर्शन और इतिहास, पुराण के लोकविरोधी प्रसंगों की दिलचस्प लेकिन कड़ी आलोचना प्रस्तुत की। सर्वप्रथम इसका प्रकाशन मैथिली भाषा में हुआ था। धर्मयुग, कहानी आदि पत्रिकाओं में जब इसके अंश छपे तो दूर-दूर से पत्र आने लगे कि कौन हैं ये। अपनी अभूतपूर्व लोकप्रियता की वजह से इसका अनुवाद स्वयं लेखक ने हिंदी में किया और मैथिली भाषा के 'कका' से हिंदी के 'काका' में रूप में परिवर्तित होने से ना सिर्फ शब्द की मात्रा में बढ़ोतरी हुई बल्कि पाठक संख्या भी तीव्र गति से बढ़ा। व्यंग्य की अद्भुत और अद्वितीय शैली के प्रणेता 'खट्टर काका' उर्फ हरिमोहन झा पाठकों को हास्य रस में सराबोर करते हुए उनके मर्मस्थल पर चोट करते हैं और क्रांति की अलख जगाते हैं।

आत्मकथा 'जीवन यात्रा' के लिये सन् 1985 में साहित्य अकादमी पुरस्कार से मरणोपरांत पुरस्कृत हरिमोहन झा उन साहित्यकारों में से एक हैं जिन्होंने अपने विभिन्न व्यंग्य एवं कहानी संग्रह के द्वारा तात्कालिक मैथिल समाज में चेतना जगाने में अहम भूमिका अदा की। उनके द्वारा दिए गए दृष्टांत और विचार आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं।

सन् 1908 में बिहार के जिला वैशाली के कुमर बाजितपुर में जन्मे श्री हरिमोहन झा अपने नाम में निहित कृष्ण की तरह सामाजिक और धार्मिक कुरीतियों पर अपनी रचनाओं द्वारा प्रहार करते रहें। इनके पिता श्री जनार्दन झा 'मिथिला मिहिर' के सम्पादक एवं मैथिली और हिंदी के कवि और लेखक थे। 'मिथिला मिहिर' मैथिली पत्रिका थी, जिसे दरभंगा महाराज चलाते थे। मिथिला के गढ़ दरभंगा में रहने की वजह से हरिमोहन झा को मिथिलांचल की संस्कृति को नजदीक से देखने का मौका मिला और पिता जी के सम्पादक होने से विद्वानों का सान्निध्य बचपन से ही मिला। सोलह साल की कम उम्र में ही उनका विवाह करा दिया गया। 1927 के कंबाइंड स्टेट इंटरमीडिएट एग्जामिनेशन में संस्कृत, लॉजिक और इतिहास विषय के साथ फर्स्ट क्लास फर्स्ट आए। फिर आगे की पढ़ाई पटना कॉलेज से की इंग्लिश (ऑनर्स) से ग्रेजुएशन के बाद हरिमोहन झा ने फिलॉसफी में एम.ए. किया। जिसमें उन्होंने बिहार उड़ीसा स्टेट लेवल पर टॉप किया और गोल्ड मेडलिस्ट बने। ग्रेजुएशन के दिनों में हरिमोहन झा ने इलाहाबाद में अपनी कॉलेज की टीम का ऑल इंडिया डिबेट कम्पटीशन में नेतृत्व की और विजेता बने। कॉलेज में हरिमोहन झा के प्रतिभा की धाक जम चुकी थी लेकिन यह तो सिर्फ शुरुआत थी। फिर एक-एक कर इनकी रचनाओं ने समाज का ध्यान आकृष्ट किया। विलक्षण प्रतिभा के स्वामी श्री झा पटना विश्वविद्यालय में ही दर्शनशास्त्र के प्रोफेसर और फिर विभागाध्यक्ष रहे।

आज से करीब नौ दशक पूर्व जब देश में स्वतंत्रता प्राप्ति की लहर जन जन में फैल रही थी, हरिमोहन जी अपनी लेखनी द्वारा अपने समाज की विसंगतियों पर चोट कर एक नए कुरीति मुक्त देश के निर्माण में अपना योगदान दे रहे थे।

हरिमोहन झा रचित काल्पनिक पात्र खट्टर काका और स्वयं लेखक के वार्तालाप शैली में लिखा गया 'खट्टर काका के तरंग' अपने ढंग का अद्‌भुत व्यंग्य है।

"खट्टर काका यहाँ ऐसे-ऐसे बेजोड़ नमूने हो गये हैं, जिनका दुनिया में जवाब नहीं! मोरध्वज पर आतिथ्य का उन्माद चढ़ाए तो बेटे को आरे से चीरकर अतिथि के आगे रख दिया! इसे सिद्धांत कहोगे या पागलपन एक स्त्री पर सतीत्व की सनक सवार हुई, तो कोढ़ी पति को सर पर लादकर उसे वेश्या के कोठे पर भोग कराने के लिए ले गयी! तुम इन्हें आदर्श समझते हो। मैं कहता हूँ, ये लोग मानसिक विकृतियों के शिकार थे।"

आज जब धर्म के नाम पर हर तरफ गलत परम्पराओं का तेजी से प्रचलन बढ़ा है, हर धर्म में एक खट्टर काका की आवश्यकता किसी भी समय से अधिक है जो समझा सकें कि धर्म मनुष्य के लिए है, मनुष्य धर्म के लिए नहीं कि इसके नाम पर मानव की बारम्बार आहुति दी जाए।

"लेखक खट्टर काका, अपने यहाँ तो यह परंपरा रही है कि प्राण जाहिं पर वचन न जाहिं!

खट्टर काका यही तो मूर्खता है। सिद्धांत हमारे लिए बने हैं हम उनके लिए नहीं बने हैं।

हास्य, व्यंग्य, कटाक्ष के जरिए सामाजिक कुरीतियों, रूढ़ियों पर किए गए उनके प्रहार ने हिन्दी में भी धूम मचा दी। प्रकाशक ने इसके कई संस्करण छापे। भांग के नशे में पाखंड पर किया गया इनका कटाक्ष अद्‌भुत है। शास्त्र हों या पुराण, वेद हो या गीता, हरिमोहन झा ने सब में विनोद ढूंढ़ा और उससे जुड़ी भ्रांतियों को उजागर किया।

"लेखक खट्टर काका, तो फिर ऐसे पौराणिक उपाख्यान क्यों बने?... इन पौराणिक आदर्शों का कोई मूल्य नहीं

खट्टर काका अजी, राजाओं को ठगने के लिए, विद्यार्थियों और शूद्रों से सेवा कराने के लिए, स्त्रियों को वश में रखने के लिए, इतने सारे उपाख्यान गढ़े गये हैं। उपाख्यानकार जिस नैतिक आदर्श का चित्रण करते हैं, उसे पराकाष्ठा पर ही पहुंचा देते हैं। सतीत्व की महिमा दिखलानी हुई, तो किसी सती के आँचल से आग की लपट निकलती है। इन पौराणिक आदर्शों का वही मूल्य, जो अजायबघर में रखी, पुरानी जंग लगी ढाल तलवारों का होता है। वे प्रदर्शन के लिए होते हैं, व्यवहार के लिए नहीं।

मृत परम्परा, सड़े गले प्रचलन, लोक कुरीति को खत्म करने के लिए उन्हीं की भाषा में सहजता से समझाने वाले खट्टर काका उर्फ हरिमोहन झा का संबंध भी वर्धमान महावीर की तरह वैशाली की धरती से रहा और कुरीतियों के खिलाफ शंख नाद कर एक सजग साहित्यकार की भूमिका इन्होनें निभाई। खट्टर काका का चरित्र बेबाक बोलता है धर्म के नाम पर चल रही अतिशयोक्तियों के बारे में "खट्टर काका देखो नए हमारा सारा साहित्य ही अतिशयोक्तियों से भरा हुआ है। अजी, सब बातों की एक सीमा होती है। जिसे जो मन में आया, लिख मारा! कोई पहाड़ उठा लेता है! कोई समुद्र सोख जाता है! कोई पृथ्वी को दाँतों में रख लेता है! कोई सूर्य को निगल जाता है! कोई चतुरानन, कोई पंचानन, कोई षडानन, कोई दशानन! कोई चतुर्भुज, कोई अष्टभुज, कोई सहस्रभुज! कोई एक सहस्र वर्ष युद्ध करता है। कोई पाँच सहस्र वर्ष तपस्या करता है। कोई दस सहस्र वर्ष भोग करता है! इन्हीं अतिशयोक्तियों के प्रवाह में हमने सत्य को डुबो दिया।

जिस तरह चन्द्रकान्ता संतति को पढ़ने के लिए लोगों ने हिंदी सीखी, उसी तरह 'कन्यादान' पढ़ने के लिए लोगों ने मैथिली सीखी। कन्यादान की कहानी खत्म होती है जब बुच्ची दाई की शादी होती है एक खूब पढ़े लिखें सी सी मिश्रा से। 1933 में जन्म होते ही व्यंग्य प्रधान रोचक उपन्यास 'कन्यादान' प्रसिद्ध हो गया। पहले मिथिला पत्रिका में धारावाहिक के रूप में आने पर लोग इसके अगले अंक की प्रतीक्षा करने लगे। जितनी तारीफ, उतनी ही भर्त्सना मिली इस उपन्यास को, लेकिन मज़े की बात यह थी कि विरोधी भी आतुरता से अगले अंक की प्रतीक्षा करते। पुस्तक के समर्पण से ही तेवर नज़र आने लगते हैं अंदर के तथ्य का। ये समर्पित किया गया है समाज के उन महारथियों को जो लड़कों को पढ़ाने में हजारों रुपए पानी की तरह बहा देते हैं लेकिन लड़की के लिए चार पैसे का स्लेट नहीं खरीद सकते। जो ए बी नहीं जानने वाली लड़की को बी ए पास से बाँध देते हैं और बछिया और घोड़े को ताउम्र साथ निर्वाह

करने को छोड़ देते हैं।

एक तरफ मिथिला के लोक व्यवहार, रीति-रिवाज, आंचलिक भाषा और घर आँगन का वर्णन है, वहीं कन्यादान के नाम पर बालिका का निर्जीव वस्तु समान दान पर तीक्ष्ण आक्षेप है। औरतों के आपसी वार्तालाप को सुनते हुए मिथिला का ग्राम जीवन जीवंत हो उठता है, वहीं उपन्यास सोचने को बाध्य करता है सामान्य जन जीवन की विडंबना को।

'द्विरागमन' अगला भाग है कन्यादान का। उसमें भी स्त्री शिक्षा के साथ-साथ समाज की खासियत और विसंगति दोनों का शानदार वर्णन है। लिखने की शैली इतनी रोचक है कि पाठक पढ़ता चला जाता है। पढ़े लिखे मिश्रा जी की माँग के अनुरूप उनकी धर्मपत्नी को पढ़ाने परिवारजन बनारस आते हैं और बुच्चीदाई की पढ़ाई प्रारम्भ होती है। 'कर्ता क्रिया कर्म' से पढ़ाना शुरू होता है तो उपन्यास की एक चरित्र लाल काकी से रहा नहीं जाता कि क्रिया कर्म तो मरने के उपरांत होता है।

ऐसी बातों से पढ़ाई की क्यों शुरुआत की जा रही है। दूसरे दिन एकवचन, बहुवचन पढ़ाते समय फिर लाल काकी के क्रोध का सामना करना पड़ता है कि हर दम बहुवचन क्या लगा रखा है। एक बार माई वचन भी बोलो, तब ना समझेंगे कि सपूत हो। बुच्चीदाई के छह भूत के प्रकार को याद करने पर तो लाल काकी क्रोध से थर थर कांपने लगी कि कल क्रिया कर्म और आज भूत पढ़ाया जा रहा। आंचलिक भाषा का अद्भुत प्रयोग पाठकों को बांधे रखता है और पाठक काकी की अज्ञानता पर बिना हँसे रह नहीं पाते।

इसी उपन्यास में उन्होंने सामाजिक आंदोलन का सूत्रपात भी किया है जो भोज भात के रूप में व्याप्त है मिथिला में, जहाँ प्रतिष्ठा बना कर अस्वाभाविक रूप से भोजन करते हैं लोग और मेजबान की साँस अटकी रहती है कि कहीं अन्य के लिए भोजन कम ना पड़ जाएँ।

भोजन भट्ट की ना तो मिथिला में कमी रही ना ही नाना प्रकार के व्यंजनों की। सुदूर गांव देहात में आज भी भोजन समाप्ति के बाद भोजन भट्ट रसगुल्ले, या आम की प्रतियोगिता रख खाने के बाद सौ दो सौ रसगुल्ला/आम खाते हैं। खाने के साथ वमन और दवा का दौर भी सामान्य है।

इस कुप्रथा पर आघात के साथ-साथ भाषा का ऐसा गज़ब प्रयोग किया गया है उपन्यास में कि सुदूर मिथिला के ग्राम का दृश्य आँखों समक्ष उतर आता है। ग्रामीण लोगों के एक-एक क्रियाकलाप का वर्णन कि दिखता है भोज का पत्तल अपने समक्ष रखा है और मिथिला के प्रसिद्ध व्यंजन भाँटा अदौड़ी, सजमनि भटबर, तिलकोरक पात तरुआ बड़ बड़ी, पापड़ तिलौरी, शकरौरी, सजमनिक चक्का एक एक कर पाठकों के पत्तल में परोसा जा रहा हो।

ऐसा सजीव चित्रण कि पाठक मानसिक रूप से पहुँच जाता है भोज के आंगन में और सिर्फ पढ़ कर ही लार टपकने लगती है। एक-एक आचार व्यवहार का सुंदर वर्णन कर लेखक ने दृश्य जीवंत कर दिया है। मैथिल लोगों का वृहत भोज के समय का वार्तालाप की प्रस्तुति भी उतनी ही रोचक है। ग्राम के विभिन्न चरित्र अपनी चारित्रिक विशेषताओं के साथ उस भोज में उपस्थित दिखते हैं।

हरिमोहन झा ने अपना ज्यादातर लेखनकार्य मैथिली में किया है। अंग्रेजी में इनका रिसर्च "ट्रेन्ड्स ऑफ लिंग्विस्टिक एनालिसिस इन इंडियन फिलॉसफी" के नाम से है।

भारतीय दर्शन और संस्कृत काव्य साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान के रूप में हरिमोहन झा ने विशेष ख्याति अर्जित की। धर्म, दर्शन और इतिहास, पुराण के अस्वस्थ, लोकविरोधी प्रसंगों की दिलचस्प लेकिन कड़ी आलोचना उनकी हर रचना में नज़र आती है।

ख्याति के कारण उनकी कहानियों का हिंदी, अंग्रेजी, गुजराती और तमिल में अनुवाद भी हुआ। कन्यादान, द्विरागमन (उपन्यास), खट्टर काका (व्यंग्य कृति) के अतिरिक्त प्रमुख संग्रह प्रणम्य देवता, बीछल कथा रंगशाला, चर्चरी में भी उनका वैचारिक एवं मार्मिक लेखन सो, हुए समाज को जागृत करने का कार्य करता है।

समाज के वास्तविक स्वरूप को प्रतिबिम्बित कर व्यंग्य 'बाबाक संस्कार' किसी भी संवेदनशील व्यक्ति को झकझोरने में सक्षम है, जिसमें उन्होंने दिखाया है कि जिन पुत्रों के

जन्म और सुंदर जीवन के लिए बाबा बैधनाथ धाम में भर लोटा जल अर्पित करते रहें उन्हीं को पिता का दीर्घायु होना खटकने लगा। मृत्यु की प्रतीक्षा करते हुए एक दिन पुत्रों ने अपने हाथ से ना सिर्फ सद्गति प्रदान की पिता को बल्कि शानदार श्राद्ध कर समाज में प्रतिष्ठा भी कमाई।

"बाबा के सातों सुपुत्र अलग-अलग विचारधारा के थे। परन्तु पिता जी को जल्द सद्गति हो जाये इसमें सभी एकमत थे। रास्ते में ज्यों ही बाबा कुछ बोलना चाहते राम नाम सत्य है के ज़ोर के आवाज में बाबा का आवाज विलीन हो जाता। बाबा ऐसे कठजीव थे कि इतना होने पर भी प्राण नहीं गये। जैसे ही कुछ बोलने हेतु मुख खोले बड़ा बेटा मुंह में उक डाल दिया। सब मिलकर बाबा के कपाल क्रिया करने लगे। गाँव आ कर सातों भाई श्राद्ध का भोज किये। सात गाँव जयबार। दही, चुड़ा, चीनी, मुंगवा। जय-जय कार हो गया।

'बाबा संस्कार' से

मिथिला की संस्कृति का करीब से किया गया उनका अवलोकन, उनकी कृतियों में स्पष्ट रूप से दिखता है। हर कहानी में सर्वत्र दिखता है मिथिला स्त्रियों की घरेलू दिनचर्या। 'ग्रेजुएट पुतोहू' कहानी के माध्यम से दिखाया है जब पढ़ी लिखी कन्या बिना एक हाथ घूंघट किये जब उतरती है तो सारी गांववाली औरतें हतप्रभ होकर एक दूसरे को चिकोटी काटने लगती हैं।

अपने समक्ष पढ़ी लिखी आत्म गौरव और गुणों से परिपूर्ण युवती को देख कर ग्रामीण औरतों की सिट्टी-पिट्टी गुम हो जाती है लेकिन जैसे ही मौका मिलता है सबका द्वेष नई दुल्हन के नख शिख के आलोचना के रूप में निकलने लगता है। उस समय के क्रांतिकारी कथाओं में एक इस कथा में ना सिर्फ नव चेतना की छटपटाहट दिखती है साथ ही औरतों के वार्तालाप के जरिये उनकी मनःस्थिति का अद्भुत चित्रण भी दिखता है।

उन्होंने अपनी कहानी 'कन्याक जीवन' में एक बाल विधवा का बहुत ही कारुणिक एवं मार्मिक चित्रण किया है चौदह वर्ष की उम्र में ही एक लड़की की शादी कर दी जाती है जो कुछ दिनों के बाद विधवा होकर माँ बाप पर बोझ बन जाती है। मात्र चौबीस वर्ष की अवस्था में तीन पुत्री और एक पुत्र की माँ बनी वह युवती अधेड़ावस्था में पहुँच जाती है, जब उसी के उम्र का उसका बाल परिचित पढ़ लिख कर अपने जीवन में प्रवेश करने की तैयारी कर रहा होता है। अपने इस कहानी के माध्यम से बाल विवाह का विरोध किया है।

मैथिल समाज में चली आ रही पर्दा प्रथा एवं रूढ़िवादी विचारधारा का पुरजोर विरोध किया है 'मर्यादाक भंग' कहानी में। जब औरतें बाहरी पुरुषों के समक्ष नहीं आती थी और इस कारण कई बार खूब समस्या का सामना करना पड़ता था। 'घर जमाई' कहानी में जमाई की दुर्गति पढ़ते हुए जब हम हंस रहे होते हैं, ध्यान आता है कि वही सब हर लड़की के साथ ससुराल में होता है और किसी को गलत लगता तक नहीं।

भाषा का चुटिला प्रयोग हर तरफ पाठक को ना सिर्फ विस्मित करता है बल्कि अधर पर स्मित भी ले आता है।

"देखो! नमक और लवण एक ही चीज है। 'लावण्यमयी' बाला कहो तो प्रसन्न हो जाएगी 'नमकीन लड़की' कह दो तो सन्न रह जाएगी।"

हर तरफ मैथिली भाषा की सुंदरता बिखरी दिखती है। हिंदी का पाठक भी उन शब्दों को जानने को व्यग्र होता है "ओसारा पर छनन मनन होमय लागल।" (बरामदे पर खाना बनने, करछी चलने की आवाज़ आने लगी)

हरिमोहन झा का व्यक्तित्व पूर्वी एवं पश्चिमी संस्कृति का मिश्रण था उन्होंने अपनी पुस्तक खट्टर काका के तरंग में एक रचनात्मक नयी शैली का वर्णन किया है जो कि अन्य किसी भाषा के साहित्य में नहीं है वे आज भी मैथिली में सबसे ज्यादा पढ़े जाने वाले लेखकों में से एक हैं और जो स्थान मैथिली भाषा के पद्य में विद्यापति को प्राप्त है, वही स्थान गद्य में हरिमोहन झा का है। प्रोफेसर हरिमोहन झा का व्यंग्य निर्झरी है। व्यंग्य सम्राट की उपाधि से विभूषित हरिमोहन झा अकर्मण्यता, मिथ्यावादिता, पाखंड, आत्मवंचन पर चोट करते हुए क्रांति का एक सूत्रपात करते हैं और अन्धविश्वास के खिलाफ ज्ञान की मशाल जला जागृति का संदेश देते हैं।

मेरे मित्र

हरिहर झा

नमस्कार। मैं यहाँ कुशलपूर्वक हूँ। तेरी कुशलता की क्या बात करूँ? बचपन में जो आन बान और शान थी। शहर के बीचोबीच तेरी उपस्थिति मानो ज्ञान का प्रभा मण्डल थी। अब मैं तुझे छोड़ कर मेलबर्न शहर में आ गया हूँ। मेरे मित्र, पहले तूने ही बताया कि आस्ट्रेलिया और मेलबर्न कहाँ हैं? पर पूरी जानकारी पाकर मैं तुझसे दूर हो गया यह मेरा दुर्भाग्य है।

इधर उधर बाजार से आते जाते जब भी समय मिला तब मैं क्या सभी लोग तेरे दर्शन को आते थे और तुझसे जानकारी प्राप्त करके चले जाते थे। पुस्तकालय में सब लोग हाथ नीचा और दिमाग को ऊँचा रखते थे संसद से उल्टा। हम जैसे 'पढ़ाकू' लोगों को ढूँढना नहीं पड़ता था। घर में या मित्रों में नहीं तो कहाँ होंगे यह केवल माता पिता या मित्र नहीं पूरा शहर जानता था।

मेरे सखा, तू तो मेरे लिये स्वर्ग था। आज भी मेरी जेब में कोई सबसे कीमती चीज़ है तो लाइब्रेरी कार्ड। उस समय भी तुझसे ज्यादा सुन्दर जगह मुझे पता न थी। 'नेशनल ज्यॉग्रेफिक' के चित्रों की क्या बात करूँ मुझे तो 'चन्दामामा' से चित्रों का शौक तूने जगाया। जिन प्रश्नों के सही उत्तर किसी को भी पूछने में संकोच होता था उनके उत्तर मैं तुझसे जान लेता था।

बल्कि तेरे उत्तरों ने भी मेरे दिमाग में नये नये प्रश्न खड़े कर डाले और उनके उत्तर भी दिए। तू कभी मेरे अज्ञान पर नहीं हँसा। कभी मुझ पर चिढ़ कर नहीं कहा कि एक ही सवाल कितनी बार पूछोगे? ऐसा भी नहीं कहा कि अभी मेरा मूड नहीं है, बाद में पूछ लेना।

तेरे आगोश में मैंने धर्मयुग, साप्ताहिक हिंदुस्तान, सारिका, सरिता, विज्ञान पत्रिकाएं और अनगिनत पुस्तकें न जाने क्या क्या पढ़ा? आज जिसे मैं 'अपने विचार' कहता हूँ उसकी नींव ही तूने बनाई है। बल्कि मुझे विद्यार्थी जीवन में ही पाठक से एक लेखक और बाल कवि बना दिया। लोग तुझे विश्व का झरोखा कहते हैं पर मैं कहूँगा मेरी कल्पना को पंख देने वाला तू है वर्ना उस समय मेरी आर्थिक हैसियत भी न थी कि मैं अपने पाठ्यक्रम के अलावा कोई पुस्तक खरीद पाता।

कुछ लोग तुझे केवल समय बिताने का या मनोरंजन का साधन समझते थे पर तू ज्ञान दाता है इस रूप में तुझे वे पहचान नहीं पाए।

जासूसी उपन्यास पढ़ने का शौक तूने दिया और कम उम्र में ऐसी पुस्तकें मस्तिष्क को भटका सकती हैं यह ज्ञान भी। तू कई लोगों को पुस्तक कीट बना देता है। फिर केवल पुस्तक कीट होना काफी नहीं है व्यवहारिक ज्ञान होना आवश्यक है यह शिक्षा भी तू दे देता है।

तूने मुझे महात्मा गाँधी पर एक पुस्तक दी थी। उसे पढ़कर मैं अभिभूत हो उठा था। समझता रहा किसी का हृदय-परिवर्तन करना हो तो बस गाँधी जी के तरीके से संभव है और आसान भी।

इसका व्यवहारिक रूप से प्रयोग भी किया तब इसकी सीमा की मर्यादा समझ में आई।

आज मेरे मित्र समझते हैं कि पूरा पुस्तकालय मोबाइल में स्थित है। वे यह भूल जाते हैं कि बिना मोबाइल के एक प्रश्न की खोज के लिये जो अतिरिक्त परिश्रम करना पड़ता था उससे ही काफी ज्ञान मिलता था। सूचना को ज्ञान में ढालने का तरीका मस्तिष्क में इसी तरह स्थापित हुआ।

तूने ज्ञान की प्यास जगाई है तथा गरीब और मध्यम वर्ग की हैसियत बढ़ाई है। तू संभावनाओं का आभा पुंज है तेरी खिड़की ने मुझे अपनी आत्मा से मिलवाया और तेरे दरवाजे ने मुझे दुनिया से जोड़ दिया।

सूचनाओं की सुनामी में तैरना मुझे तूने ही तो सिखलाया। दूसरों के धर्म में, दूसरों के जीवन में और दूसरों की आशाओं और सपनों के बारे में मुझे तूने ही ज्ञान दिया। नहीं तो मैं अपने ही पूर्वाग्रहों में घिर कर चक्कर काट रहा होता। मुझे

क्या पूरी मानव जाति को तू ही अज्ञानता, अत्याचार, जेनोफोबिया और निराशा के खिलाफ तैयार करता है। तेरा परिवार ही शक्ति, बुद्धि और अनुग्रह का भंडार है। तेरे यहाँ नये विचारों का प्रजनन और क्रांति को जीवन मिलता है। तेरी ऊर्जा की झीलें गर्म भी हैं ठंडी भी। तेरे आगोश में प्रकाश ही प्रकाश है अंधेरे का नाम नहीं।

सभी पाठक व्यवस्थित रूप से तुझमें आकर शांत और लीन हो जाते हैं अचेतन से लगते हुए भी गहरी चेतना को प्राप्त होते हैं। पागल हैं जो हथियार के पीछे भागते हैं क्योंकि तुझ जैसे पुस्तकालय हथियारों के जवाब हैं।

मेरे दोस्त! सोचता हूँ अगर मैं पुस्तक होता तो किसी पुस्तकालय में होना पसंद करता क्योंकि अलग-अलग बालकों और वयस्कों के साथ जाता। अनेक पाठकों की जिज्ञासा शांत करने में आनंद लेता।

तेरे साथ अच्छी बात यह है कि यहाँ किसी की तानाशाही नहीं चलती। 'अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता' का तू ही समर्थक और पोषक है। कब और क्या पढ़ना है इसमें किसी का दबाव नहीं चलता।

भविष्य के लिये और सफलता के लिये क्या चाहिये यह सब तुझमें ही तो लिखा रहता है। लोग ठीक कहते हैं कि पुस्तकालय और बाइसिकल दोनों आगे की दिशा में बढ़ते हैं। एक ओर जहाँ तकनीकी में सबसे कुशल मशीनें पुस्तक हैं तो दूसरी ओर वे जीवन में प्रेम भी सिखाती हैं। ये लोगों का जीवन बदल देती हैं।

पुस्तकालय कभी अनावश्यक नहीं होते जैसे कि बुक स्टोर आज तक अनावश्यक नहीं हुए। कुछ नेता सोचते हैं रिसेशन में पुस्तकालय की क्या आवश्यकता है पर यह ऐसा है जैसे महामारी में अस्पताल बंद करना। यह कोई विलासिता की वस्तु है क्या? वे नहीं जानते कि अज्ञानी राष्ट्र की तुलना में पुस्तकालय सस्ते हैं।

गूगल हजारों उत्तर दे सकता है पर शोध की बात हो तो लाइब्रेरियन उसमें से एक सही उत्तर बता सकता है। वह बता सकता है कि सूचना की सुनामी में कैसे तैरा जा सकता है। ये ज्ञान के स्मारक हैं। किसी भी गाँव, कस्बे या शहर की शोभा वहाँ के पुस्तकालय से है।

मेरे सहृदय! अब मुझे पता चल चुका है कि मेरे बचपन में तेरी स्थिति जो मेरे शहर के अन्दर थी वह नहीं रही और अब तुझे शहर से दूर एक कोने में पटक दिया है। पिछली बार जब मेलबर्न से भारत तेरे दर्शन के लिये आया था तो तू अपनी जगह पर न मिला।

तेरा पता रिक्शा वाले को पूछा तो उसे तेरे अस्तित्व का कोई पता न था। मुश्किल से तुझ तक पहुँच कर तेरी दुर्दशा देख कर मैं खूब रोया। मेरा यह आँसू से भरा चेहरा देखने वहाँ लाइब्रेरियन क्या कोई कर्मचारी या कोई पाठक भी नहीं था। काफी इंतजार के बाद एक कर्मचारी आया जो मुझे देख कर आश्चर्य में पड़ गया मानो पुस्तकालय केवल उसके खोलने और बंद करने के लिये बना है।

मेरे मित्र! जैसे बालक अपने पूर्वजों से अधिक स्मार्ट होते जा रहे हैं वैसे ही आजकल पुस्तकालय स्मार्ट हो गए हैं। डिजिटाइज़ूड पुस्तकें भी रखते हैं।

मैंने अपने मौसम विभाग, मेलबर्न में देखा है जहाँ पुस्तकालय बहुत महंगे शोध आलेखों को डिजिटाइज्ड पुस्तक के रूप में कम दामों में खरीद लेता है। यहाँ से केवल विद्वत्तापूर्ण ज्ञान और सूचना ही निकलती है बनावटी खबरें नहीं निकलती। वेब पृष्ठ तो किसी के द्वारा भी बनाए जा सकते हैं उनकी विश्वसनीयता पर भरोसा नहीं किया जा सकता क्योंकि वहाँ कोई गुणवत्ता नियंत्रण नहीं।

सूचना किस स्रोत से निकली है, कुछ कहा नहीं जा सकता। इंटरनेट कोई सुगठित स्रोत नहीं है। पर तू अपने वैज्ञानिक ज्ञान में इतिहास का आदर करते हुए शीघ्रता से इतिहास विमुख नहीं होता संसद की राज्यसभा भी नहीं होती।

राज्यसभा में चुनाव के बाद अचानक विपरीत विचारधारा के सभी सदस्य नहीं आ जाते। पुरानी विचारधाराओं का राज्यसभा की तरह तुझमें भी अचानक हनन नहीं हो जाता।

मेरे मौसम विभाग, मेलबर्न के पुस्तकालय में डिजिटाइज्ड पुस्तकें भी हार्डकॉपी की तरह इश्यू की जाती हैं और वापस ली जाती हैं। पर यह ट्रान्सफर ऑन लाइन हो जाता है। देर से वापस करने का फाइन भी देना पड़ता है।

इसलिये कि ऐसी ई-पुस्तकें पुस्तकालय को लाइसेंस

समझौते के अंतर्गत ही मिलती हैं। चार प्रतियों का लाइसेंस है तो 14 लोगों को या 5 को भी इश्यू नहीं की जा सकती। यहाँ लाइब्रेरियन हमारी आवश्यकतानुसार मार्ग निर्देशन करता है जो आसान काम नहीं। उसका ज्ञान अद्‌भुत होता है। अलग अलग विषयों पर शोध करने वाले वैज्ञानिकों को मार्गदर्शन करना आसान नहीं। यहाँ बुक स्टोर वाले का तर्क नहीं चलता कि "मैं किताबें केवल बेचता हूँ इसके बारे में कुछ नहीं जानता।"

ऐसे अधिकतर पुस्तकालय तकनीकी जैसे विषय में एक ही क्षेत्र में कार्य करने वालों को मिलवाने के साधन मुहैया करवाता है।

ऐसे मेकरस्पेस 3डी प्रिंटर आदि साधनों से युक्त होते हैं जिसका लाभ विशेष रुचि समूह के हर सदस्य को मिलता है। यहाँ की पुस्तकें इंटरनेट से अधिक सुरक्षित हैं जहाँ साइबर धमकी या ट्रोलिंग नहीं होती।

आजकल मेलबर्न जैसे शहरों में स्ट्रीट पुस्तकालय का प्रचलन है। कोई उदार मकान वाला अपने मकान के आगे फ्रंट यार्ड में कम से कम एक दो दर्जन पुस्तकों का बक्सा रख देता है। सूचना लिखी होती है कि आप कोई भी पुस्तक ले जाइए, दे जाइये या शेयर कीजिये और पढ़ने का आनंद लीजिये।

मेरे मित्र, यहाँ मेलबर्न में केवल सिटी लाइब्रेरी में हिन्दी की किताबें रखी जाती हैं और मुझे अपनी पुस्तक को पुस्तकालय में देखने से बहुत खुशी मिलती है। मैं अपनी पुस्तक 'भीग गया मन' को इस पुस्तकालय में लेकर गया और कमेटी को समर्पित की।

फिर जानकर प्रसन्नता हुई कि वह सिटी लाइब्रेरी के लिये स्वीकार कर ली गई। उसी प्रकार मैंने 'गोनी चर्न्स माय हार्ट' को यहाँ की दो लाइब्रेरी में दी उसमें से चैल्टेनम लाइब्रेरी में स्वीकृत हो गई।

अब मेरे मित्र! मैं एक मनोरंजक बात बताता हू। वर्षों पहले मैं यहाँ की बेंटली लाइब्रेरी में कुछ देख रहा था। उस समय मैं आस्ट्रेलिया के एक प्रसिद्ध उपन्यासकार पीटर केरी जिसने दो दो बुकर अवॉर्ड जीते हैं उस पर आलेख लिख रहा था।

मुझे पीटर केरी के कम से कम पाँच उपन्यासों की आवश्यकता थी और वे सभी वहाँ मौजूद थे। ऐसी साहित्यिक पुस्तकें मेरे मौसम विभाग के तकनीकी और वैज्ञानिक स्तर के पुस्तकालय में कहाँ होती हैं? मैंने सोचा 'काश! मैं यहाँ का सदस्य होता तो ये घर ले जाता।'

कभी कभी तो ठीक, पर बार बार यहाँ आना मुश्किल था। घर में पढ़ने की सुविधा और समय मनमर्जी के होते है। मेरे पास न तो पासपोर्ट था और न वहाँ मेरी पहचान का कोई व्यक्ति जो आनन-फानन में पहचान करा कर मुझे सदस्य बना दे।

मैं डिपोज़िट देने के लिये भी तैयार था। मैंने लाइब्रेरियन से कहा "मैं यहाँ का सदस्य बनना चाहता हूँ।" और अपनी स्थिति बताई। उसने मुझसे ड्राइवर लाइसेंस मांगा और कहा कि डिपोज़िट की कोई आवश्यकता नहीं। फिर कंप्यूटर पर ही मेरी ओर से फार्म भर कर लाइसेंस लौटाया और दो मिनट में मुझे लाइब्रेरी का कार्ड थमा दिया जो पहचान-पत्र जैसा लग रहा था।

मैं प्रसन्न होते हुये भी कार्य इतना जल्दी होता देख कर स्तब्ध रह गया। पर मुझे तो कार्ड नहीं, आज ही पाँच किताबें चाहिए थी। मैंने झिझकते हुए लाइब्रेरियन से पूछा "इस कार्ड पर मैं आज के आज अधिकतम कितनी पुस्तकें ले जा सकता हूँ" तो लाइब्रेरियन का रूटीन स्वर में जवाब था "पचास"। मैं मारे खुशी के बल्ले बल्ले उछला पर मन ही मन।

मित्र, इस कोविड के वातावरण के बीच अपने पाठकों की सुरक्षा का ख़्याल रखना इसमें ही तेरी अपनी सुरक्षा है। भारत आते ही तेरी शीघ्र ही सुध लूंगा।

व्यंग्य, कहानी, उपन्यास की संरचना और व्यंग्य भाषा

दिलीप तेतरवे

व्यंग्यविधा की कहानी, उपन्यास या काव्य आदि की संरचना और व्यंग्यभाषा पर विचार करने के पूर्व व्यंग्य के व्याकरण और संस्कृत आचार्यों के द्वारा व्यंग्य, हास्य, आक्रोश, हँसी आदि स्वाभाविक मानवीय अभिव्यक्ति पर किए गए मंथन–विश्लेषण को देखना–समझना आवश्यक प्रतीत होता है। व्यंग्य, हास्य आदि मानव स्वभाव में हैं, किन्तु इसका काल क्रम में रूप–स्वरूप बतलता रहा है। इस आलेख का उद्देश्य व्यंग्य, व्यंग्यभाषा, और व्यंग्य के उपकरणों आदि पर एक संक्षिप्त विचार करना है।

जहाँ तक व्यंग्य का प्रश्न है, व्याकरण में उसका रूप–स्वरूप कालक्रम में विकसित होता देखा जा सकता है। संस्कृत के आचार्यों को पढ़ते हुए यह स्पष्ट हो जाता है कि समय के प्रभाव में व्यंग्य, हास्य और मानव की अन्य स्वाभाविक अभिव्यक्तियों पर असर पड़ता है और विभिन्न आचार्यगण उस असर का विश्लेषण कर, व्यंग्य और व्यंग्यभाषा को नया स्वरूप देते रहे हैं या आम लोगों और व्यंग्यकारों द्वारा नई तरह से प्रयुक्त होता हुआ पाते हैं। समय के प्रभाव में मनुष्य की अभिव्यक्ति के साथ–साथ उसके आचार–व्यवहार और भाषा में परिवर्तन आता है। आचार, विचार और व्यवहार में परिवर्तन से करुणा जनित व्यंग्य और व्यंग्यभाषा के रूप–स्वरूप में परिवर्तन आना स्वाभाविक है। सदियों से विकसित होते चले आ रहे व्याकरण में व्यंग्य की उत्पत्ति के लिए व्यंजना शक्ति के प्रयोग की बात की गई है। व्याकरणाचार्यों ने व्यंजना के अनेक रूपों से साहित्य जगत् को परिचित कराया है। व्यंग्य करुणा जनित व्यंजनात्मक अभिव्यक्ति होता है। किन्तु जब व्यंग्य को और परिपुष्ट करना होता है तब व्यंग्यकार अनेक उपकरणों का प्रयोग करता है– ये उपकरण शब्दिक भी हो सकते हैं और दैहिक भाषा के भी हो सकते हैं और निःशब्द भी। इन उपकरणों में हँसी के अनेक रूपों का भी प्रयोग होता है। मनुष्य की आँखें बहुत कुछ बोलती हैं और बोलती आँखों का भी प्रयोग व्यंग्य नाट्यमंच पर अभिनय के द्वारा और व्यंग्य की लिखित रचनाओं में विवरण के द्वारा उपस्थित किया जाता है। कई व्यंग्य नाटकों में अभिनेता अपने दैहिक अभिनय से अपने या कुछ बोलते हुए वाक्य को अधूरा छोड़ कर मौन हो जाता है और उस अधूरे वाक्य से व्यंग्य की समझ रखने वाले व्यंग्य की अभिव्यक्ति को ग्रहण करते हैं और चौंकाते हैं। यानी आधी–अधूरी अभिव्यक्ति भी पूर्ण व्यंग्य की अभिव्यक्ति बन जाती है। बानगी–

"मोहन–तुम ने मुझे मूर्ख समझा है क्या?

रघु– नहीं, इसमें समझने की ह ह ह (मौन विस्फारित नेत्र के साथ हँसी)"

रघु की पूरी अभिव्यक्ति है– 'नहीं, इसमें समझने की जरूरत ही नहीं है!' किन्तु पूरी अभिव्यक्ति की जगह अधूरी अभिव्यक्ति के बाद रघु का अचानक मौन धारण करना और उसके साथ नेत्रानिभय करना व्यंग्य को और अधिक व्यंग्यात्मक बनाता है– बिना पूरी बात कहे जब व्यंग्यार्थ उपस्थित होता है, तब वह व्यंग्य के लक्ष्य का मस्तिष्क फिरकी की तरह घूम जाता है, उसे उद्वेलित करता है और उस व्यंग्यलक्ष्य के द्वारा शोषितों, प्रताड़ितों, और कुप्रभावितों का मनोबल वर्धित करता है। यह सत्य है कि व्यंग्य अपने उपकरणों के साथ किसी भी विधा या किसी भी रस पर सवार हो सकता है। यथा वह कहानी विधा में प्रवेश कर उसके समस्त छह तत्त्वों को अपने तत्त्वों और उपकरणों की शक्ति से आत्मसात कर लेता है। इस प्रकार वह किसी भी रस या विधा पर भी हावी होकर उसे व्यंग्य का उपकरण या व्यंग्य का वाहक बना सकता है। उपकरण के रूप

में कटाक्ष, काकु, खिल्ली उड़ाना, विचित्र तुलना, टकराते विवरण, टकराते संवाद, मुहावरा, कहावत, उलटबांसी, नेत्रानिभय आदि का प्रयोग किया जाता है। व्यंग्य के लिए सादृश्य विधान का भी प्रयोग होता है। इस विधान के द्वारा किसी अचर्चित व्यंग्यलक्ष्य के अवगुण की मात्रात्मकता बताने के लिए समानधर्मी चर्चित अवगुण वाले से तुलना की जाती है– इससे व्यंग्यलक्ष्य के अवगुण के कारण उत्पन्न विसंगतियों का समष्टिगत रूप सामने आ जाता है। व्यंग्य को संपुष्ट करने वाले बिना शब्द के कुछ और उपकरण हैं, व्यंग्यात्मक हँसी, विभिन्न कोटि के हास–भाव, चेहरे या शरीर की भाषा (body language) आदि के द्वारा प्रस्तुत अभिव्यक्ति।

व्यंग्य के व्याकरण को थोड़ा और देखें– व्यंजना शक्ति शब्द के मुख्यार्थ और लक्ष्यार्थ को तजती हुई उसके मूल में अन्तर्निहित तीसरे अर्थ को व्यक्त करती है, जिसे व्यंग्यार्थ कहते हैं। वस्तुतः अभिधा तथा लक्षणा अपने अर्थ का बोध कराकर जब विरत हो जाती हैं, तब जिस शब्द–शक्ति द्वारा व्यंग्यार्थ ज्ञात होता है, उसे व्यंजना–शक्ति अथवा व्यंग्यव्यापार कहते हैं। जब अभिधा और लक्षणा–शक्ति व्यंग्यकार को अभीष्ट भाषाई प्रभाव नहीं दे पाती है, तब वह व्यंजना का प्रयोग करता है, जिससे अभिव्यक्ति में मारक शक्ति आ जाती है, विक्षोभ उत्पन्न होता है, क्योंकि व्यंजनात्मक अभिव्यक्ति शतरंज के घोड़े के समान ढाई घर वाली टेढ़ी चाल लिए होती है– टेढ़ी व्यंग्यभाषा में की गई ऐसी अभिव्यक्ति व्यंग्य के लक्ष्य को अपने व्यंग्य प्रहार से आश्चर्य चकित कर देती है, उसे सन्न कर देती है, उसे अवाक् कर देती है– लक्ष्य तत्त्व जानता है कि उसके ऊपर प्रभावी प्रहार हुआ है, उससे प्रभावित पक्ष उसकी वास्तविकता को जान गया है, जबकि व्यंग्यकार ने उसका नाम तक नहीं लिया है, बस उस विसंगतिबाज के गुण, कर्म, उससे सम्बन्धित घटनाओं, पात्रों के संवाद और सटीक व्यंजनात्मक विवरण से व्यंग्य की उत्पत्ति कर, उसकी करतूतों को अभिव्यक्त कर देता है। जनता के सामने, व्यंग्यार्थ के माध्यम से विसंगतिबाज का पर्दाफाश कर देता है। व्यंग्यभाषा लक्ष्य के लिए मारक और घातक होती है।

व्यंजना–शक्ति का प्रभाव शब्द और अर्थ दोनों पर होता है। व्यंजना शक्ति की इस विशेषता के कारण ही उसके दो भेद आचार्यों ने बताए हैं– 1. अभिधामूलक शाब्दी–व्यंजना और 2. लक्षणा मूला शाब्दी–व्यंजना। मम्मट ने काव्य प्रकाश (2/19) में लिखा है–

"अनेकार्थस्य शब्दस्य वाचकत्वे नियंत्रिते।
संयोगाधैरवाच्यार्थकृद् व्यापतिरजनम्।।"

इस सूत्र का अर्थ है कि जब अनेकार्थी शब्दों के एक अर्थ में स्थित हो जाने के बाद, जिस शब्दशक्ति द्वारा उन शब्दों से दूसरा अर्थ प्रस्तुत होता है, उसे अभिधामूलक शाब्दी व्यंजना कहते हैं। अनेकार्थी शब्दों को एक अर्थ में स्थित करने के चौदह प्रयोजन हो सकते हैं– संयोग, विप्रयोग, साहचर्य, विरोध, अर्थ, प्रकरण, लिंग, अन्यसन्निधि, सामर्थ्य, औचित्य, देश, काल, व्यक्ति तथा स्वर। दास की इस पंक्ति को देखें– "मालिनि आज कहै न क्यों, वा रसाल को हाल।" यहाँ, मालिनि साहचर्य के कारण वक्ता स्त्री की सखी प्रतिध्वनित होती है, और रसाल के दो अर्थ होते हैं– 'प्रिय व्यक्ति' और 'आम व्यक्ति'। इस वाक्य में अगर रसाल की जगह आम व्यक्ति रखा जाए तो व्यंग्यार्थ की उत्पत्ति नहीं हो पाएगी। किन्तु जब रसाल का अर्थ 'प्रिय व्यक्ति' लिया जाएगा तो व्यंग्यार्थ स्पष्ट हो जाता है– "हे सखी, मेरे प्रिय का समाचार क्यों नहीं देती हो? (हिंदी साहित्य कोष, ज्ञानमंडल लिमिटेड)। प्रयोग के स्तर और अनेक उदाहरण दिए जा सकते हैं। बानगी– "अरे वाह, आपके जैसा विद्वान को तो इस संसार में कोई कवि भी नहीं ढूँढ पाएगा! यह तो मेरा सौभाग्य है कि आप मुझे मिल गए। आपकी विद्वता के किस्से लिखकर मैं महसूस करता हूँ कि मुझे बीरबल का विलोम मिल गया है!" यहाँ 'विद्वान' का व्यंग्यार्थ है– मूर्ख! पूरी अभिव्यक्ति वक्रोक्ति (शब्दालंकार) का भी उदारहण है। कुंतक ने वक्रोक्ति को काव्याभिव्यक्ति का जीवन माना है– चूँकि उस समय साहित्यिक

अभिव्यक्ति काव्य में होती थी, किन्तु वर्तमान परिप्रेक्ष्य में वक्रोक्ति व्यंग्यभाषा का एक शक्तिवर्धक उपकरण है। रुद्रक ने वक्रोक्ति (पतवदल) को शब्दालंकार माना है। मम्मट ने अलग तरह से वक्रोक्ति को परिभाषित किया है–

"यदुक्तमन्यथावाक्यमान्यताऽन्ये योज्यते।

"लेशेण काका व षेया सा वक्रोक्ति–सतधा द्विधा।" (काव्य प्रकाश– 9/78)

मम्मट ने स्पष्ट किया है कि किसी अन्य भाव से कही गई उक्ति को दूसरे व्यक्ति श्लेष या काकु उक्ति से अन्य अर्थ कल्पित करता है तो वह वक्रोक्ति है। इसे कुलपति ने भी परिभाषित किया है–"कहै बात औरै कछु, अर्थ करै कछु और।"

अभिधामूला शाब्दी व्यंजना और श्लेषालंकार में अक्सर भ्रम पैदा हो जाता है कि दोनों एक हैं लेकिन ऐसा नहीं है। इन दोनों के अंतर पर दिलीप तेतरवे ने लिखा है–

शाब्दी व्यंजना और श्लेषालंकार दो अलग व्याकरणीय उपकरण हैं, शब्द, वाक्य और अर्थ से जुड़े, लेकिन दोनों में बुनियादी अंतर है कि अभिधामूला शाब्दी व्यंजना की प्रक्रिया में मुख्यार्थ और लक्ष्यार्थ के शांत हो जाने पर अकथित अर्थ यानी तीसरा अर्थ आता है। दूसरी ओर, बुद्धिबल से अनुभव किया जाता है लेकिन श्लेषालंकार में सभी अर्थ किसी प्रसंग के अनुरूप ही प्रतिध्वनित होते हैं। एक तथ्य यह भी है कि श्लेष में विशेष्य पद ही अनेक अर्थों का वहन करता है लेकिन शाब्दीमूला व्यंजना में विशेष्य तथा विशेषण दोनों ही अनेक अर्थों का वहन करते हैं।

लक्षणामूलक शाब्दी–व्यंजना द्वारा भी व्यंग्यार्थ की प्राप्ति होती है– लक्षणा द्वारा शब्द का मुख्यार्थ बाधित होता है और व्यंग्य की अभियक्ति होती है या शब्द का अर्थ शब्दकोषीय अर्थ से भिन्न हो जाता है। बानगी– "'वह मेरा सिर खा रहा है, मैं क्या करूँ?" इस उक्ति में 'खा' 'का अर्थ खाने के सन्दर्भ में न होकर 'झुंझलाने' के सन्दर्भ में हो जाता है। शब्द के अर्थ के तीन भेद होते हैं–वाच्य, लक्ष्य और व्यंग्य। व्यंजना के अनेक रूप–स्वरूप हैं और इसके प्रयोग से व्यंग्यात्मक प्रभाव बनाने का स्तर व्यंग्यकार की भाषाई और तार्किक क्षमता के साथ–साथ उसकी कल्पना शक्ति पर भी निर्भर करता है। जो व्यंग्यकार काकु का व्यवहार करते हैं, उनके पास तर्क शक्ति होती है। काकु तर्कशक्ति पर आधारित है। व्यंग्यभाषा भी काव्यभाषा या कथाभाषा की तरह एक विशिष्ट भाषा होती है और किन्तु अन्य कोटि की भाषाओं की तुलना में यह सर्वाधिक आयाम वाली भाषा भी होती है– इसकी प्रवृत्ति हावी होने की होती है। कामदेव उर्फ अनंग की तरह हावी होने की प्रवृत्ति रखती है। व्यंग्यभाषा मात्र व्यंजना शक्ति पर निर्भर नहीं करती, बल्कि इसके अनेक उपकरण हैं और अनेक शैलियाँ भी हैं। एक बात और गौर करने की है कि व्यंग्य एक अनंग विधा है। यह विधा ऐसी है कि यह जिस विधा पर अपना आधिपत्य बनाती है, वह उसके तत्त्वों के साथ, अपने भाषाई तत्त्व और व्यंग्य लेखन के दो तत्त्वों को मिला कर समस्त तत्त्वों को संयोजित कर लेती है। व्यंग्यभाषा का प्रयोग करते हुए व्यंग्यकार व्यंग्य के लेखन के तत्त्वों, व्यंग्यभाषा के प्रथम तत्त्व–व्यंजना शक्ति, व्यंग्यभाषा के अन्य भाषाई एवं अन्य व्याकरणिक उपकरण आदि के अनुरूप अपना स्वरूप तय करते हुए, उस विधा के तत्त्वों की आवश्यकताओं का भी ध्यान रखता है, जिस विधा पर अनंग व्यंग्यविधा अपना आधिपत्य बनाती है। जिस प्रकार परजीवी अमरलता किसी पेड़ को अपनी लताओं से बाँध लेती है और पेड़ लगभग छिप जाता है, लेकिन उस पेड़ का अस्तित्व बना रहता है। साथ ही, उस पेड़ की जड़ें वही तत्त्व माटी से ग्रहण करती हैं, जो वह अमरलता के बंधन में आने से पूर्व किया करता था– कहने का तात्पर्य ही कि व्यंग्य किसी भी विधा पर आच्छादित हो कर उसका प्रयोग व्यंग्य के वाहन या वाहक के रूप में करता है। इस प्रकार बहुआयामी व्यंग्यभाषा का निर्माण होता है।

व्यंग्य विधा व्यंग्यभाषा की मारक शक्ति के आधार पर ही, काव्य, कहानी, उपन्यास आदि विधा पर प्रभाव बनाता है। व्यंग्यभाषा, काव्य या कथाभाषा से अधिक बहुआयामी होती है। व्यंग्यभाषा और उसकी अभिव्यक्ति कमजोर और सताए लोगों के लिए मरहम लगाने वाली काठ की गोल लकड़ी होती है और, समाज के विसंगतिबाजों, विद्रूपता पैदा करने वालों, भ्रष्ट लोगों और संस्थाओं आदि का मनोबल गिराने के लिए पर काटने वाली कैंची होती है !

कहानी या उपन्यास के तत्त्वों के अनुसार ही व्यंग्यकार निश्चित करता है कि वह किस प्रकार की व्यंग्यभाषा का प्रयोग करेगा, व्यंग्य के किस–किस उपकरणों का प्रयोग करेगा और उसके साथ व्यंग्य लेखन के तत्त्वों को कैसे समाहित करेगा। उदाहरण के रूप में जब व्यंग्य विधा उपन्यास विधा पर आधिपत्य बनाती है। तो उपन्यास विधा के छह तत्त्व हैं– 1.कथावस्तु, 2. चरित्र–चित्रण, 3. संवाद 4. देशकाल या वातावरण, 5. उद्देश्य और, 6. शैली, व्यंग्य के लेखन के दो तत्त्व होते हैं–

1. कारक तत्त्व, घटना तत्त्व से जुड़ा अकर्मण्य तत्त्व। इन तत्त्वों के आलोक में व्यंग्यकार अपने उपन्यास के लेखन हेतु व्यंजना शक्ति के उचित प्रयोग पर विचार करता है, उचित शैली भी तय करता है और तद्अनुरूप व्यंग्य के आवश्यक उपकरणों आदि को ध्यान में रख कर ही अपनी व्यंग्यभाषा प्राप्त करने का अपना लक्ष्य पूरा करता है।

व्यंग्य के लेखन तत्त्वों को स्पष्ट करना भी आवश्यक है– व्यंग्य का कारक तत्त्व (लक्ष्य तत्त्व), वह होता है जिसके द्वारा स्वार्थवश अधर्म, अन्याय, भ्रष्टाचरण किया जाता है– यह कारक तत्त्व समाज का पाखंडी व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह, परिवार के अन्यायी सदस्य, किसी संगठन, संस्था, सरकार या प्रशासन का व्यभिचारी या भ्रष्टाचारी व्यक्ति या शोषणकारी नीति निर्धारणकर्ता आदि होता है।

2. घटना तत्त्व– कोई घटना–दुर्घटना, यथा रेल दुर्घटना, आतंकी घटना या प्रकृति के प्रकोप से घटित घटना यथा बाढ़, सूखा आदि हो और उसके प्रभाव से जनजीवन कुप्रभावित हुआ हो, किन्तु इस प्रभाव को दमित करने और प्रभावितों को राहत पहुँचाने की जिसकी जिम्मेदारी हो, वह अपनी जिम्मेदारी नहीं निभा पाया हो तो वह व्यंग्य का अकर्मण्य तत्त्व कहलाता है। यह अकर्मण्य तत्त्व ही व्यंग्य का लक्ष्य होता है। बानगी– "बाढ़ आ गई थी। अनेक गाँव जलमग्न हो गए थे। अनेक लोग सड़कों पर आ गए थे। बाढ़ की भयावहता को जान कर कृषिमंत्री चंटलाल बड़े दुखी थे। दुखी होते भी क्यों नहीं। दो महीने पहले ही उन्होंने हाई कमांड को एक करोड़ देकर सौ करोड़ का कृषिमंत्री पद हासिल कर लिया था और राहत मंत्री का कार्य तुच्छ समझ कर त्याग दिया था। फिर दो घटनाएँ एक साथ हो गईं। सरकार ने किसानों की कमर और अकड़ तोड़ने का निर्णय ले लिया ताकि सरकार बहादुर के पूंजीपतियों का खेती और खाद्यान्न पर पूरा कब्जा हो जाए। उद्योगपतियों को नए कारखानों के लिए जमीन औने–पौने में आर्थिक रूप से पस्त किसान बेच दें– कृषि मंत्रालय के खजाने पर सरकार बहादुर ने ताला लगवा दिया था। कृषि मंत्री की कुर्सी का मूल्य जीरो हो गया था। इतना ही नहीं कृषि मंत्री चंटलाल के गुडलक को बैडलक ने नजर लगा दी! बाढ़ आई और राहत मंत्री का पद एक झटके में पाँच सौ करोड़ का हो गया! दूसरी ओर राहत मंत्री की तो लौटरी खुल गई थी। उन्होंने राहत महसूस की चला कुछ सौ करोड़ से उनका बैंक एकाउंट तो वर्धित होगा ही! बाढ़ग्रस्त इलाकों के लोग भूख और बीमारी से मरने लगे–लेकिन उनके आंकड़े सरकार के रजिस्टर में नहीं आए। रजिस्टर करने वाला कर्मचारी तो राहत मंत्री जी के बंगले के बाग में फूल उगाने के काम पर लगा दिया गया था।" इस उद्धरण में राहत मंत्री वास्तव में व्यंग्य के लक्ष्य तत्त्व हैं, जिन्होंने राहत के धन की लूट योजनाबद्ध रूप से की।

व्यंग्यभाषा को लेकर विद्वानों के बीच विमर्श चलता

रहता है, जिसका अब परिणाम सामने आने लगा है। किन्तु इस सन्दर्भ में कोई भी विचार अंतिम हो ही नहीं सकता, क्योंकि भाषा की किसी भी शैली को पूर्णता में परिभाषित करना संभव ही नहीं है और भाषा समय के साथ बदलती रहती है।

मैंने कभी व्यंग्यभाषा की तुलना, शिव की त्रिशूल से की थी– इस उक्ति में शिव का अर्थ है– कल्याण, मंगल, मोक्ष आदि और जब मैंने व्यंग्यभाषा को शिव का त्रिशूल कहा था, तब मेरा अर्थ था कल्याणकारी त्रिशूली भाषा, जिससे राक्षस प्रवृत्ति का दमन किया जा सके। व्यंग्यभाषा और व्यंग्य दोनों मंगलकारी हों। व्यंग्य में इतनी मारक शक्ति होनी चाहिए कि समाज में विसंगति पैदा करने वालों का मनोबल गिर जाए और उसी शक्ति से लिखे व्यंग्य से प्रताड़ितों का मनोबल बढ़ जाए।

तेजी से बदलते परिवेश में व्यंग्यभाषा ने अपना विकास प्रचंड त्रिशूल के रूप में किया है, जिसकी मारक शक्ति हर दिन बढ़ती जा रही है– इस मारक शक्ति के निर्माण के लिए व्यंग्यकारों ने बहुत से प्रयोग किए हैं, बहुत–से व्याकरणीय तत्त्वों का पहले से बेहतर प्रयोग किया जाने लगा है। व्यंग्यभाषा हो, कथाभाषा हो या फिर साधारण जनों की भाषा हो, वह समय के प्रभाव में अपना स्वरूप बदलती रहती हैं। व्यंग्यभाषा में जो परिवर्तन आया है, वह व्यंग्य लक्ष्यों के पहले से अधिक चतुर और क्रूर बनने के कारण आया है जो स्वाभाविक है। इन व्यंग्य लक्ष्यों ने समाज को अत्यंत पीड़ा से भर कर ठहाके लगाते रहते हैं। इनके पास कुतर्क का खजाना बहुत विशाल होता और प्रचारतंत्र भी पुख्ता।

व्यंगज शब्द–व्यंग्यकारों ने अनेक नए शब्द भी गढ़े जिनसे व्यंग्यभाषा की ध्वन्यात्मकता या लयात्मकता (टू बी रिदमिक) बढ़ जाती है– ऐसे ध्वन्यात्मक शब्द या लयबद्धता शब्द व्यंग्य की मारक क्षमता बढ़ाते हैं और पाठक को मुस्कान भी देते हैं। कभी–कभी व्यंग्य को ऐसे शब्दों के माध्यम से हास्य की पीठ पर सवार हो कर शब्द–कोड़े चलाने का अवसर मिल जाता है। व्यंग्यज शब्दों में हिंदी के शब्दों के साथ अंग्रेजी, अरबी, फारसी आदि युग्म कर व्यंग्य को 'रिदमिक' या किसी शब्द को विकृत कर नया शब्द तैयार किया जाता है।

बानगी– "इन दिनों बहुत से नेता मल्टी नेशनल, मल्टी सिद्धांतवादी, मल्टी टंगवादी, मल्टी स्वार्थवादी और मल्टी दुष्प्रचारवादी हो गए हैं। इस कैटेगरी के नेताओं में एक सेवेंटिया गए नेता ध्रुपद जी सावनिया गए हैं, और मूनफेसियों पर बहुत्ते गौर से तकियाते रहते हैं!" इस बानगी में मल्टीनेशनल, मल्टी सिद्धांतवादी, मल्टी टंगवादी, मल्टी स्वार्थवादी और मल्टी दुष्प्रचारवादी, मूनफेसियों (चंद्रमुखियों) बहुत्ते (बहुत) तकियाते (ताकते) आदि व्यंग्यकार द्वारा सृजित व्यंगज शब्द हैं। वैसे, ध्वन्याचार्यों ने व्यंगज का जो स्वरूप उल्लिखित किया है वह है– वाचक तथा लक्षक शब्दों के अतिरिक्त तीसरा शब्द, जो दो की तुलना में अधिक प्रभावकारी या महत्त्वपूर्ण होता है। किन्तु कालक्रम में व्यंग्यकारों ने ध्वन्यात्मक और लयात्मक व्यंगजों का निर्माण किया है। व्यंग्य में भाषा के अलावा शारीरिक भाव–भंगिमा भी व्यंग्य के उपकरण हैं और व्यंग्यभाषा की मारक शक्ति को अधिक प्रहारक बनाती है। हँसी, मुस्कान, नजर आदि के भी अनेक भेद व्यंग्यभाषा को समृद्ध करते हैं। व्यंग्य के प्रकार, हँसी, मुस्कान, अट्टहास और दृष्टि के विभेदों के साथ–साथ व्यंग्य के विभेद या शैली विभेद के अध्ययन की भी जरूरत है–

अकंप हँसी– इस हँसी में हँसनेवाले व्यक्ति का शरीर कम्पित नहीं होता है। बानगी– 'कालिया ने गाली दी तो घनश्याम ने बुद्ध को याद किया और बिना हिले–डुले हँस पड़ा– बुद्ध की एक कथा है, जिसमें बुद्ध ने एक व्यक्ति से भिक्षा की याचना की तो उसने उनको गालियाँ दीं। फिर भी, बुद्ध ने उससे भिक्षा की याचना की तो वह झुंझला कर थोड़ा–सा चावल एक थाली में ले आया। बुद्ध ने उससे पूछा, 'मैंने तुम्हारी भिक्षा स्वीकार नहीं की तो तुम चावल का क्या करोगे?" उसने उत्तर दिया, "मैं इसे फिर से भंडार में रख दूँगा।" बुद्ध ने कहा, "मैंने तुम्हारी गाली भी स्वीकार नहीं की

तो?" वह आदमी बुद्ध को कुछ देर देखता रहा और फिर उनके पैरों पर गिर पड़ा, उनका शिष्य हो गया! यहाँ बुद्ध मन ही मन हंसे उस व्यक्ति पर हंसते–मुसकाते नजर आते हैं। अब कुछ ऐसे तत्त्वों को देखें जो व्यंग्यभाषा को और अधिक मारक बनाती हैं और स्वाभविक भी–

दुःख की हँसी– जब आदमी दुःख की पराकाष्ठा में हँस पड़ता है तो उसे दुःख की हँसी और अंग्रेजी में 'डार्क लाफ्टर' कहते हैं। बानगी– "जिलाधिकारी उस बूढ़ी दादी के घर खाद्यान्न सामग्री लेकर आए, जिसकी पोती भूख से मर गई थी। तब उस बूढ़ी दादी ने खाद्यान्न की ओर एक बार देखा और फिर जिलाधिकारी की ओर, और हँस पड़ी। फिर बोली, "अगर मेरी वृद्धावस्था पेंशन और मेरी जमीन पर कब्जा करने वाले के सम्बन्ध में दिए गए मेरे चालीस आवेदनों का आप निपटारा समय पर कर देते तो निश्चित ही आज आप को यह खाद्यान्न इस गरीब बुढ़िया के यहाँ ढोकर नहीं लाना पड़ता और न आपको अपना चेहरा गमगीन बनाने की मेहनत नहीं करनी पड़ती !" बुढ़िया की हँसी दुख की हँसी है, जिसमें व्यंग्य का बोध होता है।

मुस्कान– मुस्कान भी व्यंग्यभाषा को बहुत संपुष्ट करती है। बानगी– "बाँगुड़ चैलन का एंकर वाईफाई जी बेरोजगार मित्र रस्तोगी को बोले जा रहा था, 'आज तो मैंने विपक्ष की जनपार्टी के वरिष्ठ नेता प्रमोद की कमर तोड़ दी, उनके पैर उखाड़ दिए, उसकी नाक काट ली, मूंछें उखाड़ दीं– वह आज महंगे पेट्रोल–डीजल और बेरोजगारी पर उबल रहा था और मैंने उस देशद्रोही की बोलती बंद कर दी और सरकार बहादुर ने मुझे फोन किया तो मैं कुछ बोल नहीं पाया, बस सुनता रहा! मैं तो प्रमोद को बेरोजगार कर दूँगा, बेरोजगार आदमी थोड़े ही होता है। एंकर वाईफाई जी का बेरोजगार मित्र रस्तोगी उसे देख कर मुस्कुरा उठा! वाईफाई जी ने सिर झुका लिया।"

अब व्यंग्य से जुड़े कुछ अन्य पहलुओं को भी देख लेना आवश्यक है–

अट्टहास, अभिहस्य या अभिहास– अट्टहास हँसने की ध्वन्यात्मक चरमदशा है। अट्टहास घमंड में लगाया जाता है, अत्यधिक हास्य से भी मनुष्य में उद्भूत होता है, और साथ ही अट्टहास से व्यंग्य भी पैदा होता है– यह कभी शिष्ट तो कभी अशिष्ट भी होता है। किसी व्यक्ति या वस्तुओं की स्थिति को देख कर हँसने की क्रिया को अभिहस्य कहते हैं। बानगी– "जनक के दरबार में हिलते–डुलते अष्टवक्र पहुँचे तो उनकी दैहिक विकृति को देख कर जनक सहित दरबार में उपस्थित सभी विद्वान और दरबारी अभिहास करने लगे। पर जब उनका अभिहास थम गया तब अष्टवक्र ने अट्टहास लगया, और विद्वान राजा जनक समझ गए कि अष्टवक्र ने उनकी और उनके दरबार में बैठे लोगों की मानसिक वक्रता पर अट्टहास किया है, करारा व्यंग्य किया है और उन्होंने अष्टवक्र से क्षमा माँगी– किन्तु अब के राजा जनक यह नहीं समझते या समझ कर भी मुस्कुराते हैं, जैसे चोट को पचा रहे हों, नोट समझ कर !"

अतिहास–जो हास्य शंका रहित होता है, वह अतिहास कहा जाता है। केशवदास ने लिखा है–

"जहाँ हंसिए निरसंक हूँ, प्रकटहि सुख मुख वास।
आधे–आधे बरन पर उपजि परत अतिहास।।"

बानगी– "अबोध लड़की कोमल अपने सर जी द्वारा पीठ ठोकने पर, गाल छूने पर अतिहास कर रही थी– उसको लगता था कि सर जी बड़े स्नेह के साथ उससे मिलते हैं। उसे सर जी पढ़ाएँगे, उसके लिए भोजन और आवास की भी व्यवस्था कर देंगे। लेकिन उसे क्या मालूम था कि सर जी का स्नेह और सहायता बहेलिये का जाल है! लड़की का अतिहास जल्दी ही रुदन में परिणत हो गया।"

अपहसित– अपहसित अधम श्रेणी का हास्य है। अपहसित हास्य में कंधे और सिर कम्पित हो उठते हैं और आँखें गीली हो जाती हैं। यह हँसी उनके पास अधिक होती है जो अपने को श्रेश्ठ मान लेते हैं और दूसरे को निकृश्ट। अपहसित का प्रयोग व्यंग्य नाटकों में होता है। बानगी– "रावण हनुमान को देख कर हँसा,

उसके दसों सिर कम्पित हो उठे, असके कंधे कम्पित हो उठे, उसकी आँखों से जल की बूँदें छलक पड़ीं और उसने गर्जन किया, "अरे ओ वानर! तू है राम का दूत? तूने अषोक वाटिका में उधम मचा कर कैसे सोच लिया कि मैं तुम्हारी बात सुनूँगा।" वह फिर हँसने लगा।" यहाँ रावण की हँसी अतिहास का उदाहरण है।

उपहसित/अवहसित–यह एक ऐसी हँसी है जिससे कुटिलता छलकती है– उपहसित हँसने की वह क्रिया है जिसमें हँसने वाले की नाक सूजी दिखते हैं, दृश्टि में कुटिलता झलकती है और हँसते समय उसकी देहभाषा अहंकार का द्योतक हो जाता है। बानगी– "गुंडे ने कहा तुम नाचो प्यारी, हम देखेंगे, डरो मत कि नाच के बाद तेरा क्या होगा, जो होगा अच्छा ही होगा। और फिर वह हँसा और उसकी दृष्टि में कुटिलता दिखी और उसकी देहभाषा में उसके बल का अहंकार दिखा।" गुंडे की इस हंसी को उपहसित/अवहसित कहते हैं।

उपहास (ताना मारना/खिल्ली उड़ाना/कटु टिप्पणी से किसी का मजाक बना देना (तबेंजपब तमउंता)– यह व्यंग्य का प्रचलित उपकरण है और कटु भी होता है। बानगी– "महंथ जी ने कहा, 'अबे रामदास, तुमने कार खरीदने की बात कैसे सोची? अरे, तुम तो गाँव में जूते पहन कर भी नहीं चल सकते हो– गाँव की परम्परा तो तुमको ज्ञात है न?' गरीबदास ने फिर निवेदन किया, 'सरकार, कार और जूते में फर्क है।''

''हुजूर, कार खरीदने के मेरे निवेदन को अपनी स्वीकृति दें और अपना आशीष भी!' उसका उपहास करते हुए महंथ जी ने कहा, 'यह मुँह और मसूर की दाल! अरे रामदास, कार के चक्के में जो टायर होता है, वही कार के जूते होते हैं और तू उस पर बैठेगा तो कार के जूते किसके हुए? तेरे हुए न !" –यहाँ महंथ रामदास का उपहास करता है। उपहास बराबर असभ्य लोग करते हैं।

कलहास– कलहास में आदमी जब हँसता है तो उसके कुछ विचित्र आवाज भी निकलती है और मुखमंडल आह्लाद से भर जाता जाता है। व्यंग्यकार कलहास का प्रयोग किसी की खिल्ली उड़ाने के लिए करते हैं– "सुंदर देह वाले गरीब लड़के बलवंत, अमीर लड़की सोनी के प्रेम निवेदन पर बोला, "तुमकृखी, खी, खी, ही, ही, ही करती हुई मुझे 'आई लव यू' बोल रही हो, हा, हा, हा नॉनसेन्स ! मैं जानता हूँ कि तुम ऐसा निवेदन मात्र सुंदर देह वाले लड़के से कुछ दिनों के सानिध्य के लिए करती हो– लड़के तुम्हारे लिए यूल एंड थ्रो मटेरियल हैं। " बलवंत कलहास कर रहा है क्योंकि वह अमीर लड़की के प्रेम के खोखलेपन को जानता है। खिल्ली–खिल्ली उड़ाने का अर्थ होता है किसी से कटु मजाक करने की प्रक्रिया है या किसी को नीचा दिखाने के लिए बड़बोला बन जाना। बानगी– "अहा हा, हा, यह भी कोई बताने की बात हुई सुधीर, कि तुमने एमए कर लिया। आज कल तो गधे भी एमए या क्या ट्रिपल एम कर लेते हैं, डबल पी.एचडी। कर लेते हैं और किसी अंगूठा छाप के पिंजरे रूपी कारोबार में उसका फेंका हुआ चारा खाते रहे हैंकृकृतुम ऐसा समाचार दे रहे हो जैसे कि तुमने एवरेस्ट फतह कर लिया हो!"

चुटकी– चुटकी किसी पर त्वरित व्यंग्य करने की क्रिया को कहते हैं। चुटकी अल्प समय के लिए व्यंग्य या हास्य का प्रभाव बनाती है। बानगी– "अरे, आज वर्शा जरूर होगी, बादल नहीं है आसमान में तो क्या हुआ," यह जैसे ही सावन जी ने कहा, सुबोध ने चुटकी ली, "तुम तो स्वयं सावन होकृकृहा, हा, हा, वर्शा हो सकती है!

परस्थ हास्य– एक व्यकि जब दूसरे पर हंसता है या दूसरे को अपने बोल से हँसा देता है तो ऐसे हास को परस्थ हास्य कहते हैं। बानगी– "अरे प्यारी, तुम्हारी न्यारी भैंस क्या खूब गाती है, और उसके गाते ही तुम उसकी मधुर आवाज से मोहित हो कर, पायल छमकाती हुई उसे चारा डाल देती हो कभी हमारा गाना भी सुन लिया करो!' प्यारी ने पलट कर जवाब दिया, 'प्यारे जी, मुझे उस गधे की दुलत्ती नहीं खानी है, जो तुम्हारे गाने पर खूंटा तोड़ कर यहाँ दौड़ा चला आएगा!"

छिद्रान्वेषण नुक्ताचीनी करना– छिद्रान्वेषण करते हुए एक आदमी, दूसरे आदमी या संगठन आदि कर्म के रूप–स्वरूप को देखते हुए उसकी खामियों, कमजोरियों को उजागर करता है। नुक्ताचीनी भी वही छिद्रान्वेषण की तरह ही किया जाता है लेकिन उसका मकसद सदैव दूसरे को हानि पहुँचाना होता है। बानगी– "केशव जी ने अपनी पत्नी रागिनी को कहा, 'अरे, तुमने जो स्वादिष्ट चाय बनाई है, उसमें तुलसी और लौंग है, लेकिन जरा–सी चीनी और डाल देती, चाय को जरा–सा और उबाल देती, उसमें जरा–सी छाली डाल देती, जरा–सा केसर भी पड़ जाता तो मजा आ जाता !" रागिनी ने एक परचा पति केशव की ओर बढ़ाती हुई बोली, "इसमें वह अट्ठाईस आईटम लिखा हुआ है, जिसे तुम चाय में डला हुआ देखना चाहते हो, सबके कोम्बिनेशन लिखित में बता देना, चाय पट्टी कितनी लूँ, किस ब्रांड की लूँ, पानी कितना और किस ब्रांड का लूँ, पानी को कितने देर कितनी डिग्री पर गरम करूँ, कितना दूध, चीनी और छाली डालूँ!' बालम केशव दाँत निपोर कर रह गए!"आत्मस्थ व्यंग्य– खुद पर किया गया वैसा व्यंग्य जो वस्तुतः दूसरे को लक्ष्य बना कर किया गया होता है। आत्मस्थ व्यंग्य कर व्यंग्यकार अपने अंदर अपने लक्ष्य–तत्त्व के कर्म, गुण, व्यापार, व्यवहार बना कर अपने ऊपर व्यंग्य करता है और व्यंग्य–लक्ष्य व्यंग्य के चक्रव्यूह में फँस जाता है, बानगी– "अमीर मालिक धन्नामल से नौकर रामदीन ने कहा, 'हुजूर, मैं क्या बताऊँ आपको कि मेरी पत्नी मीरा मुझे क्या–क्या सुनाती रहती है– कहती है कि मैं मुनाफाखोर हूँ, सब्जी खरीदते हुए मैं अपने लिए कुछ पैसे बचा लेता हूँ। मैं उसकी कमाई भी खा जाता हूँ। मैं मोटी चमड़ी वाला हूँ, मैं अय्यास हूँ, आवारा हूँ, शरीफ बनने का ढोंग करता हूँ। अब आप ही बताएँ कि मैं पैसे बचा कर कहाँ रखूँगा? मैं तो स्विस बैंक का अता–पता, मोबाइल नंबर, कुछ भी तो नहीं जानता हूँ। मैं अय्यासी के लिए हजारों रुपए कहाँ से लाऊँगा हुजूर? हुजूर, मुझे मीरा से बचाएँ। आप तो अनुभवी हैं, आप ही मुझे बचा सकते हैं!" आत्मस्थ हास्य– जब आदमी अपने किए पर हँसता है तो उसे आत्मस्थ हास्य कहते हैं। ऐसे हास्य पर व्यंग्य की सवारी भी कराई जा सकती है, क्योंकि व्यंग्यभाषा किसी भी शैली की भाषा पर हावी हो कर हास्य के साथ व्यंग्य का प्रभाव बना सकता है। बानगी– 'अरे यार, अब क्या बताएं। हा, हा, हा, आज मैं भरी सड़क पर फिसल कर गिर गया। हा, हा, हा, गिरने के बाद पहला काम यह किया कि देखा कि कोई मुझे देख तो नहीं रहा है। हाहाहा कोई नहीं देख रहा था, हा, हा, हा अरे यार, मुझे नेता जी मनी प्रसाद याद आ गए, हा, हा, हा जो रोज गिरते हैं, लेकिन छिपा के गिरते हैं और गिर कर जो उठाते हैं, उसे स्विस बैंक में डाल देते हैं!"

चुहलबाजी– यह मनोरंजक हास्य भी होता है, जिसे हल्की–फुल्की छेड़छाड़ भी कह सकते हैं। व्यंग्य में चुहलबाजी का प्रयोग किया जाता है। बानगी– "कुषाण ने पूछा, 'अरे नेता जी, आपने तीतर या बटेर देखा है?" नेता जी ने कहा, 'नहीं, देखा तो नहीं है।" कुषाण ने कहा, "मगर, मैंने इधर आते ही आधा तीतर और आधी बटेर देखने का सौभाग्य प्राप्त किया ! मेरे हाथ में तो खुजली होने लगी! आज मेरा दिन शुभ–लाभ का दिन बन गया !" नेता जी को यह तो समझ में नहीं आया कि कुषाण ने किस पर चुहलबाजी के साथ टिप्पणी की है। नेता जी ने कुछ सोचते हुए कहा, 'अरे कुषाण, तेरे हाथ में मुद्रा तो मैं रख दूँगा, लेकिन यह तो बता कि क्या तीतर और बटेर के भक्षण से नोट कमाने की मेरी शक्ति बढ़ सकती है? अगर बढ़ सकती है तो मैं कंठी उटार कर नॉनवेज खाने को तैयार हूँ!"

अतिरंजना– किसी व्यक्ति के कर्म या उसके परिचय को बढ़ा–चढ़ा कर उपस्थिति करना अतिरंजना का उदहारण है। अतिरंजना द्वारा व्यंग्य भी किया जाता है। बानगी– "अरे साहब, आप जैसा ईमानदार मैंने जीवन में कभी नहीं देखा। आप जैसा स्पश्ट बोलने वाला, सत्यवादी भी मैंने कहीं नहीं देखा। आप आदमी नहीं, देवता हैं। आपने चालीस वर्षों में अनेक कुर्सियों

का स्वाद लिया साहब, और आप ईमानदारी से फटाफट अरबपति बन गए– इतना फटाफट तो अम्बानी अरबपति नहीं बना। साहब, आपने जिस कुर्सी को ग्रहण किया, उसे आपने अपना समझा, अपनी प्रेमिका की तरह समझा और आपके प्रेम के कारण हर कुर्सी आप पर मेहरबान रही। मंत्री की कुर्सी भी आपके इशारे पर नाची। सेठ नंगामल और चतुर जी मंत्री को आप जैसा जनसेवक नहीं मिला होगा। जनसेवक के पद पर रहते हुए क्या खूब सेवा दी आपने बड़े–बड़ों को! मेरा मन तो गदगद हो गया!"

आक्षेप– किसी पर दोषारोपण करना ही आक्षेप कहलाता है। आक्षेप करने की क्रिया में किसी के कार्यकलाप के विवरण के साथ व्यंग्य लक्ष्य पर आक्रोश और तिरस्कार करने का भाव व्यंग्य का उत्पन्न करता है। यह सामाजिक सरोकारों वाले व्यंग्य में विशेष रूप से प्रयुक्त किया जाता है। बानगी– "इन दिनों पेट्रोल या डीजल से चलने वाली लारी, ट्रक, ट्रेक्टर और अन्य मषीनों को बड़ा आराम मिल गया है– उनके अच्छे दिन आ गए हैं! मषीनों के कम चलने से प्रदूशण कम हो रहा है। मध्यमवर्गीय लोग अत्यधिक आवष्यकता पड़ने पर ही, रसोई खर्च काट कर, घर का वाटर पम्प, स्कूटर, मोटर साइकिल आदि चलाते हैं। वे अब ज्यादा पैदल चलते हैं, देर से घर आते हैं, उनके चेहरे पर हमेषा बारह बजा रहता है। उनके स्कूटर पर अब मार्केटिंग करना ऐतिहासिक कहानी हो गई है। हाँ, अब लोग खुद पेट्रोल और डीजल बन गए हैं! भूख से मरने के भय से, शरीर के पेट्रोल और डीजल के सहारे हजारों किलोमीटर पैदल चल कर गुजरात से बिहार में अपने गाँव पहुँच जाते हैं ! राजा नराधम महामना ने विकास कार्य करते हुए किसी से भेद–भाव नहीं किया है। क्या गरीब, क्या अमीर, दोनों का विकास किया है। गरीब की गरीबी भी विकसित हुई और अमीरों की अमीरी भी विकसित हुई है!" ताना– किसी की गलती रहे या नहीं रहे, लेकिन उस पर आधा–सच से युक्त टिप्पणी कर उसे उसके पूर्व के भूलों या किसी घटना को याद दिलाना ही ताना मारना कहा जाता है। ताने का प्रयोग भी व्यंग्य को परिपुष्ट करने के लिए किया जाता है। बानगी– "जनाब चोंगा जी ने फाइनल रिपोर्ट देने की कोशिश की, 'अरी तुलसी, खोट तो बलात्कृत लड़की में ही होती है। तुम्हारा बलात्कार सरेआम हुआ है। तुमने जरूर बोलने को उकसाया होगा। हमें अपने–अपने साहबजादों को तुमसे सावधान कर देना होगा। तुम तो जानती ही होगी कि एक सड़ा आम, टोकरी के अन्य आमों को भी सड़ा डालता है। तुमने अपने को बदनाम किया सो किया, मुहल्ले को भी बदनाम कर दिया है। अब हमें अपने शरीफ लड़कियों की शादी करने में दिक्कत आएगी। मैं तो अपनी ससुराल से अपनी बेटी की शादी तय करूँगा। इस मुहल्ले का नाम सुनते ही लड़के वाले लड़के की रेट ऊँची कर देंगे!"

वाग्वैदगध्य (wit)– वाग्वैदगध्य यानी किसी की बात पर या किसी की हरकत पर, बुद्धि का तत्काल प्रयोग करते हुए सटीक टिप्पणी करना। बुद्धि के तत्काल प्रयोग से वाक्पटुता आती है। व्यंग्य में इसका प्रयोग धड़ल्ले से किया जाता है– "घाघ आशिक चोंच को लगा कि बात को कुछ आगे बढ़ाने से लड़की के वीक पॉइंट को तलाशा जा सकता है। सो उससे पूछा, 'वैसे, आपके पिता जी क्या करते थे?' साहब, सोनी जवाब देने में बहुत फास्ट हो गई थी, 'उसने आशिक चोंच जी क्या खूब बताया, 'मेरे पिता जी जेल के सरकारी जल्लाद थे। अगर वे जीवित होते तो आपकी सेवा में, मेरे साथ अभी यहाँ उपस्थित होते और अपने तरीके से आपकी सेवा लेते और आपको अपनी सेवा देते!"इस आलेख के द्वारा मैंने व्यंग्यभाषा की अवधारणा, उसके स्वरूप के निर्धारण की मात्र प्रारंभिक रूपरेखा उपस्थित करने की कोशिश की है। व्यंग्य और व्यंग्यभाषा पर विस्तार से लिखे जाने की जरूरत है। व्यंग्य और व्यंग्यभाषा पर गहन शोध कर पुस्तकों के लेखन की जरूरत है, ताकि आज के व्यंग्य की संरचना और आज की व्यंग्यभाषा का स्वरूप और चिन्हित किया जा सके।

संवाद

दिव्या माथुर के साथ संवाद

डॉ. संजीव कुमार

प्रश्न 1. साहित्य सृजन में आपकी रुचि कैसे उत्पन्न हुई? किस साहित्यकार से आपको लिखने की प्रेरणा मिली?

उत्तर-मेरे दादा, बिशन दयाल 'शाद' एक बेहतरीन मुगल आर्टिस्ट और शायर थे। नामी गिरामी शायरों में उनका उठना-बैठना था, बड़े चाचा को बाल-साहित्य और छोटे चाचा को गाने-बजाने के अलावा जासूसी उपन्यास पढ़ने का भी शौक था। वे रात को सफेद चादर अपने सिर पर डाल कर हमें भूतों की कहानियाँ भी सुनाया करते थे। मेरे पाँचवे जन्मदिन पर 'चन्दामामा' का आजीवन सदस्य बना कर बड़े चाचा ने मुझे नियमित पढ़ने की आदत डाल दी थी और वहीं से शुरू हुआ मेरा छुटपुट लेखन। हमारे जमाने में उपन्यास पढ़ना और फिल्में देखना अच्छा नहीं माना जाता था, विशेषतः नवयुवतियों के लिए। बी.ए के अंतिम वर्ष में एक दिन कॉलेज से भाग कर हमने एक फिल्म, गीत गाया पत्थरों ने देखी, ध्यान अपने आस-पास बैठे लोगों पर था कि किसी जान-पहचान वाले ने देख लिया तो क्या होगा। बी.ए (अंग्रेजी) के दौरान शेक्सपीयर, चार्ल्स डिकिंस, ऑस्कर वाइल्ड, ब्रौंटे-सिस्टर्स, ईडिथ नेसबिट, जेन ऑस्टिन, अलैक्जेंडर पोप, कीट्स, वर्ड्सवर्थ और मिल्टन इत्यादि मेरे कोर्स में थे।

कोर्स की पहली पुस्तक जो हमने पढ़ी, वो थी विलियम शेक्सपियर की एक रोमांटिक कॉमेडी 'टवेल्फ्थ नाइट' (व्हाट यू विल), यह नाटक जुड़वाँ वियोला और सेबस्टियन पर केंद्रित है, जो एक जहाज की तबाही में अलग हो गए थे। यह मुझे बहुत पसंद आई उसके बाद जेन ऑस्टिन की 'प्राइड ऐंड प्रेजुडिस' ने दिल में गुदगुदी मचाई। ऑस्कर वाइल्ड का 'इम्पोर्टेंस ऑफ बीइंग अर्नेस्ट', जॉन मिल्टन की 'पैराडाइस लॉस्ट' और 'रेप ऑफ दि लॉक', शैली की 'स्काईलार्क' और 'ओड टू दि वैस्ट विंड' और भी बहुत सी रचनाएँ मुझे आज भी पसंद हैं।

लंदन आने के बाद तो मैंने बहुत पढ़ा, विशेषतः

स्थानीय क्लब 'फैब' (फिल्मस एंड बुक्स) से जुड़ने के बाद, जहां हर एक सदस्य को महीने में एक नई पुस्तक पर चर्चा करनी होती है तो पांच या छह नई पुस्तकों से परिचय हो जाता है। अलिफ शफक, पाओलो कोहलो, विलियम डैलरिम्पल, मार्खेज आदि की पुस्तकों के अतिरिक्त जो भी हाथ में आ जाए, पढ़ डालती हूँ। छः कहानी और काव्य-संग्रहों के सम्पादन, और एक काव्य संग्रह के पंजाबी, हिंदी और अंग्रेजी में अनुवाद के दौरान जाहिर है कि मैंने लगभग सभी प्रवासी भारतीय लेखकों की कहानियाँ और कविताएँ पढ़ीं हैं समकालीन लेखक-लेखिकाओं को भी पढ़ती रहती हूँ। मुझे अपने अधिकांश समकालीन लेखक पसंद हैं।

प्रश्न 2. आपकी पहली रचना क्या थी और कब प्रकाशित हुई थी?

उत्तर-1967 में भारत-चीन युद्ध के दौरान, कॉलेज के सभी छात्र-छात्राओं के लिए एन.सी.सी. में प्रशिक्षण लेना अनिवार्य था, मैंने भी उसमें भाग लिया। इस दौरान, मैंने अपनी एक कहानी, 'सदा सुहागिन', कॉलेज की पत्रिका के लिए चुपचाप भेज दी, जो भारत-पाक युद्ध के समय एक गुमशुदा सैनिक के परिवार द्वारा उसकी पत्नी पर अत्याचार ढाने की कहानी है। जब वह छप गई तो मुझे हैरानी हुई कि कैसे छप गई मेरी हिंदी की प्राध्यापिका डॉ सक्षम बेदी और मेरी सहपाठिनों ने भी उसकी तारीफ की अच्छा लगा। इसी से प्रेरणा पाकर मैंने अपनी एक दूसरी कहानी, 'वह काली', एक अंर्तविश्वविद्यालय कहानी प्रतियोगिता में भेज दी, जिसे पुरस्कृत करते वक्त स्वर्गीय सर्वेश्वर दयाल सक्सेना ने उसकी प्रशंसा विशेषताः इसलिए की कि उस कहानी की

श्याम-वर्ण नायिका की मनोव्यथा ने उन्हें इस भ्रम में डाले रखा कि वह कहानी मेरी अपनी थी। खैर, मैं उस पुरस्कार-समारोह में शामिल नहीं हुई थी। सुषमा जी के माध्यम से मुझे इस बात की जानकारी मिली तो मुझे पहली बार आभास हुआ कि मेरी कहानी ठीक ठाक ही होगी। दो दिन बाद ही हमारी प्रिंसिपल हमारी क्लास में आईं और प्रशंसा करते हुए उन्होंने मेरा पुरस्कार और सर्वेश्वर जी द्वारा भिजवाईं उनकी अपनी दो पुस्तकें भेंट कीं तो क्लास में पहली बार मेरा कुछ रुतबा बढ़ा।

प्रश्न 3. साहित्य की किस-किस विधा में आपने काम किया है? और किस विधा में आपकी रुचि सर्वाधिक है?

उत्तर-सात कविता संग्रह प्रकाशित करने के बाद मुझे एकाएक अहसास हुआ कि मैंने जो कुछ भी लिखा, स्तरीय नहीं था खुद पर ग्लानि भी हुई, पर देर आए दुरुस्त आए, कविता लिखनी लगभग छोड़ दी। कहानियाँ लिखने लगीं, कहानियां मेरे दिमाग में हर पल बना करती हैं। समय की मांग पर सम्पादन में भी जुट गई। सोचती हूँ कि मैं एक बेहतर सम्पादक हूँ हालांकि सम्पादन के दौरान मेरा अपना रचनात्मक लेखन पृष्ठभूमि में चला जाता है, जिसका मुझे अवसाद रहता है, विशेषतः अधूरे उपन्यासों को लेकर, जिन्हें पूरा करना चाहती हूँ। यह तय करना कठिन है कि मुझे अधिक क्या पसंद है, अलग-अलग समय पर मैंने अपने को अलग-अलग विषयों पर पूरी तरह से तल्लीन होते देखा है।

प्रश्न 4. आपने कविता और कहानी में चुनाव कैसे किया?

उत्तर-इस प्रश्न का जवाब तो आपको मेरे पिछले जवाब में ही मिल गया होगा।

प्रश्न 5. आप अपनी रचनाओं में विषय वस्तु कैसे चुनते हैं?

उत्तर-मेरी कहानियों का रचनाकाल एक बहुत लम्बी अवधि को समेटे है। संवेदना की विविधता की दृष्टि से मैंने एक लम्बी यात्रा की है जो बौद्धिक, भावनात्मक और भौतिक स्तरों पर रही है। जहां भारत से आकर इंग्लैंड में अपना घर बनाने के अनुभवों ने मेरे फलक का विस्तार किया, वहीं भारतीय संस्कार की गहरी पकड़ ने मुझे जीवन मूल्यों से जोड़े रखा। मेरी कहानियों के अधिकतर पात्र भारतीय हैं जो विदेशों में आकर बस गए हैं। जैसा कि केम्ब्रिज विश्वविद्यालय की प्राध्यापिका, डॉ. अरुणा अजितसरिया जी ने अपने लम्बे साक्षात्कार में लिखा है, 'दिव्या की मानसिकता पर स्वाभाविक रूप से दोनों संस्कृतियों की छाप दिखाई देती है पर यह कहानियाँ भारतीय संस्कारों से जुड़ी होकर भी नॉस्टैल्जिया की कहानियाँ नहीं हैं।

उनके पात्रों की समस्या अपने को नये परिवेश में स्थापित करने की है न कि पीछे मुड़ कर देखने की। इस दौरान उन्होंने अपने परिवेश के जीवन की विसंगतियों को संवेदनशील दृष्टि से पहचान कर आत्मभोगी की सी अंतरंगता सहित कहानियाँ बुनी हैं। उनकी कहानियों के विषय विवाद हैं। अधिकांश कहानियाँ अपने परिवेश के अनुभव खण्ड और विसंगतियों को चित्रित करती हैं। '2050' कहानी भविष्य के समाज के संभावित रूप का आंकलन करती हैं। इस श्रेणी की कहानियों में फैंटेसी का सहारा लिया गया है।

संग्रह में संकलित कहानियाँ एक लम्बी अवधि को समेटे हुई हैं जिसके फलस्वरूप उनकी रचनाओं के विषय की परिधि और शिल्प योजना एक कथाकार के रूप में होने वाले विकास को परिभाषित करती है। इस दृष्टि से यदि विचार करें तो सबसे पहले 'आत्महत्या से पहले' कहानी पर ध्यान जाता है।

'आत्महत्या से पहले' की नायिका की समस्या लेखिका की अत्यंत व्यक्तिगत समस्या होने के साथ-साथ उन हजारों भारतीय स्त्रियों की मर्मांतक पीड़ा को रेखांकित करती है जो दहेज प्रथा की बलि चढ़ाई जाकर या तो स्वयं आत्महत्या कर लेती हैं या जिनकी ससुराल वाले निर्ममता से हत्या कर देते हैं। कहानी जहाँ समाप्त होती है वहाँ से चिंतन की प्रक्रिया शुरू होती है।

'अपने व्यक्तिगत जीवन के कटु अनुभवों से तिक्त होने की बजाय दिव्या का उसे समष्टि के कल्याण के लिए प्रयोजित करना इस बात की पुष्टि करता है कि कालजयी साहित्य का निष्कर्ष उसमें सत्यं, शिवं और सुंदरं समंवित रूप से होना है।' 'अंतिम तीन दिन' में माया के मन में

अपने निर्णय के लिए एक क्षण के लिए भी दुविधा नहीं है। उसकी मानवीय संवेदना अब अपनी मृत्यु को एक महोत्सव बनाने की क्षुद्र भावना से ऊपर उठ चुकी है, उसके समक्ष जीवन को सुरक्षित रखना ही उसकी प्राथमिकता है। माया की सोच में आया यह परिवर्तन मेरी मानवतावादी जीवन दर्शन का प्रतीक है, 'मृतकों के हैं मृतक जीवितों का है ईश्वर!'

'बचाव' की निंदिया एक जागरूक नारी है, वह यदि गिलगिले लल्लन के साथ होने वाले अनमेल विवाह से बच कर लंदन आ सकती है तो बड़े साहब की वहशियत का शिकार बनने से भी प्रतिवाद कर सकती है। 'उबलते पानी की धार उनकी टांगों के बीच में छोड़' कर उनकी जोर जबर्दस्ती का प्रतिवाद करने वाली निंदिया एक स्वावलम्बी और स्वाभिमानी स्त्री है, तिलचट्टे जैसे घिनौनी हरकत करने वाले बड़े साहब के चंगुल से निंदिया का बच निकलना नारी जागरण का प्रतीक है।

वह अपनी रक्षा किसी भी मूल्य पर स्वयं कर सकती है चाहे उसके लिए नौकरी से हाथ धोना पड़े। यह वह स्थिति है जिसके लिए कहा गया है, 'साहित्यकार अपने परिवेश को इतनी तीव्रता से अनुभव करता है कि वे सारी अनुभूतियाँ उसकी अपनी हो जाती हैं और पाठक तक भी उसकी तीव्रता संप्रेषित हो जाती है।'

'फिर कभी सही' एक सामयिक स्थिति को चित्रित करती है नेहा के जीवन में एक पति था जो उसको और अपनी चार वर्षीय बेटी को छोड़कर ऑस्ट्रेलिया चला गया है, एक प्रेमी है बसंत जो स्वयं शादीशुदा, दो बच्चों का पिता और पत्नी तथा प्रेमिका दोनों के प्रति एकनिष्ठ है और तीसरा उससे प्रेम करने वाला पुरुष है विष्णु जो वर्षों से उसके लिए प्रतीक्षा कर रहा है। नेहा के लिए संबंधों की उलझी गुत्थियों को सुलझा पाना कठिन हैं।

कल्पना की अतिशयता पर आधारित कहानियों में '2050' भविष्य की फैंटेसी पर लिखी गई कहानी है, जो भविष्य के ब्रिटेन के सामाजिक रूप पर केंद्रित है। भारतीय नस्ल को धीरे-धीरे मिटाने की यह साजिश भविष्य का एक भयावह चित्रण करती है। परिषद के कठोर नियंत्रण पर आपत्ति करने पर चर्चा को आत्महत्या-परामर्श-परिषद का पता दिया जाता है जहाँ से रजिस्ट्रेशन फॉर्म लेकर वह अपना जीवन समाप्त कर सकती है।

नस्ल और रंगभेद के पक्षपात की दमघोंटू स्थिति में जीने को विवश लोग भारत लौटने के अपने अधिकार भी खो चुके हैं, 'रिपैट्रिएशन के लिए भारत सरकार अब हर आदमी का पाँच मिलियन मांग रही है। अनिल शर्मा जोशी को '2050' इतनी पसंद आई कि उन्होंने इस कहानी का न केवल नाट्य रूपांतर 'फ्यूचर परफेक्ट - इदम पूर्णम' के शीर्षक से किया बल्कि इसकी प्रस्तुति भी दिल्ली विश्वविद्यालय की नाट्य संस्था वयम द्वारा अक्षरा थिएटर में आयोजित की।

'ठुल्ला किलब' वार्तालाप-शैली में लिखी गई कहानी है। जिया और पुस्पा दो अधेड़ स्त्रियाँ अपने पति के मरने पर बेटा-बहू के पास लंदन आकर रह रही हैं पर यहाँ आकर उनके लिए समय काटना दूभर हो गया। 'मरा बुढ़ापा काटना क्या आसान है, पुस्पा, मरा टैम काटे नहीं कटता।' अपनत्व का अभाव, खान-पान का बदलाव उनके अकेलेपन को असह्य बना देता है।

अपने अकेलेपन को दूर करने के लिए पर-निंदा और पर-चर्चा ही उनका एकमात्र अवलम्ब और दूसरों की बहू-बेटियों में नैतिक मूल्यों के क्षरण की चर्चा कर स्वयं को उनसे बेहतर दिखाने की प्रबल भावना है। लंदन की संस्कृति से प्रभावित भारत से आए लोगों की सोच और रहन सहन का बदलाव उनको निरंतर आलोचना का मसाला देता रहता है, उन्हें कोसने का बहाना भर मिलना चाहिए कि वे चालू हो जाती हैं।

नवरंग थिएटर द्वारा 'ठुल्ला किलब', का नाट्य रूपांतरण, Tete-a-Tete, के शीर्षक से पहली बार पॉल रॉबसन थिएटर-लंदन में मंचित किया गया। लंदन के शुरुआती दौर में लिखी गयी इस कहानी को सबसे अधिक लोकप्रियता मिली। चित्रा मुद्‌गल जी ने तो इसे ऐतिहासिक कहानी कहा और स्वर्गीय श्याम मनोहर जोशी को इसका मूल रूप अधिक पसंद आया था, जिसमें सिर्फ संवाद थे।

प्रश्न 6. क्या आपके पात्र वास्तविक जीवन से जुड़े होते हैं या काल्पनिक होते हैं? आपका सबसे प्रिय पात्र कौन सा है?

उत्तर-मेरे पात्र कहीं न कहीं वास्तविक जीवन से जुड़े अवश्य होते हैं किन्तु मेरी रचनाओं में वे क्या रूपधारण कर लेंगे, मैं भी नहीं कह सकती। रचना के शुरू होते ही वे सचमुच के चरित्रों में ढल जाते हैं, जो मन में आता है, करते हैं, कुछ तो इतने ढीढ हो जाते हैं कि मैं चाह कर भी उन्हें बदल नहीं पाती। मेरे नये उपन्यास में दो ऐसे ही चरित्र मेरे लिये सिर दर्द बन चुके हैं, महीनों से कहानी अटकी है। उप्पेन (नायक उपेंद्रनाथ वर्मा) एक ऐसा ही कमजोर पुरुष हैं किन्तु मरने को तैयार नहीं है।

प्रश्न 7. आपकी रचना प्रक्रिया को प्रभावित करने वाले मूलतत्व क्या है?

प्रश्न 8. सामाजिक परिवेश और उसमें होने वाले परिवर्तनों से आपकी रचनाओं पर क्या प्रभाव पड़ता है?

उत्तर-इन दोनों प्रश्नों का जवाब जैसे उपरोक्त जवाबों में सम्मिलित है। अब कुछ लिखूंगी तो दोहराव होगा।

प्रश्न 9. आप अपनी कौन सी रचना को सर्वश्रेष्ठ मानती हैं? और क्यों?

उत्तर-यह तो बड़ा कठिन प्रश्न है लेखक के लिए अपनी किसी एक रचना को चुनना बिल्कुल ऐसा ही है जैसे अपने बच्चों में से किसी को एक को प्राथमिकता देना। 'फिर कभी सही', 'अंतिम तीन दिन', 'ठुल्ला किलब', 'पंगा', 'बचाव', 'साँप सीढ़ी', और '2050' का जिक्र अक्सर किया जाता है। 'नया ज्ञानोदय' द्वारा प्रकाशित 'पिछले पचास वर्षों की सर्वश्रेष्ठ कहानियों' में, 'पंगा', को चयनित किया गया। दिल्ली दूरदर्शन द्वारा 'सांप-सीढ़ी' पर एक फिल्म निर्मित की गई, ठुल्ला-किलब' और 'फिर कभी सही' नाटकीय प्रस्तुति अनेकों बार की जा चुकी है।

कहते हैं न कि, चाहे वे उसे दूसरों बच्चों के सामने स्वीकार न भी करें, माँ-बाप को अपनी प्रथम संतान सबसे अधिक प्रिय होती है तो लंदन में बसने के उपरान्त अपनी पहली कहानी, 'बचाव' को शायद मैं अपनी प्रिय कहानी कह सकती हूँ। 1985 में जब मैं लंदन आई तो कुछ वर्ष वैम्बली में ठहरी, जो मूलतः एक गुजराती इलाका है। सीधे सादे और मेहनती लोग, दशकों से विदेश में रहने के बावजूद अपनी संस्कृति और भाषा का दामन कस कर पकड़े है। ख़ैर मेरे लिये यह एक जद्दोजहद का समय था जब मैं दो नन्हें बच्चों के साथ विदेश में अपने पाँव जमाने के लिये दृढ़प्रतिज्ञ थी। मेरे लम्बे सरकारी अनुभव के आधार पर मुझे भारत भवन में एक कॉन्टिन्जेंसी-क्लर्क के रूप में भर्ती कर लिया गया। इस दौरान जिन युवाओं के संपर्क में मैं आई, यह कहानी उन्हीं के अनुभवों पर आधारित है।

इन कर्मचारियों के पासपोर्ट्स पर 'इंडेफिनेट वीजा' का ठप्पा तो अवश्य लगा दिया गया था किंतु वे सिर्फ अंतर्राष्ट्रीय कम्पनियों में ही काम कर सकते थे, जहां उन्हें डेली-वेजस से भी कहीं कम वेतन मिलता था। ज्यादा काम करने और दुर्व्यवहार सहने के बावजूद वे शिकायत करते डरते थे कि कहीं उन्हें नौकरी से निकाल दिया गया तो उन्हें अपने देश लौटना होगा।

कुछ अक्खड़ अधिकारियों और जवाबतलबी करने वाले कर्मचारियों के बीच अनबन चलती रहती थी जिसमें जीत अधिकतर अधिकारियों की ही होती। इस कहानी की नायिका भी मेरी जैसी थी- मेहनती और विवेकशील हार न मानने वाली एक सकारात्मक युवती। एक ऐसी युवती जो किसी कारणवश अपना देश तो छोड़ आई किन्तु अपनी संस्कृति, कला और भाषा को नहीं भूली। कहानी का नाटकीय अंत मुझे एक अफ्रीकन कथा के माध्यम से सूझा। वहां की स्त्रियां सुना है अपने पथभ्रष्ट पतियों के लिंग काट देती हैं।

प्रश्न 10. आजकल लेखकों द्वारा काफी कुछ लिखा जा रहा है किन्तु पाठक उतना प्रभावित नहीं हो पा रहा। आपकी दृष्टि में इसका क्या कारण है?

उत्तर-लेखन में ऐसी बाढ़ आयी है, जो उतरने का नाम नहीं ले रही। जिसे देखो, बिना सोचे समझे, बस लिख रहा है। जो थोड़े बहुत पाठक हैं, वे क्या-क्या पढ़ें, कितना पढ़ें? आधुनिक जीवन इतना तनावपूर्ण और व्यस्त है कि लोग कुछ नया, सच्चा, मनोरंजक और साहसिक लेखन पढ़ना चाहते हैं न कि वही उबाऊ सामान, संदेश और उपदेश।

प्रश्न 11. डिजिटल युग में आपको साहित्य का क्या भविष्य प्रतीत होता है?

उत्तर-डिजिटल और नॉन-डिजिटल का साहित्य के भविष्य और लोकप्रियता पर कोई असर नहीं पड़ता। धीरे-धीरे लेकिन निश्चित रूप से, पाठक जान जाते हैं कि क्या पढ़ने लायक है और क्या नहीं। घर हो या बाहर, मोबाइल फोन हो या इंटरनेट, एक बड़े से 'बिन-बैग' की सुविधा सभी के लिए उपलब्ध है।

प्रश्न 12. प्रवासी हिन्दी साहित्य की समृद्धि के लिए आपके क्या विचार हैं?

उत्तर-प्रवासी साहित्य की विशेषताएँ, जैसे मूल्यगत द्वंद्व, रेफरेंस-प्वाईंट के रूप में भारत का सतत प्रयोग, भारत को लेकर नौस्टलेजिया, पश्चिम सोच की फ्रेंकनैस इत्यादि पाठकों के लिये नयी और दिलचस्प हैं। प्रवासी रचनाओं में एक साथ प्रवासी विमर्श, पश्चिम संदर्भ में दलित विमर्श, स्त्री विमर्श और भारतीय जीवन दृष्टि, सभी कुछ विद्यमान हैं, जो लेखकों के व्यापक कैनवास और अनुभव समृद्ध जीवन का भी प्रतीक है।

वर्तमान साहित्य के सम्पादकीय में असगर वजाहत साहब ने एक सटीक टिप्पणी की थी 'प्रवासी साहित्य हमें न केवल नए और अपरिचित समाजों तक ले जाएगा बल्कि प्रवास के इतिहास और समाजशास्त्र से भी हम वाकिफ होंगे। प्रवासी साहित्य का अध्ययन हमारे पाठकों के लिए विश्व इतिहास की नई खिड़कियाँ भी खोलेगा और यह विश्वास जगाएगा कि भारतीय न केवल अपनी पहचान बनाए रखने में सक्षम हैं बल्कि वे अजनबी देश में कठिन चुनौतियों का सामना करते हुए सफल होते हैं 'प्रवासी साहित्य का अध्ययन-अध्यापन और आज हमारी बहुत बड़ी आवश्यकता है यह हमारे लिए विश्व के अन्य देशों, समाजों, संस्कृतियों तक पहुँचने की कुंजी है' यूं भी, प्रवास में लिखा जा रहा हिन्दी साहित्य भारत में लिखे जा रहे साहित्य से कई मायनों में भिन्न है। फलक बड़ा होने के कारण प्रवासी लेखकों के अनुभव और विषय वृहत हैं, भिन्न हैं अजीबो-गरीब हैं, जो भारतीय पाठकों को अविश्वसनीय लग सकते हैं, लगते हैं।

प्रश्न 13. लेखन कार्य के अलावा आपकी अन्य अभिरुचियाँ क्या हैं?

उत्तर-मेरे पिता के पास एक पुराना रिकॉड-प्लेयर था और थोड़े से रिकॉर्ड, जिन्हें हम रोज सुबह-सुबह सुना करते थे, पंडित जसराज, भीमसेन जोशी, कुमार गंधर्व और सुब्बुलक्ष्मी। जब घर में रेडियो आया तो हमारा परिचय भजनों के अलावा सुगम संगीत से हुआ, जिनमें प्रमुख थे पंकज मल्लिक, जुथिका राय, बेगम अख़्तर, किशोरी अमोनकर आदि। अपनी बीमारी के दौरान मैंने पंडित जसराज, भीम सेन जोशी और कुमार गंधर्व के भजनों को फिर से सुनना शुरू किया, मुझे बहुत सुकून मिला। अच्छी ग़ज़लों के अलावा ड्राइविंग के दौरान मैं वाद्य संगीत सुनना पसंद करती हूँ, ब्रायन सिलाज के पियानों पर बजाये पुराने हिंदी गाने अच्छे लगते हैं। इसके अतिरिक्त अच्छी फिल्म्स, भ्रमण और पुस्तकें पढ़ना भी मेरी मुख्य रुचियों में शामिल हैं। एक खर्चीला शौक है इसलिए थिएटरर्स कम ही जाना होता है।

प्रश्न 14. उदीयमान लेखकों के लिए आप क्या संदेश देना चाहते हैं?

उत्तर-लिखने से पहले अच्छे अंतरराष्ट्रीय लेखकों को पढ़ें, और पढ़ें। किसी से सुझाव मांगे तो उनसे केवल तारीफ की ही अपेक्षा न करें उनकी सलाह को गौर से सुनें, मनन भी करें।

प्रश्न 15. हिन्दी साहित्य के पाठकों की संख्या के विकास के लिए आप क्या सुझाव देना चाहते हैं?

उत्तर-बच्चों में पढ़ने का शौक बचपन से जगाया जाना आवश्यक है। बच्चों के लिए तैयार किये गये विशेष विश्वकोश, बच्चों के लिये लिखा गया अच्छा साहित्य, घुमन्तु-पुस्तकालय, इत्यादि से उनमें पढ़ने के प्रति रूचि जगायी जा सकती है। विद्यालयों और महाविद्यालयों में भी छात्रों को पढ़ने के प्रति प्रेरित करना आवश्यक है। कम से कम एक घंटा प्रति दिन उन्हें पुस्तकालय में बैठने की आदत डलवायी जा सकती है, जहां अच्छी कविता और कहानी को पेश करने वालों को आमंत्रित किया जाना चाहिए। अच्छी पुस्तकों को मुफ्त या कम दामों पर उपलब्ध करवाया जाना आवश्यक है।

पहली कहानी का लेखन : इतना भर कहना है

हरि सुमन बिष्ट

'मछरंगा' शब्द न संस्कृत भाषा का है, न स्थानीयता को समेटे कुमाऊनी का और न ही हिंदी का। यह किसी शब्दकोश में ढूंढने पर भी नहीं मिलेगा। जिसे सिर्फ इस कहानी के अवतल में ढूंढा जा सकता है, वह गहरे तल में अवश्य विद्यमान हो सकता है।

मेरा बचपन पहाड़ पर बीता वह भी रामगंगा नदी के आर पार। जिसके उद्गम के विषय में नैतिक शिक्षा का पाठ पढ़ाती पौराणिकता को समेटे एक जनश्रुति है कि आवेश में आकर भगवान परशुराम ने अपनी मां रेणुकाजी की निर्मम हत्या कर दी थी।

यह हत्या उन्होंने अपने पिता महर्षि जमदग्नि के कहने पर की। जब उन्हें अपने जघन्य कृत्य पर अफसोस हुआ तो, वह बहुत विचलित हो उठे। पिता के कहने पर मां की हत्या के पाप से मुक्ति के लिए उन्होंने तपस्या की। जिसके फलस्वरूप रामगंगा की जलधारा फूटी थी, जिसे रामरथी के नाम से जाना गया। उसके पवित्र जल से भगवन परशुराम ने मां का तर्पण किया और उस पाप कर्म से मुक्ति ले ली ताकि उन्हें आने वाली पीढ़ियां मां का हत्यारा मानकर कलंकित न कर सके। यह एक तरह से जघन्य कृत्य पर उनका प्रायश्चित था।

यह, उसी रामरथी का कालान्तर में रामगंगा का तटीय क्षेत्र है, जहां पर "जुला मालुशाही" की अमर प्रेम कथा और (वीर बालक : हीतष की शौर्य, पराक्रम और प्रेम की अद्भुत कथा का जन्म हुआ था। जो लोक गाथाओं के रूप में यहां के लोक जीवन में रची बसी हैं, जिन्होंने मेरे जीवन को समृद्धि दी है। "मछरंगा" उसी रामगंगा नदी के तट की एक छोटी सी कहानी है।

मैंने रामगंगा के इस तरफ का जीवन भोगा है तो, उस तरफ का देखा भी है। देखे और भोगे का लेखाजोखा प्रस्तुत करती कहानी मछरंगा है। इससे अधिक संभवतः और कुछ भी नहीं।

यह कहानी सबसे पहले 'भाषा' पत्रिका में प्रकाशित हुई थी, उसके बाद कई भारतीय भाषाओं में अनुदित होकर प्रकाशित हुई। इसके मंचन के लिए कार्यशालाएं हुईं। फिल्मांकन के लिए उपयुक्त समझी गई।

दरअसल, यह मेरी पहली कहानी नहीं है। इससे पहले मेरे दो कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुके थे। जिनकी कहानियां सारिका, आजकल, दिल्ली मासिक, समाजकल्याण, डाक तार पत्रिका, दैनिक राष्ट्रीय सहारा, दैनिक हिंदुस्तान और दैनिक जनयुग में प्रकाशित होती रहीं, किंतु "मछरंगा" कहानी के प्रकाशित होने पर इससे अपनी पहली कहानी होने और पहली बार कहानी के प्रकाशित होने जैसी सुखद अनुभूति हुई।

और एक अजीब किस्म का आनंद भी मिला।

जबकि नंदी की भांति अन्य कहानियों में भी शोषित, प्रताड़ित और सम्पूर्ण पहाड़ को अपनी पीठ पर ढोती स्त्री पात्र हैं, जिन्होंने मुझे महानगरीय जीवन को जीती किसी जुझारू संभ्रांत महिला की कहानी लिखने को कभी भी उत्साहित नहीं किया।

जब भी महानगरीय जीवन से जुड़ी कहानी लिखने का प्रयास किया, उसमें प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप में मेरे लेखन के केंद्र में सब्जी ठेला लगाने वाली, मध्यम वर्गीय अथवा संभ्रांत घर में झाड़ू पोंछा और जूठे बर्तन को रगड़ने में स्वयं को खपा देने वाली महिला ही आती रही।

मैं कभी उन मध्यम वर्गीय संभ्रांत महिलाओं के जो, जिनके अपने-अपने तरह के जीवन संघर्ष हैं, उनके पक्ष में उनके साथ खड़ा नहीं हो सका, एक तरह से स्वयं को असमर्थ पाता रहा, शायद यह भी हो सकता है कि उनका संघर्ष भी मुझे पहाड़ की महिला के जीवन जैसा ही कठोर और कठिन लगता रहा हो।

किंतु, कोई भी महिला कही भी रहे, उसकी अपनी तरह की एक जीवन संघर्ष कथा तो है ही, जो पहाड़ की महिला के कठोर जीवन से, किसी भी कोण से, उससे कम और भिन्न नहीं हो सकती। फिर भी, इस भाव बोध से परिचित होने पर भी मैं, स्वयं को पहाड़ के सामाजिक सरोकारों से कभी मुक्त नहीं कर सका। संभवतः इसका दूसरा कारण प्रमुख यह भी रहा हो जो, संभ्रांत परिवार का अनुभव मेरे पास नहीं रहा। या फिर संभ्रांत परिवार की कथा लिखने की रुचि मुझ में कभी इसीलिए नहीं जगी।

जबकि मेरे जीवन का बहुत बड़ा हिस्सा महानगर में बीता है, यहां की सुख-सुविधा से कभी वंचित नहीं रहा, उनका भरपूर आनंद लिया। फिर भी, महानगरीय जीवन मुझे कभी आकर्षित नहीं कर पाया। मुझे लगता है, ऐसा मैं लिखने का प्रयास करता तो, शायद वह छद्मानवेशी लेखन ही होता, जो कभी मेरी रुचि में अधिक समय तक शामिल नहीं हो सकता था।

किसी भी पृष्ठ भूमि पर लिखी कहानी की हमारे जीवन में किसी न किसी रूप में एक जरूरत रहती ही है। वह बचपन से ही हमें सभ्य और सुसंस्कृत बनाने और करने का बड़ा प्रभावशाली माध्यम रहती है।

आधुनिकता का मोह हमें हमारी जड़ों और संस्कृति से दूर न कर सके, इसके लिए हमें कंथ, किस्से, दंतकथाएं और लोरियां बचपन से ही सुनने और सुनाने का अवसर मिलता ही है। जिन्हें दादा दादी और नाना नानी की कहानी कह सकते हैं।

इन सभी को सुनने और सुनाने की एक समृद्ध परम्परा विश्व के हर समाज में विद्यमान है और अनन्त काल तक यह परम्परा निरंतरता में चलती भी रहेगी।

हर किसी को कंथ, कहानियां और किस्से बचपन के सुनाने होंगे एक दिन और छोटे बड़े समाजों की कहानियां लिखनी होंगी। इसी परिप्रेक्ष्य में "मछरंगा" एक बड़े समाज की छोटी कहानी से अधिक नहीं है!

कहानी : मछरंगा

माँ को जरा भी विश्वास न आया कि नन्दी आज खाली हाथ लौट आयी है।

पूरे दो माह से बिना मछलियों के एक शाम भी नागा न रही थी। सड़क पर काम कर रहे मजदूर दिन दोपहर में एक कारतूस नदी में दाग देते। फड़फड़ाती, उलटती-पलटती मरती मछलियों की बाढ़ सी आ जाती। जब से सड़क बनाने का काम शुरू हुआ रोज कारतूस डालने का सिलसिला भी चल पड़ा था। नदी किनारे बसे गाँववासियों का कहना था कि इसी तरह कारतूस डाले जाते रहे तो नदी में मछलियों की जाति ही नष्ट हो जायेगी। इसके लिए वे लोग काफी चिन्तित भी थे। बीसियों दफा कृष्णानन्द जोशी ठेकेदार से मछलियों के खिलाफ इस अमानवीय व्यवहार को रोकने की मिन्नतें की थीं। फिर भी उसके कानों में जूं तक नहीं रेंगी। उन्होंने कड़ा विरोध किया तो उसने स्थानीय मजदूरों को काम से छुट्टी दे दी और परदेश से आये डोटियाल मजदूरों को कारतूस डालने से फिर भी नहीं रोका।

कृष्णानन्द जोशी नामी-गिरामी ठेकेदार जो ठहरा। उसके मजदूरों को रोकने की दम-खम भला किसमें थी। बड़ी जोड़-तोड़ कर सरकार ने विकास के नाम पर सड़क की मंजूरी दी थी। लोगों को रोजी-रोटी जुटाने का साधन दिया था। तिस पर उसने साफ-साफ धमकी दे दी थी कि अभी तो कुछ ही मजदूरों को काम पर से निकाला है। इलाके वालों का इसी तरह का विरोध रहा तो वह कार्य बन्द करवा देगा। और सरकार को भी लिख देगा कि यहाँ के लोग सड़क निर्माण के पक्ष में नहीं हैं। अब भला कौन मुँह लगता उस ठेकेदार के? कौन विरोध करता? कौन नहीं चाहता इलाके का विकास? और किसकी इच्छा नहीं हो रही थी हाट-बाजार से सौदा-पत्ता, लत्ता-कपड़ा खरीदकर, बस या ठेले में चढ़ाकर घर आँगन पर उतारने की।

मगर ठेकेदार की ऐसी दमनपूर्ण कार्यवाही से स्थानीय मजदूरों का चिन्तित होना स्वाभाविक था। उनकी विरोध की तेजी कम हो गयी। एक बार काम पर से निकाले जाने के बाद पुनः शामिल करने की सख्त मनाही कर दी थी। इससे

और अधिक भय उन मजदूरों को खाने लगा जो अभी काम पर थे। उनकी संख्या अधिक नहीं थी, काम में भी गतिरोध आ गया। ठेकेदार ने डोटियाल लाने की सोची, और लेने भी गया था रानी खेत, अल्मोड़ा और रामनगर ही डोटियालों के अचस्रे ये। वहाँ एक भी मजदूर नहीं मिला। आखिर उसने भैरव को दो दिन की मजदूरी नये मजदूर ढूंढने की दी थी। उसने भी काफी प्रयास किया था, लेकिन कृष्णानन्द जोशी ठेकेदार के व्यवहार से लोग दुखी थे, नाना प्रकार की चर्चाएँ कर रहे थे, काम पर आने की अपनी स्पष्ट राय कोई भी नहीं बना पा रहा था। तभी नन्दी को भी भैरव ने मजदूरी करने के लिए कहा था।

नन्दी भी सहमत होकर काम पर आने लगी थी। जब वह पहले दिन काम पर आयी तो उस दिन भी नदी में कारतूस डाला गया। किसी ने उसका विरोध भी नहीं किया था। तड़फड़ाती मरती मछलियों को वह रौखड़ में खड़ी देखती रही थी। उसके देखते ही देते मरी मछलियों की ढेरियां-सी बन गयी थीं। हरेक मजदूर ने उसे भी मछलियाँ थमा दी थीं।

मछलियाँ पाकर नन्दी को प्रसन्नता हुई और आश्चर्य भी। उसने बड़ी और छोटी मछलियाँ इतनी मात्रा में पहले कभी नहीं देखी थीं। उसने सोचा, देर-सी मछलियों को लेकर क्या करेगी? वह ले भी जायेगी कैसे? घर में मछली खानेवाले हैं भी कितने लोग। सिर्फ दो वह और उसकी बूढ़ी ईजा (माँ)। दो मछलियाँ ही काफी थीं। लेकिन वह किसी मजदूर के मछली देने पर लेने से इन्कार भी नहीं कर सकी। उसने सोचा, सुबह काम पर आते समय उसे मालूम होता तो घर से खारि साथ लेकर आती सारी मछलियाँ घर ले जाकर माँ के सामने रखती हुई कहती, 'ये लो मछलियाँ ईजा। आज तक तुम असहाय थीं, तुम्हें पड़ोसी देने आते थे तो फौरन उनके आगे हाथ फैला देती थीं। इसलिए कि तुम्हारा हाट-बाजार और नदी-पहाड़ जाने वाला कोई नहीं था। अब चिन्ता खत्म, आज तुम पड़ोसियों के घर मछली दोगी। दोगी न ईजा!' रौखड़ में बैठी नन्दी मन-ही-मन बहुत प्रसन्न हुई थी। उसने एक नजर अपनी कमर पर और दूसरी बार में सिर में रखे धोती के पल्लू पर टिकायी। पल्लू चौड़ा नहीं था कि मछलियाँ उस पर बाँध सकती और न उस धोती में ही इतनी जान थी कि वह मछलियाँ ढो सके। वह असमंजस में पड़ गयी। एकाएक चेहरा भी फीका पड़ गया। वह सोचने लगी कि उसके पास सिर ढकने को तो सिर्फ यही एक धोती है। यह भी किसी से मांगी हुई। यदि यह मछलियों में मानी मानी होकर तथा उनके वजन से तार-तार हो गयी तो सिर ढकना मुश्किल हो जायेगा। वह काफी देर तक सोचती रही और धोती का चिन्टी चिन्दी होकर उड़ने का दृश्य उसकी आँखों में तैरने लगा उसी पल मन में एक और विचार के जन्मते हो जैसे उसकी सारी उलझन फुर्र हो गयी थी। वह खिलखिला उठी। आज तो लोग उसे भी मछुआ ही कहेंगे। क्योंकि किसी भी मछुआरे से कम मछलियाँ नहीं हैं उसके पास। उसने झटके से मछलियां रोखड में फैला दी थी।

लगभग सभी मजदूरों ने अपनी-अपनी खारि की मछलियां समेट ली थी। लेन-देन भी हो चुका था। घर लौटने की उत्सुकता बनी हुई थी। सभी की नजरे नन्दी पर टिकी हुई थी। मजदूर उसका इन्तजार कर रहे है इसे नन्दी भी भलीभाँति समझ रही थी। उसने कमर में बंधी धोती खोली और चोरी करके रोखड़ में बिछा दी। फुर्ती से सभी मछलियाँ उसमें रख भी दी। गाँठ लगाने का प्रयास किया तो धोती दो-तीन जगह से चिरचिरा उठी। उसके हाथ अटक गये। लगा, धोती का पल्लू नहीं बल्कि उसके शरीर को चमड़ी चिरबिर कर रही है। नन्दी, जल्दी करो न अबेर हो रही है। यह स्वर किसी मजदूर का उसे सुनाई पड़ा। उसकी बेतना भी लौट आयी लेकिन इसी बीच भैरव ने भी उसे जल्दी करने को कर दिया था। उसने जो में गठरी बाँधी और किसी अनुरोध को प्रतीक्षा किये बगैर उसे उसका कर चलने लगी।

मजदूरों ने भी अपनी अपनी खारियाँ उठायों और रौखड़ के एक बड़े पत्थर पर बैठे कृष्णानन्द जोशी ठेकेदार से राम-राम सेव कहते चलने लगे। ठेकेदार नीचे उतर आया।

मजदूरों की राम रमों पर वह हँस पड़ा। सभी शक्ति हो उठे। हँसने की वजह कोई भी नहीं समझ सका नन्दी जो आगे-आगे चलने लगी थी उसके पाँव रुक गये उसे न मालूम क्यों आभास हुआ कि जोशी ठेकेदार उसका गरीबों का हंसी उड़ा रहा है।

सोचता होगा, लाज शरम तो मछलियों की गठरी के

साथ बांध दी है। और बिना कार्य को खाली नगी बोतल मी चल रहा है दान में मिली मछलियां की गठरी उठाये। उसका मन दुखी हो उठा और उसकी हंसी पर भी आया इच्छा हुई कि गठरी नीचे घर कर उसमें की सारी मंडलियों का एक एक कर उसके मुँह पर मार दे और कहे मेरी खिल्ली क्यों उड़ा रहा है उदार में मछलियाँ भीख में नहीं मांगी है। किसी के आगे हाथ नहीं फैला है। ये तो सभी ने मुझे अपनी समझ कर दी है। मैं भी सुबह की आयी इस वक्त तक इनके साथ खटती रही हूं। मजदूर हूँ। हम लोग ही आपस में मिलबाट न खायेंगे तो क्या तुझे देंगे। चलो यह बात भी नहीं। आज तक में मजदूरी करने न आयी तो बिना मछलियों के हमारे हलक में सूखी रोटियों थोड़ी नहीं उतरीं। मैं पूछती हूँ लेकिन उसके होंठ नहीं हिले। मुँह बाये खड़े ठेकेदार को नजरअन्दाज करती हुई-सी वह आगे बढ़ी थी।

आज तुम्हारे काम पर आने का पहला दिन है। एक मछली मुझसे भी ले जाओ। तुम्हारा बाप जिन्दा होता तो उससे कहना भी न पड़ता। तुम भवानी को ही लड़की हो न? वह तो खुद ही छीनकर ले लेता। जोशी ठेकेदार ने उसे रोकने हुए कहा और पहले से ही पत्थर की ओट में रखी खारि को खोलने का प्रयास करते हुए बोला, फ्लो, अपनी पसन्द की मछली ले लो।

नन्दी हकबक। उसे तो अब एक मछली की भी जरूरत नहीं थी। सिर में धरों पड़ी गठरी की जरूरत भी नहीं थी। वह पसोपाश में फँस गयो। ठेकेदार को टालना चाहा और बोली- सैब, मुझे अब मछलियाँ नहीं चाहिए। क्या करूंगी। खाने वाले दर्जनों थोड़ा है घर में। ईजा के लिए तो सिर्फ एक ही काफी है। ठेकेदार उसकी बात पर मुस्कराते हुए बोला, ये भी कोई मछलियां हैं? मैंने देखी थी सारी की सारी। यह देख इन्हें कहते हैं मछलियाँ। कहते एक एक मछली को उलटा-पलटाकर दिखाने लगा जैसे नन्दी से पूछ रहा हो यह मछली ठीक है। इसे ले लो। नहीं, नहीं, यह ठीक नहीं इस पर कांटे होते हैं। नगर स्वाद– यह ठीक रहेगी इस पर एक ही काँटा होता है, इसे ले लो। उसने सबसे बड़ा कणचुला निकाला और नन्दी को थमाते हुए बोला, अपनी इंजा को दे देना मेरी ओर से। कहना, ठेकेदार ने सिर्फ तुम्हारे लिए दी है। नन्दी के चेहरे की खुशी जो गायब सी हो गयी थी वह फनः लौट आयी। वह सोचने लगी, ठेकेदार सैब ठीक कहते हैं। ये भी कोई मछलियाँ है? मुझे एक भी ढंग की नहीं लगती, सारी की सारी 'कित' को ही लोग दान में देते हैं। इन किलों को तो यह बड़ी मछली खाती होगी-इसीलिए मोटी ताजी है। उसने सिर में को गठरी नीचे रखी और जोशी ठेकेदार का दिया हुआ कणचुला भी उसमें बांध दिया और खुशी से दोहरी हुई अपनी नटखट चाल से बढ़ने लगी।

माँ घर पर बहुत चिन्तित थी।

मजदूरी पर जाने का नन्दी का वह पहला दिन था। उम्र ही क्या थी, अभी तो खाने-पीने और खेलने के दिन थे। छोटी ही उम्र में पिता का साया उठ गया था। इसलिए तो बूढ़ी माँ का पेट भरने के लिए उसे बेलचा, फावड़ा और कस्सी थामने पड़े थे। माँ के दिल में अनेकों संशय जन्म ले रहे थे। कहीं हाथ में छाले न उभर आये हों, कहीं पाँव पर कस्सी न आ लगी हो। माँ दुःखी हो रही थी। दिन-भर में अन्न मुँह न छुआ था इकलौती लड़की को मजूरी पर भेजना उसे उचित न लगा था। वह सोचने लगी थी कि इस उम्र में ही नन्दी टूट जायेगी तो उसका जीवन फिर चौपट हो जायेगा।

पहाड़ी पर बने सर्पीले आकृति के बटाहे पर दृष्टि जमाये वह चौंथर पर बैठी रही थी। आने-जाने वालों को घूरती, पहचानने का प्रयत्न करती और हरेक से पूछती रही कि कहीं पर उन्हें नन्दी तो नहीं दोखो वह थकी हारी इस जानलेवा चढ़ाई। को भी चढ़ पा रही होगी या नहीं।। कण्ठ को पानी मिला भी होगा या नहीं! उसका सम्पूर्ण मातृत्व चेहरे पर उमड़ आता था। आखिर उसे भैरव के साथ नन्दी लौटती दिख पड़ी। चेहरे का रंग लौट आया और उसके मन को धुकधुकी कम हुई थी।

चौथर के कोने पर नन्दी ने हौले से गठरी रखी और फिर माँ की तरफ सरका दी।

माँ को आश्चर्य हुआ। भीनी-भीनी मछैन से उसे भास हुआ कि नन्दी के बौज्यू के इस घर से उठने के ठीक पाँच बरस बाद आज वह जमकर मछलियाँ तलेगी और फिर जी भरकर झोल पीयेगी। वह बोली, नन्द, सुबह तेरे काम पर जाने के बाद कोली से सरसों के बदले तेल ले आयी थी,

सोचा तू पहले-पहल काम पर गयी है। शाम को दो पूरियों उतार लूँगी।

आखिर भगवान का नाम लेने पर ही तो जन-धन में बरकत होगी। और देख आज तू काम पर गयी तो नदी को सारी मछलियाँ समेटकर ले आयी। कभी तेरे बौज्यू भी ऐसी ही मछलियाँ लाते थे। सारे इलाके वाले उन्हें मछीबाज कहते थे। मछली पर नजर पड़ती तो वे झट से नदी में पैठ जाते। जब तक उसे अपनी खारि में न रख लेते तब तक पीछा करते रहते। सच में थे वे मछीवाज ही।

माँ ने एक लम्बी साँस ली, बौज्यू के विषय में बताते उसका कण्ठ भर आया। नन्दी के मानस पटल पर भी एकाएक बिजली-सी दौड़ गयी और माँ के मन के भँवर का एहसास कर वह बोली, ईजा, तुम भी किस बात को लेकर बैठ गयी हो इस समय।

तुम तो कह रही थी कि आज खुशी का दिन है। खुश रहने पर ही धन में बरकत होती है। और गठरी की गांठ खोलती हुई वह बोली, ईजा, इतनी मछलियां तुमने कभी देखी थीं क्या?

अरी इतनी मछलियां-ढेर सारी और इतनी छोटी और बड़ी भी। और इतना बड़ा कण चुला! मां ने आश्चर्य से कहा था। कणचुला माँ को थमाती हुई नन्दी बोली, यह तुम्हारे लिए ही दिया है ईजा सिर्फ तुम्हारे लिए। किसने?

माँ ने तपाक से पूछा था।

तुम्हीं बताओ न किसने दी होगी? माँ ने अपने मस्तिष्क पर जोर दिया और फिर बोली थी,

किसने दी तू ही बता देना।

ठेकेदार सैब ने, बताती हुई नन्दी मुलमुलायी थी।

ठेकेदार सैब ने, उन्हें अब भी मेरी याद है। अरी वह इन्सान नहीं देवता हैं। तेरे बोज्यू कहा करते थे-बड़े घर का लड़का है न-बड़ी लियाकत है उसमें। कभी वह बहुत बड़ा ऑफिसर बनेगा।

उन दिनों वे पाली पढ़ने जावा करते थे। सुना, अब तो उन्होंने सारे काम का इलम ले लिया है। अपने बीज्यू को घर पर बिठाकर खुद धूल-माटी में सनने को सड़क पर आते है। तेरे बोज्यू आखिरी दम तक उसके गुण गाते रहे थे।

बौज्यू क्या कहते थे ईजा? नन्दी ने शालीनता से पूछा।

यही जो इन्सान होते हैं वे छोटे-बड़े का, ऊंच-नीच का विचार नहीं करते। वे सब को एक आँख देखते हैं-तेरे बौज्य पर उसकी नजर पड़ती तो दूर से बुला लेते थे। कहते, यों ही मरते-खटते रहोगे, कभी बैठकर बीड़ी भी पी लिया करो। काम तो जीवन-भर करना है। दिन में जब भी खाना खाता तो उन्हें समीप बुलाकर कहते। मैं वामण हूँ तो क्या हुआ, तुम्हारे साथ खाना खाने में मुझे जहर तो नहीं चढ़ जायेगा।

नन्दी बीच में ही बोली, अच्छा, ये ठेकेदार सेब ज्यू ऐसा कहते थे! तभी तो।

हाँ चेली...मां ने अपना वाक्य अधूरा छोड़ दिया था। दिल भारी हो आया। उसे दुःखी होते देख नन्दी बातों का रुख बदलती हुई बोली, एक बात बतायेगी ईजा!

क्या? माँ ने अपनी पलकें उठाकर पूछने की मुद्रा में कहा- और फिर एकाएक गम्भीर होकर ठेकेदार की भेजी हुई मछली को वह उलट-पलट कर देखती हुई बोली, अरी तेरी किस्मत चेत गयी, इसके तो मोती होगी।

मोती, नन्दी ने आश्चर्य से कहा—

हाँ, मोती। कहते हैं बड़ी मछली के पेट में गुलाबी रंग की घुघची की तरह होती है। किसी बड़भागी के ही हाथ लगती है। यह ले पकड़। माँ ने ठेकेदार का दिया कणचुला नन्दी को थमा दिया और खुद सरपट चूल्हे की तरफ बढ़ गयी। उस दिन उसके उठने में फुर्ती तथा चाल में रवानगी थी। थोड़ी ही देर में सारा घर भीनी-भीनी मछैन से महक उठा।

माँ ने चाव से मछलियाँ खायों और झोल पिया था

तब से नन्दी रोज काम पर जाती।

रोज फावडा, बेलचा, कस्सी चलाती और पत्थर ढोती।

रोज नदी में कारतूस डाला जाता और ढेर सारी बड़ी-छोटी मछलियाँ आत्मत्याग कर लेती।

मछलियाँ बटोरी जाती और घर-घर में तली जाती। रात का खाना-पीना कर लेने के बाद रोज की भाँति मां भी कहावत दुहरा देती-मछलियाँ कहती हैं, इस जन्म में तुम मुझे खा लो और अगले जन्म में तुम्हें मैं खाऊँगी।

माँ से कहावत सुनकर नन्दी खिलखिला उठती कहती,

ईजा, इस जन्म में भर पेट खा लो, अगला जन्म किसने देखा है!

फिर मछलियों को लेकर बीसियों बातें होती-उनकी आँखों को लेकर, गलफड़ों को लेकर और मलमलाते शरीर को लेकर सुबह उनकी आँखें खुलती जब घर के आँगन में लोगों की आवाजाही शुरू हो जाती। गाँव के बुजुर्गों की खाँसी खुर्रा की आवाज वातावरण को चहका-सी देती। और फिर कभी-कभी तो बटोही आवाज देकर जगा देते-अरी ओ नन्दी-अरी ओ नन्दी की ईजा! क्या खाकर सोयी हो। अब तक जो दरवाजे नहीं खोले।

फौरन नन्दी उठती और घर्र घर्र करते दरवाजा खोल देती। यह सोचकर कि बटाहे का घर है। सुबह का बन्द दरवाजा अच्छा नहीं दीखता।

दैनिक कार्य प्रारम्भ हो चुके होते हैं-पानी पनेरा, चूल्हा-चक्की और ओखल। घसियारियों की कमर में बरेता और हाथ में छुनकों वाली दराती। वे जंगल को जाने लगतीं। नन्दी का मन भी सहेलियों के संग-संग गाड़-गधेरे, बग-जंगल जाने को करता। वह भी रोज कमर में बरेता दाती की और हाथ में दरांती मगर उसके पाँव जंगल की राह नहीं पकड़ते थे। कोई संघ सल नहीं होती। आगे-आगे भैरव जाल उठाये चल रहा होता, तो अनुसरण करती वह स्वयं होती, खार और तुम्बे लिये भैरव के संघ उसे हवा में हाथ हिलाते चलना अच्छा नहीं लगता था। उसके कहे बगैर ही वह खारि और तुम्बे ले जाती थी। तुम्बे भी पूरे आठ। भैरव ने उसे बताया कि पिछले साल 'डहव' के समय भी उसके पास इतने ही तुम्बे थे। जब उन्हें कमर पर बांध कर वह नदी के गहरे पानी में उतरा था तो किसी मछुआरे का जाल उसके ऊपर फैल गया। जाल को गेड़ियों से उसके दो-तीन तुम्बे चटक गये। नदी की मझधार में संतुलन बिगड़ गया। तेज बहाव संभलने की हरदम कोशिश फिर भी वह एक तरफ को लुढ़क गया था। बाची कलाई पर लिपटी जाल की डोर खुल गई और जाल अपनी गेड़ियों के भार से डूबता गया। और उसने गोता खा लिया। काफी देर डूबा रहने के बाद मछुआरों ने उसे निकाला था। इस बार भी वही आठ तुम्बे उसने लिये थे। एक नये फिर भी वह शंकित सा रहता। कारतूस दागने का संकेत मिलने के पहले हो तुम्बों की जांच-पड़ताल कर लेता एक बार नहीं कई बार, बल्कि जब तक उसके मन को संतुष्टि नहीं मिलती।

नन्दी एक नजर भैरव पर टिकी तो दूसरी नजर उसके दूर पत्थर पर रखे मैले कुचैले कपड़ों पर। बदन में मैली-काली-कलूटी, धूल-मिट्टी में सनी चार इंच चौड़ी लंगोट को देखकर तो वह शर्मसार-सी होती। उसे भैरव किसी से कम नहीं लगता था। छः फुट लम्बा पट्टा जवान, नंग-धड़ंग, हाथ में भारी जाल कमर में तुम्बे और खारि, एक नजर देखने के बाद उसकी नजर उठ नहीं पाती।

कारतूस के दागने का स्वर चीखता हुआ फैल जाता।

भैरव जाल उठाता और नदी की ओर चल पड़ता। और उसके पीछे दो मजदूर भी चल पड़ते। एक रोज भैरव के जाते समय नन्दी की नजर एकाएक मोड मुड़ते ठेकेदार जोशी पर जा पड़ी थी। वह परायी कहीं ठेकेदार को रोक-टोक न दे। उसने धीरे से भैरव को संकेत किया और बोली, ठेकेदार आ रहे हैं।

तो आने दे मेरा क्या कर लेगा साला। सबों की भाँति गेरो भौ मजूरी काट ले। यह कोई आने का समय है क्या? सुबह से ही आ जाता। ठेकेदार को यह नहीं मालूम कि अब काम बन्द करने का समय हो चुका है। कहता भैरव सड़क के नीचे उतर गया।

और नन्दी उसे जाता देखती रही।

कुछ मजदूर ठेकेदार को आता देखकर झेंप से गये। उसके पहुँचने पर हाथ जोड़कर सेवा भाव दिखाने लगे।

मछुआरे रौखड़ में उतर चुके थे। जाल की गेड़ियाँ बज उठी, रामरौला शुरू हुआ। मछुआरे नदी में उतर गये।

नन्दी ने ऐसा माहौल पहले कभी नहीं देखा था। देखना भी सम्भव नहीं था, नंग-धड़ंग पुरुष और अण्ट-बण्ट का माहौल भैरव की प्रतीक्षा करना उसे उचित न लगा।

वह घर को लौट गयी।

मां रोज ही प्रतीक्षा करती थी। अबेर होने पर उसके हंस-प्राण निकलने को होते। चौधर में खड़ी उचक-उचक कर वह देखती रहती। खिड़की से झाँकती तो नदी का रौखड़ साफ दीखता था। मछुआरे चींटियों की तरह कुलबुलाते जान

पड़ते, उन्हें देखकर उसको चिन्ता बढ़ जाती। जब नन्दी के बौज्यू जिन्दा थे उसने मछुआरों के विषय में बहुत कुछ जाना-सुना था।

वह मन ही मन कोसने लगती, ये मर्द अपने सगे किसी के नहीं होते। बड़े बेशर्म, बे-आबरू और इनकी कौम बड़ी जलील होती है। औरतों को तो ये खिलौना समझते हैं। मौका मिलते ही ये कन्या हो या औरत किसी को भी नहीं छोड़ते। भैरव की जिद्द न होती तो कभी मजूरी करने नहीं भेजती इस तरह।

आखिर नन्दी पर उसकी नजर टिक गयी।

अभी मछुआरों ने घाट नहीं छोड़ा था। नन्दी घर पर पहुँच गयी।

और दिनों की अपेक्षा जल्दी घर लौटने पर उसने गागर उठायी और नौले पर चली गयी। सहेलियाँ जल्दी घर लौट आने का कारण पूछने लगी।

नन्दी से कोई उत्तर नहीं बना। वह सड़क पर मजदूरी करने जाती है यह सभी को पता था। काम खत्म करने पर कारतूस डाला जाता है यह भी किसी से छुपा नहीं था। नन्दी खारि व तुम्बे ले जाती सभी ने देखी थी, उससे ठट्टा करती हुई बोलीं : अरी अभी अण्व्या ही है तो क्या हुआ उम्र तो हो चुकी है न? ब्याह हो चुका होता, तो यों भटकती नौले पर न आती। अरी तू तो बड़ा भाग्यवान हे नन्दी। मर्दा का असल रूप तूने इस उमर में ही देख लिया होगा।

अरी नहीं देखा भी होगा तो कल देख लेगी। फिर यहाँ पर आकर सभी को बता देगी, कि लंगोट के सिवाय और क्या देखा।

अरी ठेकेदार तो देख ही लिया होगा, एकदम कृष्ण कन्हैया है। मगर रंग रूप में नहीं। गोरा चिट्टा है मैं होती तो कृष्ण के बजाय कृष्णानन्द जोशी पर लट्टू होती।

हाँ, हाँ, क्यों नहीं, बड़ा सेठ है। कम से कम एक साड़ी रोज लाकर देता। साड़ी ही क्यों सब कुछ लाकर दे देगा। अरी कुछ माँगकर तो देख माँगेगी न? क्या माँगा हमें भी बताओगी न? नन्दी क्या उत्तर देती, सिर्फ खिलखिलाने के दिन की थकी-हारी महिलाएँ इसी नौले पर स्वच्छंद कहती सुनती थीं। कुछ देर नन्दी से भी कहने का मौका मिल गया था। एकाएक माहौल का रुख बदलती हुई नन्दी से बसंती बोली, अरी तेरे काका भी आ चुके हैं क्या? मैं तो कब से बैठी हूँ। बड़ी मुश्किल से अब बारी आयी है गागर भरने की। वह घबरा उठी थी।

नन्दी को देखकर उसे भैरव को याद आ गयी, वह बुदबुदायी, भैरव घर पर आकर पानी माँगेंगे तो वह भी नसीब न होगा। और फिर खैर नहीं। भैंस की तीस भैरव की रीस तो अब मिसाल बन चुकी थी। वसन्ती से व्याह के चार बसंत बीत चुके थे।

ब्याह के बाद शुरू के चार मास जीवन-मरण की कसमों में बीते बस। तब से एक दिन भी नागा न गया कि वसन्ती की कयामत न आती। आज भी बसन्ती समय पर घर न पहुँची तो भैरव दो हाथ अजमा देगा द्य उसे चिंतित देखकर महिलाओं में खुसर-फुसर चल पड़ी, अभाग्यन है। कैसा मर्द है? कैसा घर है? गाँव भी तो ऐसा ही है। दिन-भर धूल-मिट्टी में मरने-खटने के बाद बूंद-बूंद पानी के लिए तरसते हैं लोग। कब बारी आयेगी और न मालूम कितनी देर में धूल-मिट्टी से सने होंठ घुलेंगे।

सबसे आखिर में भरी गागर नन्दी ने। घनघनाने का स्वर करती गागर उचकाकर नन्दी ले आयी। भैरव अभी-अभी चौथर में बैठा था। शायद जाल-तुम्बे के नीचे रखते ही उसने बीड़ी सुलगा ली थी। नन्दी को देखकर पूछा, कब आयो?

गागर भर पानी ला रही हूँ।

कुछ कह तो नहीं रहा था बामण। भैरव का बामण कहने का आशय नन्दी समझ गयी। वह बोली, नहीं, जोशी सैव तो उसी समय चले गये थे।

बड़ा दुष्ट है। बड़ी मीठी मार मारता है। बातें ऐसी कि दिल ही नहीं भरता। 'अरे बीड़ी तो पी ले काम तो जीवनभर करना है। वैसे भी सड़क का काम नया-नया चला है। आराम से करोगे तो फांसी न लग जायेगी। काम तो आप लोगों ने ही पूरा करना है।' और दूसरी मजेदार बात सुनी उसकी रास्ते से वापस आ जाता है। कभी यह देखने कि मजदूर काम कर रहे हैं या नहीं कोई जरा सुस्ताये भी तो उसकी खैर नहीं। एक दो डोटियालों की उसने छुट्टी भी कर दी है काम पर से और मजदूरी देते समय सौ नखरे हफ्ते भर

की मजदूरी रोक लेता है। बड़ा काइयों बामण है।

अच्छा कहकर नन्दी ने गागर चौथर के कोने पर रख दी। माँ को गुहार लगाती अन्दर चली गयी।

मां मछलियाँ तलने में व्यस्त थी।

ईजा, मछलियाँ किसने दी? नन्दी ने पूछा।

भैरव ने। कहते हैं तू पहले ही चली आयी थी। माँ ने कड़ाई से नजर हराये बगैर ही कहा, मैं कह चुकी हूँ कि तू वहां बैठी बैठी क्या करती। हाँ ईजा! मैं सड़क पर अकेली बैठी-बैठी क्या करती। क्या उन मछुआरों को देखती रहती। नन्दी मछलियों को गौर से देखती हुई सोचने लगी, भैरव काका की दी क्या कोई मछलियाँ हैं, गिनती में चार, मगर जोशी ठेकेदार का दिया कणचूला तो फिर भी इनसे बड़ा था। भैरव काका जैसे खुद हैं वैसी ही मछलियाँ भी मिलीं उन्हें।'

माँ ने मछलियाँ तल दीं। अरी बैठी बैठी क्या देख रही है। जा ना, हाथ-पाँव पर गुनगुना तेल लगा है ले कटा-फटा और छाले सभी ठीक हो जायेंगे उससे माँ ने कढ़ाई से कटोरी में निकाला गुनगुना तेल नन्दी को थमा दिया।

नन्दी तेल लेकर बाहर के कमरे में चली आयी। मिट्टी से फटे पाँव का मास, कस्सी चलाने से हथेलियों में उभरे छाले और धूल मिट्टी से सिर में जन्मी जूँ और खुजलाहट सबकी एक दवा, गुनगुना तेल। उसका मन पूरे बदन में तेल लगाने को हुआ था। समय था पूरे बदन में तेल मलने का। उसने पांव से तेल लगाना शुरू किया। पांव के फटे मांस को देखकर उसका दिल भर आया। उसने गुनगुने तेल से सेंकने का प्रयास किया। घावों में भरी मिट्टी तेल में सनकर पिचपिचा उठा मन दुखी हो उठा। उसे स्वयं पर घिन-सी आने लगी। पिण्डलियों पर भी गुनगुन तल का स्पर्श हुआ। उसे अजीब आनन्द की अनुभूति होने लगी। लगा कि वह पूरी रात थकी थकी पिण्डलियों को मलती रहती तो अच्छा होता। पिण्डलियों में मछलियाँ सी पड़ने लगीं। हथेलियों का स्पर्श से भी अछूता न रहा। केदली-सी सफेद-गोरी उरू उसने गौर से पहली बार देखी। गुनगुने तेल के स्पर्श से वे भी और अधिक कठोर बनने लगीं। जीवन में इतनी आनन्द सम्मोहिता वह पहले कभी न हुई थी। माँ ने चूल्हे पर से दो बार गुहार लगायी थी, नन्दी तेल लगा लिया! भली-भाँति लगा लेना। हाथ-पाँवों से ही मिट्टी शरीर को चाट खाती है।

नन्दी ने माँ को कोई उत्तर न दिया। वह जीवन रस में गहरी डूबी थी। उसने आधे पेट और आधी पीठ पर मालिश कर ली थी। जब नर्म नर्म हथेलियाँ उस भाग को स्पर्श कर रही थीं जहाँ उसने अपने को पूर्ण यौवन की देहरी पर पाया था। उसने बड़ी उत्सुकता से उन उभरे और थुलथुले भाग को देखा, हल्का-हल्का स्पर्श किया।

एक सिहरन उसके बदन में दौड़ गयी। ये अभी से इतने सख्त और उभरे हुए क्यों हैं। अभी उसकी उम्र तो छोटी है। अभी ब्याह भी नहीं हुआ है। माँ एक दिन किसी से बतिया रही थी। वह साफ-साफ तो नहीं सुन सकी शायद ऐसा ही कह रही थी, बसन्ती के तो ब्याह होने, उस पर भी दो बच्चे जनने पर भी बड़े नहीं हुए, उनमें दूध ही नहीं बनता। एकाएक स्तनों को दोनों हथेलियों से सहलाती, उछालती, दवाती वह स्वयं को कुछ क्षण के लिए भूल गयीं।

नन्दी, खाना तैयार है, हाथ-मुँह धोकर जल्दी आ, भूख लगी है। माँ ने एक बार फिर गुहार लगायी। लेकिन नन्दी मन्त्रमुग्ध सौ उसे सुनाई भी पड़ा या नहीं। बहरहाल माँ को कोई जवाब न दिया।

माँ विस्मित सी हुई। नन्दी कहाँ जा मरी जैसे मुँह से दो-एक अस्पष्ट शब्द निकले। चूल्हे में से जली और अधजली लकड़ियाँ निकालकर बुझने को रख दी थीं। उनका तीखा धुआं पूरे घर में फैल गया था। माँ हड़बड़ाकर उठी। मिट्टी तेल की ढिवरी उसे पहाड़ पर चिराग-सी दीख रही थी। बाहर के कमरे में आने के लिए ज्यों ही कदम बढ़ाया ज्वलनशील धुआं नाक के सुराखों से मस्तिष्क में घुस गया। नन्दी को आवाज देने की कोशिश की तो धुआं एकाएक गले में पैठ गया। खाँसी का दौर चल पड़ा। एक तो बुढ़ापा उस पर गहरे धुएँ का प्रहार। माँ गिर पड़ी। माँ को क्रूर खाँसी का दौरा और उसके गिरने का स्वर नन्दी के कानों में जा पड़ा। वह हड़बड़ा उठी। अपने ब्लाउज के बटन लगाती हुई माँ के समीप गयी। पूछा, क्या हुआ ईजा! अरी होना क्या था? कच्ची लकड़ियों ने तो सरदर्द कर दिया माया फटा जा रहा है। छिस छिसकर जल रही थीं। तू कहीं चली गयी थी पगली! तब से आवाज दे रही हूँ। रुक-रुक कर माँ ने कहा

नन्दी को विस्मय-सा हुआ। साफगोई करती हुई बोली, कहीं तो नहीं, मैं तो बैठी तेल मालिश कर रही थी।

हाँ, ठीक कह रही हो बेटी, इस उमर में ऐसा ही होता है। माँ ने एक क्षण के लिए जीवन पलट कर देखा, अपने अनुभवी स्वर में कहा, यह धुआँ छंट जाये, तो खाना खा ले। ठण्डा हो रहा है। खांसी अभी पूरी तरह थमी नहीं थी। माँ उठने का प्रयास करने लगी। नन्दी ने उसकी बाँहों को सहारा दिया और बाहर के कमरे में ले गयी।

थोड़ी देर में धुआं छंट गया था।

माँ ने खाना परोसा।

नन्दी ने रोटी का एक कौर तोड़ा। मछली के झोल में डूबोकर जैसे ही कौर मुँह में ले गई, उसे जोशी ठेकेदार का दिया कणचुला याद आ गया। उसका स्वाद याद आने लगा। कणचुला उसे अभ भी साबूत नजर आने लगा।

यह कृष्णानन्द जोशी याद आने लगा। रह-रहकर उसका आवाज देकर रोकना, उसका वह भारी-भरकम कणचुला देना और उसे थामकर गठरी में बांधना याद आने लगा। अपने विचारों के प्रवाह में वह उस कणचुले को बार-बार उठाकर उलट-पलट रही थी। कभी उसकी आँखों में देखती तो कभी गलफड़ों की ओर झांकती और कभी उसके शरीर को देखती, स्पर्श करती तो उसका चिकना-चुपड़ा चमकीला शरीर फिसलता हुआ जान पड़ता।

उसके बड़े जबड़े खुल गये जैसे वह चुबलाना ही भूल गयी हो। उसकी विचार-शृंखला को तोड़ती हुई माँ बोली, खाती क्यों नहीं? सोच क्या रही है?

कुछ भी तो नहीं। कहती नन्दी ने दूसरा कौर तोड़ा और बिना किसी अवरोध के रोटियां खा लीं।

माँ ने कहावत रोज की तरह दुहरा दी थी और बतियाते उसकी आँखें भी लग गयी। लेकिन नन्दी करवटें बदलती रही। उसे नींद क्यों नहीं आ रही वह सोचने लगी। मन उचाट-सा हो गया था। बार-बार उसके मस्तिष्क में पहले रोज काम पर जाने का घटनाक्रम घूम रहा था। देवतास्वरूप कृष्णानन्द जोशी के ख्याल आते रहे। आंखों में उसका दिया कणचुला तेरता रहा।भिनसार ही नन्दी मजदूरी करने चल पड़ी। कृष्णानन्द जोशी भी अल सुबह ही सड़क पर आ चुका था, जबकि मजदूर अभी नहीं पहुंचे थे या फिर पहुँच ही रहे थे। वह सड़क को एक खोह को छोर से दूसरी छोर तक चक्कर काट रहा था। उसे देखकर नन्दी घबरा उठी। उसे संदेह हुआ कि कल काम बन्द करने के समय जब ठेकेदार आ रहा था तो उसने भैरव को हक जाने को कहा था।

लेकिन भैरव ने उसकी नहीं सुनी बल्कि ऊलजलूल कहकर चला गया था। उसका कहा शायद ठेकेदार ने सुन लिया हो इसीलिए वह आ धमका है - भैरव की खैर नहीं। ज्यों ही जोशी ठेकेदार नन्दी के समीप आता, नन्दी की नजरें उस पर टिक जातीं। एक भय झकझोर देता। एक ओर जोशी ठेकेदार को नजर भर देखने की ललक तो दूसरी तरफ उसे सिर्फ एक गरीब मजदूर होने को झिझक होती कई मजदूरों को डाँट-डपट करते, कई लोगों को काम पर न आने को और कई एकों को धमकी देते उसने भी देखा था। वह घबरा उठी थी। चोरी-छिपे इस तरह नजरों की उठा-पटक में काफी समय बीत गया।

मजदूर काम पर जुट गये, जोशी ठेकेदार उन्हें काम करता देखता रहा। उसने न भैरव से कुछ कहा और न किसी मजदूर से। बल्कि शांतचित्त देखता रहा।

दूर-दूर पहाड़ियों पर से मजदूर बदन की धूल-मिट्टी बहाने नदी की ओर उतरने लगे थे। कारतूस दागने के समय घर-गाँव से भाग-भाग कर लोकगीतों को धुन और बाँसुरी का स्वर छेड़ते लोग माहौल को और भी मनोरम बना रहे थे।

काम बन्द करने का समय हो चुका था। मजदूर एक-एक कर अपने औजार सँभालने लगे थे। भैरव के साथ-साथ अन्य मजदूरों ने फौरन तुम्बे बाँधकर खारि बाँध ली थी। अब बायीं बाजू पर जाल की रस्सी लपेटनी प्रारम्भ कर दी थी। फिरको को तरह दाहिना हाथ घूमने लगा। उनकी फुर्ती ने कृष्णानन्द जोशी का ध्यान अपनी तरफ खींच लिया। वह मन ही मन सोचने लगा, वह भी कभी जाल बांधेगा। कभी उसके जाल में भी मछली फंसेगी।

नन्दी समीप खड़ी थी। वह भी जाल बाँधना देख रही थी। शायद उसने भी कुछ ऐसा ही सोचा था। उनके मन की बातों को ताड़कर एकाएक भैरव बोला, जाल बाँधना कोई मुश्किल नहीं होता सैव। जाल में मछली को फंसाना-वह

तो। वह जरा कठिन है सैबज्यू पानी में उतरना भी सभी की हिम्मत की बात नहीं। मछली को फँसाना कोई सिखाने की कला नहीं। यह तो पानी में उतरकर ही सीखा जाता है। भैरव की बात सुनकर नन्दी ने एक नजर कृष्णानन्द जोशी पर टिकाई तो उसने नन्दी के चेहरे पर। एक क्षण के लिए नजरें उठी और फिर झुक गयीं। ऐसा लगा, जैसे आश्चर्य करते एक दूसरे से आँखों ही आँखों में पूछ रहे हो, 'इतना आसान है क्या?'

भैरव ने अपने उतारे हुए कपड़े नन्दी को थमा दिये और बोला, घाट छोड़ने पर मैं सीधे चला आऊँगा तू मेरे साथ ही लौटेगी। अच्छा कहती नन्दी मुस्करायी। उसकी एक बार नजर जोशी ठेकेदार की तरफ बढ़ी तो दूसरी भैरम पर। फिर जोर-जोर से खिलखिला उठी।

भैरव जाने लगा। और पीछे-पीछे मजदूर भी।

जोशी ठेकेदार सड़क के अगले छोर की तरफ बढ़ गया।

नन्दी ने भैरव के कपड़े उठाए और सामने के बड़े पत्थर पर बैठ गई। वे सड़क से नीचे उतर गये कटीले पथरीले और सर्पले आकार के टेढ़े-मेढ़े रास्ते से उतरते हुए नन्दी उन्हें देखती रही। एक खोह के अन्दर वे गुम सा हो जाते तो वह घबरा उठती। मन में कई तरह की अशुभ बातें जन्म लेने लगतीं। कहीं भैरव रास्ता तो नहीं भूल गया कही उसके पाँव में काँटा कंकण तो नहीं लग गया! कहीं पाँव फिसलकर रौली में चौदान तो नहीं हो गया! क्योंकि वह ही सबसे आगे-आगे चल रहा था नन्दों का दिल दहल सा गया। और ज्यों ही भैरव खोह से बाहर निकला उसके अन्दर मर रही खुशी जीवित हो उठती।

वह पत्थर पर खड़ी हो गयी और जोर-जोर से हाथ हिलाने लगी। शायद फिर भैरव भी हर खोह से निकलने के बाद उसे भी देख रहा है, उसे भास होता। मगर हाथ हिलाने का वह कोई जवाब नहीं देता था।

कृष्णानन्द जोशी नन्दी के हाथ हिलाने को दूर से देखता रहा। उसे एहसास हुआ नन्दी उसे ही इशारा कर रही है। दरअसल नन्दी जब से काम पर आयी जोशी ठेकेदार की उसके प्रति आत्मीयता काफी बढ़ गयी थी।

मौके बेमौके की तलाश करते नन्दी से वह उसकी माँ की खबर पूछता, काम के समय आने वाली परेशानियों के विषय में दो-एक बार पूछ ही लेता। अधिक भारी-भरकम काम न करने की भी सलाह देता था और जब वह पहली मजदूरी लेने आयी तो उस दिन तो वह मूर्ति की तरह उसे देखता रहा, जार-जार हुई धोती और बगल से उघड़े ब्लाउज के बखिये को वह घूरता रहा। मिट्टी में सने उसके लाल होंठ उसे रसभरियां मां लगी थीं। उसने सभी कोणों से नन्दी को देखा और फिर कहा था, सौ-पचास रुपए अधिक ले लो, तुम्हारे कपड़े फट चुके हैं। नन्दी पहले तो ठेकेदार की बातें समझी नहीं थी फिर उसने साफ-साफ मना कर दिया। ठेकेदार का चेहरा उड़ गया। उसके बाट कई बार उसने प्रलोभन भी दिए। एक बार एक गुलाबी साड़ी और दूसरी बार में नकदी भी। यह कहकर कि हिसाब-किताब होता रहेगा। जब भी नन्दी उससे पूछता तो वह बात टाल-सी देता। दरअसल वह तो उसे हथेली के छाले की तरह रखना चाहता था। इसीलिए वह नन्दी की बाँहें हिलने पर मुग्ध-सा हो गया।

मछुआरे रौखड़ में पहुंच चुके थे।

जन सैलाब में वे घुल-मिल-सा गये थे। अब नन्दी के लिए किसी को पहचानना कठिन था। उसने अपनी नजरें हटा लीं। और वह पत्थर पर बैठी-बैठी कुछ गुनगुनाने लगी थी। उसके गुनगुनाने के स्वर सुनकर कृष्णानन्द जोशी और भी अधिक आकर्षित हो गया। वह उसके समीप आ धमका और बोला, अरो नन्दी, तू यहाँ अकेली, तुझे डर नहीं लग रहा है क्या? यह भैरव तो मूरख है, उसे इतनी समझ नहीं जो जवान लड़की को अकेली रुकने को कह गया।

नन्दी ने कोई जवाब न दिया। जोशी ठेकेदार को देखकर उसे संकोच-सा हुआ। अदब से या उसके ठेकेदार होने के दबदबे से वह सिर में धोतो का पल्लू रखती हुई बड़े पत्थर से उतर गयी। जोशी ठेकेदार पत्थर का सहारा लेकर खड़ा हो गया।

रोज की भाँति कृष्णानन्द जोशी ने बातों की शुरुआत उसकी माँ से की। उसके बौज्यू का गुणगान करना शुरू किया। लेकिन नन्दी को जोशी ठेकेदार को बातें अच्छी न लगी। उसके मन में एक भय जागने लगा-अकेली, इस

निर्जन स्थान में उसे किसी भी पुरुष के सामने मुँह नहीं खोलना चाहिए। माँ कहती है, पुरुषों का मन बड़ा चंचल होता है। उन्हें एक बगल दिखाओ तो दूसरों दिखाने को मजबूर कर देते हैं और मौका मिलते ही नंगी करके रख देते हैं। ऐसा सोचती हुई नन्दी का दिल तेज-तेज धड़कने लगा। सुनसान सड़क। अभी डहव छूटने में समय था। वह क्षण-भर की खामोशी को तोड़ती हुई बोली, एक बात कहूँ सैब, मुझे डर लग रहा है। मैं अकेली एक लड़की-इस सड़क पर एक पुरुष के साथ....। कृष्णानन्द जोशी जोर से खिलखिलाया। कदम उसकी तरफ बढ़ाकर बोला, अरी इधर कोई नहीं है। लोग जा चुके हैं। तुझे अकेली देखकर तो मैं आया हूँ। सोचा तू अकेली डर रही होगी। उसने अपना दाहिना हाथ नन्दी की पीठ पर रखा और उसे धैर्य दिलाने लगा।

नन्दी जरा-सा चौंकी प्रतिकार में जरा नू-ना की। सैब, दूर खड़े रहो। तुम्हें क्या हो गया! कोई देख लेगा। मुझे ऐसा अच्छा नहीं लगता। जोशी ठेकेदार ने अपना हाथ वापस ले लिया। थोड़ी देर के लिए पुनः खामोशी फैल गयी। उसका मन हुआ कि वह नन्दी के चेहरे को हथेली में उठाये और उससे कहे, 'क्या अपनों से भी डर लगता है!'

नन्दी ने कृष्णानन्द जोशी को सामने खड़ा देखा तो उसे पहली मुलाकात की बातें रह-रहकर याद आने लगीं। पहले खिलखिलाना, आवाज देकर बुलाना और फिर वह कणचुला देना-कृष्णानन्द जोशी की आँखें गाल, उस कणचुले की आँख और गलफड़ों से कम सुन्दर न लगे थे। वह सोचने लगी, वह जोशी ठेकेदार नहीं वह देवता था। उसके असली रूप को पहचानने में उससे कोई भूल हो गयी थी।

वह लज्जित-सी होने लगी। उसे देखकर जोशी ठेकेदार एक झटके से पत्थर पर चढ़ गया। नन्दी संकोच से पत्थर की ओट में बैठ गयीं। बड़ी देर तक बातें हुई। बातों ही बातों में कृष्णानन्द जोशी अपनी सुध खोकर या फिर जान-बूझकर फिसल पड़ा। उसे गिरता देखकर नन्दी की हँसी छूट पड़ी और कृष्णानन्द जोशी की भी हँसी-हँसी में वह नन्दी से सटकर बैठ गया। वह ज्यों ही दूर बैठने को सरकने लगी, कृष्णानन्द जोशी ने उसकी कलाई थाम ली।

नन्दी कलाई छुटाने के प्रयास में 'नूँ -ना' करने लगी।

उसी समय एक शोर सुनायी पड़ा। फँस गयी, फँस गयी, पकड़-पकड़ भलीभाँति, पकड़ छूटने न पाये। जोशी ठेकेदार को लगा कि उसे कोई दूर से देख रहा है। दूसरी ओर नन्दी को भी विश्वास हुआ कि जोशी ठेकेदार के दुर्व्यवहार को कोई देख रहा है। वह अवश्य ही यहाँ आयेगा। वह चीखकर बोली, मेरी कलाई छोड़ दे सैब नहीं तो मैं दराती मार दूंगी। कृष्णानन्द जोशी की पकड़ कुछ ढीली पड़ गयी। नन्दी ने झटके से अपनी कमर में खाँपी दरांती हाथ में ले ली, मुझ पर हाथ न लगाओ सैब में इस दराती से दो टुकड़े कर दूंगी। थोड़ी देर के लिए दोनों के बीच एक चुप्पी सी फैल गयी। दोनों उस आवाज को सुनने लगे। दरअसल यह नदी के रौखड़ में मछुआरों का स्वर था। किसी मछुआरे के जाल में बड़ी मछली फँस गयी थी। जाल फैलाने का शायद उसे अच्छा अनुभव था। नन्दी को कृष्णानन्द जोशी का कलाई थामना भी उस निफण मछुआरे के जाल डालने से कम नहीं लगा। वह बोली, जाल फेंकना इतना आसान नहीं सैब, जैसा तुमने सोचा है। भला इसी में है कि मछुआरों का बाट छोड़ने से पहले यहाँ से चले जाओ। नहीं तो भैरव ने तुम्हें टुकड़े-टुकड़े कर शाम को कढ़ाई में तल देना है।

वह जोर-जोर से चीखने लगी। जोशी ठेकेदार को यह जरा भी विश्वास नहीं था कि वह ऐसा भी कर सकती है। उसने एक-दो बार दरांती छीनने का भी प्रयास किया, लेकिन पराजित-सा होकर लौटने लगा। शायद वह कुछ बुदबुदा भी रहा था।

मछुआरों ने घाट छोड़ दिया था।

भैरव खाली खारि लिए लौट रहा था। आज उसे एक भी मछली नहीं मिली थी। नन्दी निराश हो उठी। दिल दुःखी हुआ। कृष्णानन्द जोशी भी आज उसे एक ऐसे तीखे मोड़ पर ले गया था जहाँ उसे घृणा और नफरत के रास्ते ही दिख रहे थे। वह पूरे रास्ते भर में सोचती रही, माँ की सुनायी कहावत याद करती रही। मछली कहती है, इस जन्म में तुम मुझे खा लो। अगले जन्म में मैं तुम्हें खाऊँगी। पूरे दो माह से माँ यही दुहराती आ रही थी। आज वह पहले ही कह देगी, अगले जन्म की बातें छोड़ो माँ! मुझे तो मछरंगा इसी जन्म में खा गया था।

कथा-कहानी

दबी दबी लहरें

मधु कांकरिया

सुबह! मेरे क्षितिजों में विस्तार करती एक और सुबह! रांची से करीब एक सौ तीस किलोमीटर दूर गुमला स्थित विशुनपुर के जंगल की ओर खुलती खिड़की के बंद पल्लों को खोल ही रही थी कि देखा कोने में दुबके दो-दो सांप। मैं चीखी सांप-सांप पास में सोयी मंगला झट से उठी और करीब साढ़े तीन फिट लम्बे उस सांप को हाथ से ही पकड़ लिया उसने मैं अवाक अरे क्या कर रही हो, काट लेगा मकई के दानों जैसे दांतों से खूबसूरत मुस्कराहट बिखेरती वह जामुनी सुंदरी कहने लगी काटेगा कैसे, उसका मुंह तो मेरी हथेली में बंद है। मैंने कहा और वह दूसरा सांप हँसते हुए बोली वह-वह सांप नहीं उसकी केंचुल है, सांप इसी प्रकार कोने में दुबक कर ही अपनी केंचुल छोड़ता है सांप को हाथ से पकड़ वह जंगल की ओर निकल गयी।

करीब आधा घंटे बाद लौटी वह लौटते ही उसने उस केंचुल को हाथ में उठाया उतनी ही, आधी इंच चौड़ी पानी रंग की हल्का सा पीलापन लिए सफ़ेद सी पारदर्शी केंचुल बीच बीच में चकते ताज्जुब! पढ़ा जरूर था कि सांप अपनी पुरानी केंचुल छोड़ देता है पर इस प्रकार की होती है केंचुल! डरते झिझकते मैंने छुआ उस केंचुल को मंगला बताती रही पेट से चलता रहता है इसलिए पुरानी केंचुल मरी चमड़ी की तरह हो जाती है और नयी बन जाती है तो मुंह से वह इसे फाड़ कर बाहर निकल आता है सच प्रकृति ने सबको गुजारे लायक दिया है कहते हुए उसने केंचुल को अपने गमछे में रख लिया मैंने पूछा क्या तुम इसे बेचोगी? हाथ नचाते हुए वह बोली आप शहरी लोग बेचने और मुनाफा कमाने के अलावा कुछ सोच नहीं सकते क्या मैंने इसे रख लिया क्योंकि एक तो बच्चे को सूखा रोग होने पर सांप की केंचुल की माला गले में पहना देने से सूखा रोग दूर हो जाता है और दूसरा घर मे सांप की केंचुल रखना शुभ होता है कहते हैं कि इससे घर में समृद्धि आती है।

कितने विश्वासों-अविश्वासों में जीता है यह समाज सोचते हुए मैं नहाने चली गयी कुएँ से पानी ला मंगला ने कमरे में ही बने छोटे से नहानघर में रख दिया। नहानघर से निकलने के बाद मैं अपने गीले कपड़े सुखाने लगी तो देखा मंगला मेरी ब्रा को बहुत ध्यान से देख रही थी। मैंने मजाक में पूछा चाहिए तुम्हें वह शरमा गयी हमने तो ब्लाउज भी इन सालों में ही पहनना शुरू किया है, मेरी माँ तो ब्लाउज भी नहीं पहनती थी, अभी भी नहीं पहनती है, कहती है लाज आती है तो क्या तुम्हें भी ब्रा पहनने में लाज आती है? पल्लू का कोना मुंह में ठूंसते हुए जवाब दिया उसने नहीं वो बात नहीं, हमारा आदमी भी कहता है कि शहर से लाएगा मेरे लिए, पर मैं ही रोक देती हूँ, हमारे समाज में कोई नहीं पहनता ये सब।

तो तुम शुरू कर दो वह हंसी, एक झिझकती हुई हंसी शहर जाऊंगी तो पहनूंगी। ब्लाउज पहनने में भी किसी को क्या लाज आ सकती है सोच कर भी सोच नहीं पायी। एक समय था कि मर्यादाशील औरतें ब्रा नहीं पहनती थी इसे भी उत्तेजना का कारण समझा जाता था और दक्षिण भारत में दलित औरतों ने अपने स्तन ढकने के अधिकार के लिए एक लम्बी लड़ाई लड़ी कैसी कैसी मानसिकता किसने गढ़ी ये मानसिकता सोचते सोचते जाने कब लग गयी। आँख कि एकाएक जोरों से आवाज़ें आई लगा जैसे कोई नगाड़ा पीट रहा है नहीं चाहते हुए भी पास में सोयी मंगला को कुहनी मार उठाया। कैसी आवाजें आ रही हैं? क्या कोई पुलिसिया एन्कांटर है माओवादियों के साथ वह आँखें फाड़े मुझे देखती रही फिर निराश होते हुए बोली दीदी यह तो कनस्तर पीटने की आवाज़ है शायद किसी के खेत में कोई बड़ा जंगली जानवर घुस गया होगा। बाप रे तो जानवर तो यहाँ भी आ सकता है मैं डर से पीली पड़ रही थी।

नहीं दीदी, जानवर घुप्प अँधेरे में आते हैं, खेत में आते

हैं यहाँ एक तो सारी रात हल्की बत्ती जलती है और दूसरा यहाँ दरवाज़े बंद रहते हैं यहाँ पूरी सुरक्षा है।

तो जानवर इस प्रकार भगाए जाते हैं कनस्तर पीट पीटकर हाँ, जैसा जानवर वैसा उपचार, कई बार मशाल जला कर, आग दिखाकर भी उसे भगाया जाता है तीर गुलेल चलाकर भी भगाया जाता है।

विशुनपुर से कलकत्ता लौटने की मियाद धीरे धीरे पूरी हो रही थी। हर सुबह मैं उगती और रात होते न होते अस्त हो जाती। अब बचे बस दो दिन सुबह होते ही एक पागल उम्मीद हरहरा उठती शायद आज मुलाकात हो विशुनपुर के गांधी जंगल कुमार से लेकिन रात होते न होते टहनी सी टूट जाती उम्मीद और मायूसी मुझे अपने आगोश में ले लेती। मेरी निराशा का रंग गाढ़ा होता जा रहा था क्या उस अभेद्य किले को खोल पाऊंगी मैं कभी जिसका नाम है जंगल कुमार! जिसे रोज थोड़ा थोड़ा दूर दूर से देखती हूँ मैं और थोड़ी थोड़ी उनके भीतर प्रवेश करती रहती हूँ।

आज एक और मुसीबत! मंगला घर जल्दी जाना चाहती थी आज की रात और अगले दिन की छुट्टी चाहती थी उसने रात के कुछ जूठे बर्तन घिसे और देर तक उन्हें चमकाती रही, मैंने उसे बर्तन मलने से रोका मैं मल लूंगी मेरे जूठे बर्तन मत मला कर जवाब और भी अनोखा आया मुझे मजा आता है, स्टील के इन बर्तनों को चमकाने में कितनी जल्दी चमक जाते हैं ये मैं फिर हैरान! किस दुनिया में आ गयी हूँ मैं कितना अलग है इसका मजा हम शहरियों से मजा न घूमने में, न सिनेमा देखने में, न टीवी देखने में, न खरीदारी करने में इसे मजा आता है स्टील। के बर्तन चमकाने में इतना कि घर जल्दी जाना है फिर भी बर्तन चमकाने में कोई हड़बड़ी नहीं मंगला के जरिये आदिवासी के निजी जीवन में झाँकने का भी मुझे अवसर मिला मंगला के हाथ हमेशा चलते रहते थे, मुझसे बात भी करती तो खाली नहीं बैठ पाती थी वह, कभी करोसिया चलाती रहती तो कभी चटाई बुनती रहती मैंने एक बार कहा तुम जरा सा भी आराम नहीं करती। जवाब और भी विचित्र यह आराम ही तो है दीदी तो फिर काम क्या होता है? काम होता है पत्थर तोड़ना, लकड़ी चीरना एसर पर ईंट ढोना, खेतों में घास काटना, ठेकी चलाना, पानी भरना मुझे रात में मंगला के रहने से बहुत सहारा मिलता था। शाम होते ही यहाँ असहनीय सन्नाटा छा जाता जंगल कुमार के दिए ट्रांजिस्टर के अलावा दिल बहलाने का कोई साधन नहीं था मेरे पास। मेरे और मेरे बाहर के संसार के बीच वह एक खिड़की की तरह भी थी रात के सन्नाटे भरे धुंधले अंधेरों में जब भी मुझे पेशाब करने निकलना पड़ता, मंगला के साथ होने से मैं रास्ता भटकती नहीं थी, वह तुरंत लालटेन जला मेरे साथ निकल पड़ती थी खुशहाल भारती में बिजली के मरियल लट्टू जगह जगह टंगे हुए थे लेकिन देर रात सारी बत्तियां बुझा दी जाती थी, इसलिए डर और भी ताकतवर हो जाता था यद्यपि वैसा डर नहीं था पर मैंने सुना था कि रात यहाँ दीवार फांद कर कई बार पुलिस से बचने के लिए माओवादी छिपने चले आते हैं। यह भी सुना कि कई बार भालू और भेड़िया भी रात को आने की फ़िराक में रहते हैं। मोटे मोटे चूहे तो दिन में भी मेरे कमरे में घमा चौकड़ी मचाए रहते मैंने मंगला को अपने डर के बारे में बताया तो वह हंस पड़ी दीदी खुशहाल भारती के भीतर कुछ डर नहीं हैं फिर भी आप को डर लगे तो मैं अपनी बहन तिरकी को आप के पास सुला दूँगी।

वह एकटक मेरी ओर देख रही थी।

तिरकी यह क्या नाम है यह भी किसी पेड़ का नाम है क्या?

नहीं तिरकी चिड़िया को कहते हैं।

बस एक रात की ही तो बात है फिर तुम्हें कष्ट नहीं दूँगी मैंने हल्का सा जोर दिया।

सर नीचा कर उसने बताया, दीदी ये दो रात ही मेरी साल भर की कमाई है, क्या बताएँ आपको हमरा आदमी आज आ रहा है पूरे नौ महीने बाद दिल्ली से...मैं नहीं जाऊँगी तो बारह बारह घंटे की लम्बी लम्बी रात वह अकेले काट नहीं पाएगा और हडिया (देशी दारु) पी पी टन्न पड़ा रहेगा। उसकी आँखों की कोर में अटके आंसू पर मेरी नजर गयी मैंने बात बदल दी तुम्हारा आदमी दिल्ली रहता है मैंने अभी तक जितने आदिवासियों से बात की थी उन्होंने दिल्ली तो दूर की बात, अपने गाँव और आसपास के गाँव और टोलों

के अलावा किसी शहर का नाम तक नहीं सुना था, यहाँ तक कि वे भारत तक का नाम नहीं जानते थे हाँ कुछेक ने पाकिस्तान का नाम जरूर सुना था और यह कह रही है कि इसका आदमी दिल्ली से आया है मेरे लिए यह जानकारी की एक और नयी परत थी जाने क्यों मन में लहर सी उठी क्या इसका पति झारखण्ड की उस युवा पीढ़ी से है जो अब थोडा बहुत पढ़ लिख कर बजाय खेती या अन्य परम्परागत कामों के शहरों में मजदूरी के लिए जाने लगी थी।

कितनी जमात तक पढ़ा है तेरा आदमी, मेरे पूछते ही गर्व से उसका चेहरा चमक उठा नाक फुलाते हुए कहने लगी डेढ़ डेढ़ सौ मीटर की दो दो नदियाँ पार कर लोहरदगा की सरकारी स्कूल में जाता था रघुबर पढ़ने को दो दो नदियाँ पार कर पांच जमात के बाद सबसे नजदीक स्कूल वहीं थी पहाड़ी जिन्गी की कठोरता आप मैदान वाले नहीं समझेंगे।

पर वह दिल्ली गया ही क्यों?

क्या बताएं दीदी, वह फिर अपने में खो गयी उदासी की एक हलकी परत बदली सी उसके चेहरे पर छा गयी बताओ दीदी, आपने क्या नगु बिरजिया का नाम सुना है, हम उन्हीं के परिवार से हैं वे मेरे परदादा ससुर थे वे हेमोटाइट पत्थर (कच्चे लोहे) को भट्टी में गला कर लोहा बनाते और उस लोहे से संडासी, त्रिशूल, हसुआ, खुरपी, तलवार क्या क्या नहीं बनाते थे बहुत जान होती थी उस लोहे में, उसमें जंक भी नहीं लगता था पूरा गाँव ही नहीं, हाडूप गाँव तक लेते थे हमसे खेती के फाल, खुरपी, त्रिशूल, संडासी, औज़ार वगैरह अभी तक वह भट्टी रखी है उसके ऊपर लिखा है असुर भट्टी।

नगु बिरजिया नाम मेरे जेहन में टंगा रहा शायद यह वे ही नगु बिरजिया थे जिनके लिए मैंने कुछ साल पूर्व किसी अखवार में पढ़ा था या विशुनपुर के ही किसी आदिवासी के मुख से सुना था, मुझे ध्यान नहीं आ रहा था पर जितना मुझे पता था उसके अनुसार देशज तकनीक से लौह बनाने वाले वे अंतिम शिल्पकार थे। मगध साम्राज्य से लेकर आज़ादी की लड़ाई तक में बिरजिया और असुर लोगों ने लौह तकनीक के बलबूते अपनी पहचान बनायीं थी वे उस बिरजिया समुदाय के प्रतिनिधि थे। कहा जाता है कि मगध नरेश ने लड़ाई के लिए अस्त्र शस्त्र का निर्माण इन्हीं असुर और बिरजिया लोगों से करवाया था उसी परिवार की वर्तमान पीढ़ी मजदूर बन गयी तो बंद क्यों किया। मैंने पूछा तो वह नदी की बहती कल कल धारा की तरह अपनी राम कहानी गाने सुनाने लगी।

का बताएँ दीदी, हमारा लोहा और लोहे का सामान थोड़ा महंगा बनता था, बाज़ार में टाटा के लोहे का सस्ता सामान मिलने लग गया तब लोगन क्यों खरीदेंगे हमारा समान सामान नहीं बिकता था हमारे दादा ससुर ने सरकार से गुहार भी लगायी कि हमें थोड़ी सुविधा दे दीजिये हम फिर से जी उठेंगेई टाटा बाटा ने हमारा ही ज्ञान चुराया है सरकार ने दिल्ली के विज्ञान भवन में उन्हें सम्मानित किया लेकिन सुविधा नहीं दी गुहार लगाते लगाते वे चले गए हमारे ससुर को दिन के चार किलो चावल के हिसाब से मजदूरी मिलती थी बाद में वे खुशहाल भारती में काम करने लगे जंगल कुमार उन दिनों बायो गैस प्लांट लगवा रहे थे वहीं उन्हें काम मिल गया हमारे आदमी को कभी दिल्ली तो कभी रांची में मजदूरी मिल जाती है, दिन का ११० रुपल्ली मिल जाते है इतना तो दूसरे के खेत में काम करने पर भी नहीं मिलता, माइंस में भी मजदूरी के मिलते हैं दिन का सौ रुपल्ली सो वे दिल्ली में मजदूरी करने चले जाते हैं। बस करमा और सरहुल पर्व पर घर आते हैं बोलते बोलते दुःख का दूसरा संस्करण उसके चेहरे पर छप गया था।

मैंने मुलायम मुलायम स्वर में फिर पूछा,

पति के दिल्ली जाने से इतनी दुखी हो तो रोका क्यों नहीं उसे इतनी दूर जाने से उसने गर्दन उठाकर ताका मेरी ओर, तनिक विश्राम बाद फिर बोली रोकती क्यों? मैं तो मना रही थी कि उसे भी मौका मिले गाँव के सभी जुवान लड़कन तो चले गए थे, उसके सभी संगी साथी चले गए थे, यहाँ तो सुबह पांच बजे से रात तक हड्डी तोड़ मेहनत के बाद भी खाने के लाले पड़े रहते थे दिन के बारह बजे के पहले कभी खाना नसीब नहीं होता। बल्कि हम तो दातुन ही बारह बजे करते कोई मोटा सा चूहा धम से मेरे पास कूदा मैं चीखी वह हंस पड़ी आप शहरी बड़े डरपोक होते हैं कुछ नहीं करेगा मैंने फिर पूछा, तो क्या तुम सुबह चाय नहीं पीते

उदास हंसी बिखेरते हुए कहा उसने कभी-कभी मेले ठेले में साल दो साल में चाय नसीब हो जाती है गेंहू भी कहाँ खा पाते हैं, बड़ा आदमीं लोगन का खाना है वह अब मेरा आदमी दिल्ली में रोज गेहूं की रोटी खाता है, बाबू लोग की तरह पेंट पहनता है और चाय पीता है हमें पैसे भेजता है इसलिए अब हमारे यहाँ भी काली चाय बनती है कभी कभी गेहूं की रोटी भी बनती है गेंहू चाय पेंट मैं किस दुनिया में हूँ पहली बार मेरी कल्पना लज्जित हुई गरीबी सूखी रोटी खिलाती है अमीरी घी चुपड़ी यह तो मैं जानती थी लेकिन गेहूँ अमीर है। दाल और चाय अमीर है, सब्जी अमीर है...गरीबी का यह रंग मेरी कल्पना के बाहर था और तो और इनके भगवान् भी श्रीहीन थे न भव्य मंदिर न भव्य पोशाक न सर पर ताज, न मोर मुकुट न, कोई मूरत...भगवान् के लिए कोई छोटा मोटा आलया तक नहीं सखुआ के पेड़ के नीचे गाड़ दिया कोई पत्थर, लिख दिया उसपर 'सिंगा बोंगा' और बना दिया उसको भगवान् या कोई पेड़ की डाली कुछ लाल फूल किसी कोने में सिन्दूर और फूल सब भगवान् के रूप बहरहाल गर्दन को झटका दे पूछती हूँ मैं।

तो तुम किस अनाज की रोटी खाते हो?

धान, बाजरा, ज्वारी तो कभी मंडुआ, मकई और गोंदली मकई का भात बनाकर खाते हैं बनाली का बाज़ार दूर पड़ता इसलिए ठेकी पर मकई को कूट लेते हैं। ठेकी पर ही धान से चावल निकालते हैं नहीं दाल के साथ नहीं, दाल वह भी उरद और कुल्थी की दाल महीने में एकाध बार खाते हैं। सबसे अधिक मकई ही खाते हैं मकई ख़त्म हो जाती तो मंडुआ मंडुआ खाते खाते पखाना इतना सख्त हो जाता कि दिन भर पेट भारी रहता...बोलते बोलते उसने बात बदली पांच बज गए होंगे दीदी धूप आँगन से सरक कर दीवार पर चढ़ गयी। मैंने उसे अनसुनी करते हुए फिर पूछा, और क्या करता है तेरा आदमी नयी नयी चीजें देखता है। हमें बताता है बिजली के पंखे के नीचे सोता है बस दुःख है तो यही कि संग साथ नहीं रहने मिलता।

बिजली का पंखा तुमने देखा है

मैंने यहाँ खुशहाल भारती में देखा, जंगल कुमार के कमरे में देखा। मेरा आदमी कहता है शहर चल तुझे भी पंखे और बत्ती में सुलाऊँगा, मैं पूछती हूँ कब ले चलेगा तो चुप हो जाता है यहाँ तो हम ढिबरी में रात गुजारते हैं, उसके लिए भी किरासिन तेल का टोटा पड़ा रहता है, जैसे तेल नहीं घी हो रात गहराते ही बुझा देते हैं ढिबरी कि बेशी तेल न जले, एक बार ढिबरी बुझाने गयी कि कैसे तो धक्का लग गया और ढिबरी का जलता तेल मेरे पाँव पर गिर पड़ा तो मेरे ससुर कहे कि इतना तेल बर्बाद किया उन्हें यह चिंता नहीं थी कि मेरा पाँव जल गया, अब मेरा आदमी पूरी रात बिजली के लट्टू में रहता है अकेला नहीं, आठ लोगन के साथ एक कमरा में रहता है। इसीलिए तो मुझे नहीं ले जाता, मैं सब समझती हूँ। हरेक को किराया देना होता है मुझे ले गया तो दो का किराया देना पड़ेगा।

बाप रे! मैं स्तब्ध थी संसार की भयावह सच्चाइयों से हर दिन एक नया परिचय हो रहा था मेरा कल सिर्फ कुछ खानेवाले पत्तों के लोभ में एक आदिवासी युवती हादसे में अपने प्राण गँवा बैठी और आज का यह सत्य कहाँ ठहरते हैं इनके दुखों के आगे मेरे दुःख मैंने कभी नहीं सोचा था कि इस तरह का भी जीवन हो सकता है मुझे अपच हो रहा था। मैंने और पूछना बंद किया बस उसे देखती रही उसकी आँखों में पति मिलन के स्वप्न अंखुआ रहे थेण्उसे रोकना उसपर अन्याय करना होता मैंने अपने को रोका और उसे जाने दिया बस एक रात की ही तो बात थी, अगली सुबह मुझे रांची एक्सप्रेस से कोलकाता के लिए रवाना हो ही जाना था। जाने की व्यवस्था 'खुशहाल भारती' के कार्तिक दा के जिम्मे थी। नयी पीढ़ी की मंगला ने जाने के पहले छोटे से शीशे में अपने चेहरे का मुआयना किया बाल ठीक किये, फिर बैग से फेयर एंड लवली का छोटा सा पाऊच निकाल क्रीम को अपने चेहरे पर मला मैं हैरान तो तुम्हें कहा से मिला यह रघुबर ने दिया था, मुझसे कहा इसको लगा तू भी गौरी हो जाएगी दिल्ली से लाया होगा, मेरे मुंह से निकला नहीं दीदी यहाँ हाट में भी मिलता है हाट में हाँ, हर सप्ताह यहाँ हाट लगती है, आस पास के सभी गाँव के लोग दस दस मील चलकर हाट से सामान खरीदते हैं हम एक साथ सप्ताह भर के खाने का सामान खरीद लेते हैं। सब चीज मिलती है वहां धान ज्वारी, सब्जी, हडिया, ताड़ी, चप्पल,

खिलौने, कपड़ा, मिल की साड़ी, बर्तन, रस्सी, घड़े, पाउडर, क्रीम, साबुन, कंघी, इत्र फुलेल, लिपिस्टिक से लेकर गाय, भैंस, बकरी तक बिकती है और हाँ दीदी, फेयर एंड लवली भी मिलता है। वाह! बिजली चाहे नहीं पहुँची हो पर यहाँ भी पहुँच गया फेयर एंड लवली पर फेयर एंड लवली के लिए पैसे बच जाते हैं। वह शर्मा गयी मेरा आदमी कहता है, फेयर एंड लवली लगाएगी तो तुझे भी दिल्ली में कोई छोटी मोटी नौकरी मिल जाएगी। सच दीदी, उसने अपनी आँखों से टीवी में देखा था कि एक लड़की ने फेयर एंड लवली लगाया और उसे तुरंत नौकरी मिल भी गयी मेरा आदमी कहता है नहीं तो यहाँ जिन्दगी भर दूसरों के खेत में आलू प्याज ही रोपती रहना या बोक्साइट के खदान में ही जवानी गलाती रहना अपनी बहन की तरह इसलिए सब्जी का पैसा बचाकर खरीद लेती हूँ। बिना सब्जी के रोटी कैसे खा सकती हो।

कम सब्जी से काम चला लेते हैं क्या करूं, हमरा आदमी कहता है कि पेट में खाया कोई नहीं देखता, पर शहर में नौकरिया के लिए समार्ट और सुन्दर दिखना जरूरी है फिर मैडम सब्जी तो हम इन सालों में खाने लगे हैं जबसे जंगल कुमार ने बिशुनपुर की सब्जियों को बिशुनपुर में ही बेचना शुरू किया है उसके पहले तो हम को नार के पत्ते उबालकर उसी से चावल खाते थे। हमारी सारी सब्जियाँ हाथों हाथ बिककर लोहरदगा बाजार में में चली जाती थी यहाँ तो हाल यह था कि दस आदमी भी घर में आ जाए तो सब्जी के लिए लोहरदगा जाना पड़ता था।

ऐसा क्यों?

जंगल कुमार ने सिखाया पहले खाने की सोचो, बाद में बेचने की सोचो। तुमने बोक्साइट के खदान की बात कही थी क्या तुम्हारा कोई काम करता है बोक्साइट के खदान में

मेरी बहन मैडम देर रात तक काम करना पड़ता है, क्या बताएं मैडम कई बार वहां औरतों के साथ कुकर्म भी हो जाता है खुद मेरी बहन पेट से हो गयी थी हरामी था कांट्रेक्टर तिवारी, साले को बाघ खा जाए, भेड़िया उठा के ले जाए। जंगल कुमार ने बहुत चेष्टा करी उसको अन्दर करवाने की नियम बनबाने की कि औरतन को रात में काम न करना पड़े, पर हम काम नहीं करेंगे तो खाएंगे क्या?

तुम पहुँचोगी तब तक तो घुप्प अँधेरा हो जाएगा, जंगल से होकर गुजरोगी, कोई भालू भेड़िया मिल गया तो तुम्हें डर नहीं लगेगा वह हंस दी मैडम मुझे डर न अंधेर से लगता है, न जानवरों से। तो किससे लगता है डर मुझे डर लगता है इंसानों से मेरी बहन की जिन्दगी किसने ख़राब की न अँधेरे ने न भालू ने न भेड़िये ने भालू हमारे इलाके में आता है, क्यों? क्योंकि हमने उससे उसका जंगल छीन लिया खुशहाल भारती के पीछे की खाली जगह पर हमलोगों ने बड़ी वैरायटी वाली मूंगफली की फसल लगाई थी, बिरसा बोल्ड मूंगफली लेकिन पौधे अभी तैयार भी नहीं हुए थे कि खुशहाल भारती के बच्चों ने उसे खाना शुरू कर दिया। मैंने मना किया तो श्रम निकेतन की सहायिका चन्द्रमति कहने लगी भालू चोर है, सारी फसल खाकर नष्ट कर रहा था तो वह खाए उससे अच्छा है कि हम ही खा ले तब जंगल कुमार ने कहा चोर भालू नहीं चोर हम हैं,आज जहाँ यह खेत है, पहले वह भालू का घर था, तब हम उसे चोर नहीं दोस्त कहते थे हमने उससे उसका घर छीन लिया, तो भालू कहाँ जाएगा जंगल कुमार को खतरा किससे है न अँधेरे से न जानवरों से उन्हें खतरा है उनसे जो हमसे हमारा घर जंगल छीन रहे हैं लेकिन हम भालू की तरह चुप नहीं रहेंगे नहीं तो बदली परिस्थिति में हमें भी चोर कहा जाएगा मैं चुप! चुपचाप देखती रही उसे उसके तेवर उसने दरवाज़े के पीछे से एक पोलीथिन बैग निकाला और उसके अन्दर में जतन से रखी अपनी चप्पल बाहर की, अपनी फटी बिबाइयों वाले पैरों को उसमें डाला और चल दी।

हल्के हील की यह चप्पल भी क्या तुम्हारा रघु लाया है वह हंस दी आपको लगता है कि हर चीज दिल्ली से ही आती है नहीं, उन दिनों तेंदू पत्ते बेचकर मैंने पचास रुपल्ली कमाए थे यह चप्पल मैंने अपनी सहेली से वे ही पचास रुपल्ली और दो जोड़ी मुगी के बदले में ली। जाते जाते उसने हाथ हिलाया, पेड़ लगाने वाले हाथों से सुन्दर उसके हाथ! मैं देखती रही, सोचती रही फूल, पत्थर और मयूर पंखों से खुद को सजानेवाली आदिवासी की यह एकदम ताजा पीढ़ी सचमुच अब बदल रही थी देख रही थी। क्षितिज के पार पहचान रही थी अपने दुश्मनों को।

परमात्मा नदारद है

हरिप्रकाश राठी

तब चारों ओर शून्य था, मात्र शून्य। सर्वत्र अंधेरा था, गहन अंधेरा। परमात्मा ध्यानमग्न, चिर योगनिद्रा में सोया था। समूचे शून्य में मात्र उसके अतिरिक्त और कहीं कुछ भी नहीं था।

सहस्रों वर्षों की योगनिद्रा के पश्चात् परमात्मा जागा तो उसने दोनों हाथ ऊपर कर अंगड़ाई ली, स्वयं को प्रमादहीन किया, तत्पश्चात् सोचने लगा, अगर मैं ही कर्महीन हो गया तो समूचा अंतरिक्ष प्रमादयुक्त होकर यथास्थिति ठहर जाएगा।

परमात्मा एक अभिनव संकल्प के साथ उठ खड़ा हुआ। अंतरिक्ष को क्षुब्ध कर उसने असंख्य तारों का निर्माण किया। इन्हीं तारों के निर्माण के साथ असंख्य आकाशगंगा, निहारिकाएं, उल्कापिण्ड, पुच्छल तारे एवं अन्य क्षुद्र तारे यहां तक कि छोटे-बड़े ब्लैकहोल तक बन गए। यह एक अद्‌भुत दृश्य था। इन्हीं भौतिक पिण्डों में जब उसने अपनी चैतन्य शक्ति का स्फुरण किया तो सभी गतिशील हो गए।

वह इतने भर से नहीं रुका। उसने पुनः अपनी भौतिक एवं चैतन्य शक्तियों के ओज से पृथ्वी का सृजन किया, तत्पश्चात् सूरज चांद बनाए ताकि पृथ्वी पर आधा समय दिवस एवं आधा समय रात्रि हो सके। उसके पश्चात् पुनः पंचतत्त्वों को क्षुब्ध कर प्रकृति का निर्माण किया तो एकबारगी समूची पृथ्वी कांप उठी। पृथ्वी पर जल, अग्नि, वायु, आकाश एवं छिति के संसर्ग से यत्र तत्र समुद्र, नदियां, तालाब बन गये एवं इन्हीं के पुनः पुनः संयोग से बादल बने, झमाझम बरसात हुई एवं देखते-देखते असंख्य वनस्पतियां उग आई। पृथ्वी को शस्य श्यामला देख परमात्मा मुस्कुरा उठा।

अब परमात्मा के मन मस्तिष्क में संकल्प दर संकल्प उठते गए। उसने अपने झोले से असंख्य बीज निकाले एवं इन बीजों को फूंका तो पृथ्वी पर यत्र-तत्र अनेक पशु-पक्षी विचरने लगे। पृथ्वी चहक उठी।

यकायक परमात्मा के चेहरे पर विषाद के भाव उभर आए। इन सभी प्राणियों में कोई भी ऐसा नहीं था जो उसकी प्रतिकृति हो, उसके जैसा बुद्धिमान, विवेकशील एवं श्रमवीर हो। थके हुए परमात्मा ने तब अपने माथे का पसीना पौंछा, इन्हीं श्रमकणों में पहले अपनी चैतन्य शक्ति एवं तत्पश्चात् पंचतत्त्वों को क्षुब्ध कर प्रथम पुरुष का सृजन किया। वह पुरुष ठीक वैसा ही था जैसे एक दीपक से जलकर दूसरा दीपक उतना ही प्रकाशमान हो जाता है। ऐसी सुन्दर प्रतिकृति देख परमात्मा प्रसन्नता से सराबोर हो गया। उस पुरुष के समीप आकर उसने उसके कंधे पर हाथ रखा, उसे अत्यन्त स्नेहभरी आंखों से देखकर बोला, “वत्स! तुम मेरी अनुकृति, प्रतिकृति एवं पराकल्पना हो। तुम्हारे मेरे मध्य किंचित अंतर ही है। जब तुम मेरे जैसे बन जाओगे, तुम क्षणभर भी पृथ्वी पर नहीं रहोगे, सीधे मेरे पास चले आओगे। मुझे पाना तुम्हारी दौड़ होगी, यही तुम्हारी मुक्ति भी होगी।”

इतना कहकर परमात्मा पुनः कुछ समय के लिए योगनिद्रा में चला गया।

चकित, भ्रमित पुरुष ने पृथ्वी का कार्यभार संभाला। अथक श्रम कर उसने पृथ्वी का कायाकल्प कर दिया। इतना सब कुछ करने पर भी उसके भीतर एक विचित्र अपूर्णता, रिक्तता बनी रहती। वह दिन भर दौड़ लगाता पर उसे मंजिल नहीं दिखती। अंततः अवसादग्रस्त, बेचैन होकर वह एक पेड़ के नीचे बैठ गया।

परमात्मा योगनिद्रा से पुनः जागा एवं पुरुष की ऐसी दशा देखी तो सोचमग्न हो गया। उसने पुरुष के पास जाकर बेचैनी का कारण पूछा तो पुरुष ने उत्तर दिया, “प्रभु! मेरा अकेले मन नहीं लगता। इन पशु-पक्षी वनस्पतियों को देख देखकर मैं उकता गया हूं। इनमें से कोई भी मुझसे बातें नहीं करता, मैं अपने मन का रेचन किसके सम्मुख करूं?

श्रम करते-करते अनेक बार मैं बेहाल हो जाता हूं, तब मुझे लगता है कोई मेरे श्रम की सराहना करे, मेरा स्पर्श करे, मेरी थकान दूर करे।

तब परमात्मा पुनः मुस्कुराया। इस मुस्कुराहट के नेपथ्य

में अनेक पेच एवं अनंत रहस्य छुपे थे।

"तुम चिंता न करो। मैं अवश्य तुम्हारे लिये कुछ करूंगा।'' यह कहकर परमात्मा चुप हो गया।

"लेकिन जो करें, देव! जल्दी करें। मैं हताश हो चुका हूं। ऐसा न हो इन्तजार करते मैं मर ही जाऊं।'' विवश, थके पुरुष ने परमात्मा से आग्रह किया।

"तू यहीं ठहर! कुछ दिन बाद मैं तुमसे यहीं मिलूंगा।' इतना कहकर परमात्मा वहां से चलकर दूर एकांत जंगल में आकर बैठ गया। उसने वहीं बैठे मिट्टी का एक लौंदा लिया, पुनः पंचतत्त्वों को क्षुब्ध कर कुछ बनाने ही वाला था कि उसकी पीठ पर पड़ती तेज धूप ने उसका ध्यान भंग किया। उसने धूप की तेजी को महसूस किया, सोचा, इतनी तेज धूप में वनस्पतियां, जीवजन्तु जल जाएंगे। उसने धूप से किंचित् तेज, ओज एवं रूप निकालकर उस लौंदे में प्रतिष्ठित किया। ऐसा करते हुए उसने जंगल के चारों ओर नजर दौड़ाई।

वहां डालियों पर अनेक सुन्दर फूल झूम रहे थे। इन फूलों से भीनी-भीनी महक आ रही थी। इनके चारों ओर तितलियां, भौंरे मंडरा रहे थे। पेड़ों पर कोयल कूक रही थी।

परमात्मा पुनः एक अभिनव संकल्प से भर उठा। उसने फूलों से कोमलता, तितलियों से चंचलता एवं भौरों से किंचित् बावरापन लेकर उस लौंदे में प्रतिष्ठित किया। इस अद्भुत मिश्रण को देख परमात्मा स्वयं भ्रांत हो गया। उसे लगा यह क्या हो गया वह इस लौंदे को बिखेरने ही वाला था कि यकायक वहां अनेक प्रकार की चिड़िया, पक्षी आदि आकर नाचने लगे। उनकी अदाएं, शोखियां अत्यन्त मन भावन थी। पूर्ण के दर्शन कर अंश का उन्मत्त होना लाजमी था। परमात्मा ने मन बदला। उसने इन पक्षियों से किंचित् शोखियां, अदाएं प्राप्त कर उस लौंदे में डाल दी। तभी दूर पेड़ पर एक कोयल की आवाज सुन परमात्मा मुग्ध हो गया। क्या उसका सृजन इतना अद्भुत था लेकिन यह क्या! परमात्मा के देखते-देखते वही कोयल पेड़ से उतरकर उसके समीप आई एवं उसके चरणों में लोट गई। उसके पीछे-पीछे एक कौवा कांव-कांव करता चला आ रहा था।

परमात्मा ने कोयल के सर पर हाथ फेरते हुए कहा, "मृदुभाषिणी! तुम्हें क्या कष्ट है''

"आपने मेरी आवाज इतनी मीठी बनाई है कि जंगल में अनेक बार जब मैं कूकती हूं, पशु-पक्षी निद्रा में चले जाते हैं। इतना ही नहीं, यह ईर्ष्यालु कौवा मेरे अण्डे तक उठा ले जाता है।'' कहते-कहते कोयल कांपने लगी।

"तुम चिंता न करो। मैं तुम दोनों की समस्या हल कर दूंगा।'' परमात्मा ने उसे आश्वस्त किया।

परमात्मा ने तब कोयल से किंचित् मिठास एवं कौवे से कड़वी वाणी लेकर उसे भी इस लौंदे में प्रतिष्ठित कर दिया।

परमात्मा ने ऐसा किया ही था कि जंगल में चारों ओर चीत्कार के शब्द आने लगे। परमात्मा ने आंख उठाकर देखा। सभी जानवर शेर से डरकर भाग रहे थे। परमात्मा ने तब शेर से किंचित् साहस खींचकर उस लौंदे में डाल दिया।

शेर के पीछे-पीछे उन्मत्त चाल में चलता हुआ हाथी आया। वह अपनी सूंड को ऊपर नीचे कर अनेक करतब दिखा रहा था। परमात्मा ने उसकी सूण्ड का सारतत्त्व लेकर लौंदे की जांघों में प्रतिष्ठित किया।

तभी वहां भागते हुए खरगोश आया। वह कांप रहा था। ओह! वह कितना कोमल था। परमात्मा ने उसे अपने हाथों में लेकर सहलाया, फिर बोले, "तुम इतना कांप क्यों रहे हो''

"प्रभु! मेरे पीछे लोमड़ी लगी है।'' कांपते हुए खरगोश ने उत्तर दिया।

तभी उसके पीछे लोमड़ी आकर खड़ी हो गई।

परमात्मा को लगा खरगोश को इतना भीरु एवं लोमड़ी को इतना चालाक नहीं होना चाहिए। उन्होंने दोनों का किंचित् सारतत्त्व लेकर लौंदे में रख दिया।

तभी वहां एक हिरनी दौड़ती हुई आई। ओह! उसकी चाल कितनी तेज, सुन्दर थी। परमात्मा ने उसकी चाल से किंचित् सार लेकर लौंदे में प्रतिष्ठित किया।

यकायक वहां बादल उमड़ने-घुमड़ने लगे। परमात्मा ने लौंदा अपने हाथ में लिया एवं वहां से थोड़ी दूर एक गुफा के भीतर चला आया। वहां दीवारों पर गोहें अर्थात बड़ी-बड़ी छिपकलियां चिपकी थी। वे इतनी हठी थी कि वर्षों टस से मस नहीं होती थी। दीवारों के कोने में कुछ विषधर सर्प घूम

रहे थे। गुफा के दांये कोने में उल्लू बैठा था, छत पर चमगादड़ें लटक रही थी। दूसरे कोने में एक-दो गिरगिट घूम रहे थे। परमात्मा ने इनसे भी कुछ-कुछ लिया एवं लौंदे में डाल दिया।

यकायक परमात्मा को लगा पुरुष उसकी राह तक रहा होगा। उसने लौंदे की ओर देखा। यह तो विचित्र, अगड़म-बगड़म मसाला तैयार हो गया। लेकिन अब क्या हो सकता था? देरी बढ़ती जा रही थी। परमात्मा ने अब अपनी शक्तियों को केन्द्रित कर लौंदे को सम्भाला, उसे ठीक से अवस्थित किया, तत्पश्चात् उसमें प्राण फूंक दिए।

परमात्मा के सामने अब एक अप्रतिम सुंदरी खड़ी थी। उसकी मुस्कुराहट, रूप लावण्य देखते बनता था। वह नख शिख सौन्दर्य की मूर्ति थी। उसे देख परमात्मा स्वयं उस पर फिदा हो गया। उसने उसकी ओर देखा तो वह हिरणी की तरह दौड़ी, परमात्मा उसके पीछे भागा तो वह वहां आ गई जहां पुरुष लेटा था। उसे देखकर पुरुष चकित रह गया। उसके भीतर सैंकड़ों बिजलियां एक साथ कौंध गई। वह उसे छूने के लिये लालायित हो उठा। तभी वहां परमात्मा तेज गति से चलकर आए एवं पुरुष की ओर देखकर बोले, "यह नारी है। इसे मैंने तुम्हारे लिए बनाया है। इसमें अनेक गुण अवगुण हैं। तुम इसे दौड़कर भी नहीं पकड़ पाओगे एवं अनेक बार यह तुम्हें सहज ही मिल जाएगी। तुम्हारे समीप होने पर भी यह तुम्हारी पकड़ से दूर होगी। इसमें फूलों की कोमलता, तितलियों-सी चंचलता होगी। इसकी वाणी कोयल जैसी मीठी होगी। कभी-कभी कौए की तरह इतना कांव-कांव करेगी कि तू परेशान हो जाएगा। इसमें खरगोश का भीरुपन एवं शेर का साहस भी होगा। यह ऐसे साहसी कार्यों को अंजाम दे देगी जिसके बारे में तू वर्षों सोचता रहेगा। छिपकलियों से सारतत्त्व लेने के कारण यह हठी भी होगी। इसका हठ जगतविख्यात होगा। इसमें लोमड़ी की चालाकी भी होगी।"

"मैं समझा नहीं प्रभु!" पुरुष हाथ जोड़कर बोला।

"यह सरल भी होगी कठोर भी होगी। तंगदिल भी होगी उदार भी होगी। यह चौकन्नी भी होगी, देखकर भी नहीं देखेगी एवं न देखकर भी सबकुछ देख लेगी। सुनकर भी नहीं सुनेगी न सुनकर भी सबकुछ सुन लेगी। वैसे इसे दो दिन पुरानी बात याद नहीं रहेगी, लेकिन अपनी पर उतर आई तो वर्षों पुरानी बात दोहरा देगी। इस अनंतगुणी में अन्य अनेक गुण भी होंगे।"

"क्या प्रभु!" विस्मयविमुग्ध पुरुष ने पूछा।

'मैंने मनोयोग से इसका सृजन किया है अतः यह परम बुद्धिमान होगी लेकिन उल्लू से किंचित् सारतत्त्व लेने के कारण कभी-कभी परम मूर्खता का प्रदर्शन भी करेगी। कभी-कभी यह गिरगिट की तरह रंग भी बदलेगी। इसके इन्हीं गुणों पर रीझ कर तू इसे बेहद प्रेम करेगा। इसका हृदय विशाल एवं यह ममता की आगार होगी। अपनी संतानों के लिए यह जान तक दे देगी। इसमें नशा भी होगा एवं यह तेरा नशा काफ़ूर भी कर देगी। यह वफ़ा की देवी होगी पर तुमने इसे भड़काया तो बेवफ़ाई से गुरेज भी नहीं करेगी। यह सत्य भी बोलेगी, झूठ गढ़ने में भी पारंगत होगी। इन सबके बावजूद यह तुम्हारी सच्ची पथगामिनी होगी।" परमात्मा धाराप्रवाह बोलता गया।

"प्रभु! क्या मैं इसके साथ रह लूंगा" इस बार प्रश्न करते हुए पुरुष की आँखें फैल गई।

"तू इसके साथ रह भी लेगा, न भी रह सकेगा। इसके साथ और इसके बिना दोनों अवस्था में तेरी हालत देखने लायक होगी। चिंता न कर! बस इतना भर स्मरण रखना की तुम अगर इसके दुर्गुणों को पचा सके तो यह अपने अद्भुत गुणों से तुम्हारा जीवन धन्य कर देगी। जहां इसका आदर हुआ वे परिवार स्वर्ग से अधिक सुखकर होंगे एवं जहां अनादर मिला वे परिवार दोजख की आग में जल उठेंगे। इससे ज्यादा और क्या कहूं? संक्षेप में यही कहूंगा कि तुम इसे समझ पाए तो यह तुम्हारे आनंद का स्रोत बन जायेगी एवं न समझ पाये तो मुक्ति का सोपान बन जाएगी।" कहते हुए परमात्मा कुछ क्षण के लिए ठहर गया।

पुरुष के माथे पर पसीने की बूंदें उभर आई।

"प्रभु क्या मैं आपकी इस अगड़म बगड़म कृति को सम्भाल लूंगा?" कहते हुए पुरुष के मस्तिष्क में हजारों प्रश्न उभर आए।

"अब जो बन गया सो बन गया। तू इसे संभाल सकता

है तो बता! मैं तो इसे बनाते हुए इतना थक गया हूं, कनफ्यूज भी हो गया हूं कि फिलहाल नया सृजन असंभव है। तू कहे तो इसे नष्ट कर दूं? अगली बार योगनिद्रा से लौटकर सबसे पहले तुम्हारी इच्छा पूरी करूंगा।'' उत्तर पूरा करते हुए इस बार परमात्मा ने पुरुष के कन्धे पर हाथ रखा।

"प्रभु! इसकी कोई कमजोरी भी तो बताओ?'' प्रश्न करते हुए पुरुष की सांस फूल गई।

"इसकी एक मात्र कमजोरी इसकी प्रशंसा होगी। प्रशंसा की आंच में इसके तमाम कष्ट, अवसाद एवं कुंठाएं पिघल जाएगी।'' उत्तर देते हुए परमात्मा का स्मितहास देखने लायक था।

अब परमात्मा चुप खड़ा था।

वर्षों के इंतजार में थके मांदे पुरुष ने नारी की ओर पुनः देखा तो वह मुस्कुराकर उसकी ओर आई। उसकी मुस्कुराहट में असंख्य पेच एवं अगणित शोखियां थी। उसने आगे बढ़कर पुरुष का हाथ अपने हाथ में लिया तो पुरुष के शरीर में सनसनी फैल गई। वह अद्भुत रोमांच से भर गया। उसकी नस-नस, बोटी-बोटी में विद्युत प्रवाह बह गया। उसे लगा वह उसके बिना रह नहीं सकता। बदहवास उसने उसे आगोश में ले लिया। वह उसकी देहयष्टि के नशे में आकण्ठ डूब गया।

कुछ देर पश्चात पुरुष होश में आया तो उसने मुड़कर देखा।

परमात्मा वहां नहीं था।

अब उसके पास विकल्प ही क्या था

सदियां बीत गई, पुरुष आज भी विकल्प ढूंढ रहा है। मंदिरों, मस्जिदों, गिरजों, गुरूद्वारों में माथा टेक रहा है। ग्रन्थों में सर खपा रहा है।

वह पुकारे भी तो किसे

तब से परमात्मा भी तो नदारद है।

लघुकथा

राजनीति

कमलेश भारतीय

एक आदमी की दूसरे आदमी से लडाई हो गयी। बढ़ते बढ़ते बात हाथापायी तक आ गयी। पहले आदमी के हाथ लाठी लग गयी। जिससे उसने दूसरे आदमी पर भरपूर वार किए। दूसरा आदमी घायल हो गया। छटपटाने लगा बुरी तरह।

पहला भाग निकला। दूसरे ने हाय तौबा मचाई। आने जाने वालों से गुहार की मदद की।आदमी और आदमियत के वास्ते दिए। रहम खाने की दुआ की लेकिन किसी के भी कान पर जूं नहीं रेंगी।

आखिर वह पूरे जोर से चिल्लाया कि मैं दलित हूं। बस फिर क्या था। उसकी मदद के लिए आदमी तो क्या अनेक राजनैतिक पार्टियां आ गयीं। इससे पहले कि कोई घायल आदमी की दवा दारू का प्रबंध करती कि सभी ने उसकी सुरक्षा के दावे करने शुरू कर दिए। सभी पार्टियां एक से बढ कर एक दावे करने लगीं कि हमसे बढ़कर कोई इसकी हितैषी नहीं। बहस बढती गयी। इसी दौरान वह घायल आदमी दम तोड़ गया।

राजनैतिक पार्टियों ने श्रद्धांजलि के पुष्पार्पित किए और चलती बनीं। बाद में आदमियों ने उसका अंतिम संस्कार किया। फिर सरकार ने इस घटना की न्यायिक जांच के आदेश दे दिए।

डिनर सेट

रंजना जायसवाल

मेहमान सब चले गए थे, घर समेटते-समेटते हाथ दुखने लगे थे। पारुल को इस घर में आये चार ही दिन तो हुए थे, नई-नवेली दुल्हन से कुछ काम कहते बनता भी नहीं था। तभी सक्सेना जी ने आवाज लगाई। निर्मला! काम होता रहेगा, लगे हाथ शादी में आये उपहारों को भी देख लो। कल हमें भी तो देना होगा।

ये काम निर्मला को सबसे ज्यादा खराब लगता था। सक्सेना जी को बातों का पोस्टमार्टम करने में बड़ी मजा आता था। अरे भाई किसी से उपहार लेने के लिए थोड़ी आमंत्रित करते हैं। आदमी की अपनी श्रद्धा और सोच जैसा चाहे वैसा दे। कोई रिश्तेदार या जान-पहचान वाला सस्ता उपहार दे दे तो सक्सेना जी हत्थे से उखड़ जाते। ऐसे कैसे दे दिया कम से कम हमारी हैसियत तो देखनी चाहिए थी। लोग एक बार भी सोचते नहीं कि किसके घर दे रहे हैं।

और अगर कोई अच्छा उपहार दे दे तो

"इसमें कौन सी बड़ी बात है भगवान ने दिया है तो दे रहे हैं।" निर्मला कहती, हमें भी तो उन्हें देना पड़ेगा सिर्फ लेना ही तो संभव नहीं है। हमारा उनसे क्या मुकाबला वह चाहे तो इससे भी अच्छा दे सकते थे खैर सक्सेना जी ने अपने बेटे आयुष और बहू पारुल को आवाज लगाई।

"आयुष! मम्मी का लाल वाला पर्स अलमारी से निकाल लाओ और वहीं बगल में गिफ्ट्स भी रखे हैं। पारुल बेटा ये डायरी और पेन पकड़ो और लिखती जाओ।"

"जी पापा!"

"आप भी न हर बात की जल्दी रहती है आपको घर में इतने सारे काम पड़े हैं। अरे हो जाता ऐसी भी क्या जल्दी है। निर्मला ने बड़बड़ाते हुए कहा, रंग-बिरंगों कागजों में लिपटे उपहार कितने खूबसूरत लग रहे थे। ये उपहार भी कितनी गजब की चीज़ हैं, कुछ के लिए भावनाओं के उदगार को दिखाने का माध्यम बनते हैं तो कुछ के लिए सिर्फ औपचारिकता पुष्प गुच्छ उसे कभी समझ नहीं आते थे। कभी-कभी लगता सामान देने का मन नहीं, लिफाफा बजट से ऊपर जा रहा तो इसे ही देकर टरका दो। खुशियों की तरह इनकी जिंदगी भी आखिर कितनी होती है।

"अरे ध्यान से उपहार खोलो, पैकिंग पेपर कितना सुंदर है। गद्दे के नीचे दबाकर रख दूँगी सब सीधे हो जाएंगे। किसी को लेने-देने में काम आ जाएंगे।"

निर्मला ने हाँक लगाई, "क्या मम्मी तुम भी न यहाँ लाखों रुपये शादी में ख़र्च हो गए और तुम वही दस-बीस रुपये बचाने की बात करती हो।" नई-नवेली पारुल के सामने आयुष का यूँ झिड़कना निर्मला को रास नहीं आया पर क्या कहती हम गृहणियाँ इन छोटी-छोटी बचतों से ही खुश हो जाती हैं। उनकी इस खुशी का अंदाजा पुरुष नहीं लगा सकते। लाखों के गहने खरीदने में उन्हें उतनी खुशी नहीं होती जितनी उसके साथ मिलने वाली मखमली डिबिया, जूट बैग या फिर कैलेंडर के मिलने पर होती है। चार सौ रुपये की सब्जी के साथ दस रुपये की धनिया मुफ्त पाने के लिए वे दो किलोमीटर दूर सब्जीवाले बेचने वाले के पास जाने में भी वे गुरेज नहीं करती। दाँत साफ करने से शुरू होकर, कुकर के रबड़ साफ करने तक वे एक ही टूथब्रश का इस्तेमाल करती हैं। उनकी यह यात्रा यहाँ पर भी समाप्त नहीं होती, ब्रश के एक भी बाल न बचने की स्थिति में वो पेटीकोट और पायजामें में नाड़ा डालने में उसका सदुपयोग करती हैं। ये आजकल के बच्चे क्या जानेंगे कि एक औरत किस-किस तरह से जुगाड़कर गृहस्थी को चलाती है। नींबू की आखिरी बूंद तक निचोड़ने के बाद भी उसकी आत्मा तृप्त नहीं होती और वो नींबू के मरे हुए शरीर को भी तवे और कढ़ाही साफ करने में प्रयोग में लाती हैं।

निर्मला चुप थी नई-नवेली बहू के सामने कहती भी तो क्या तभी निर्मला की नजर पारूल पर पड़ी, वो न जाने कब रसोईघर से चाकू ले आई थी और सर झुका, अपने मेंहदी लगे हुए हाथों से सावधानी से धीरे-धीरे सेलोटेप को काट रही

रही थी। बगल में ही उपहारों में चढ़े रंगीन कागज तह लगे हुए रखे हुए थे। पारुल की निगाह निर्मला से टकरा गई, निर्मला की आँखों मे चमक आ गई। दिल में एक भरोसा जाग गया, उसकी गृहस्थी सही हाथों में जा रही है। उसे अब इस घर की चिंता करने की कोई जरूरत नहीं है। पारुल पढ़ी-लिखी लड़की है वो अच्छे से उसकी गृहस्थी सम्भाल लेगी।

"ये जो इतना रायता फैला रखा पहले इसे समेटो।

ऐसा है पहले ये सारे उपहार खोलकर नाम लिखवा दो, फिर लिफाफे देखना।"

निर्मला ने आयुष से कहा, किसी में बेडशीट, किसी में गुलदस्ता, किसी में पेंटिंग तो किसी में घड़ी थी।

"जरा संभालकर! शायद कुछ काँच का है। कहीं टूट न जाये।"

निर्मला के अनुभवी कानों ने आवाज से ही अंदाजा लगा लिया।

"माँ! देखो कितना सुंदर डिनर सेट है।"

आयुष ने हुलस कर कहा, निर्मला ने डिनर सेट की प्लेट पर प्यार से हाथ फेरा।

"निर्मला जरा इधर तो दिखाओ, किसने दिया है भाई बड़ा सुंदर है।"

"मथुरा वाली दीदी ने दिया है, कितना सुंदर है न"

"हम्म! पर इसमें तो सिर्फ चार प्लेट और चार कटोरियाँ है। ये कौन सा फैशन है। आजकल की कंपनियों के चोंचले समझ ही नहीं आते।"

"समझना क्या है ठीक तो है। माँ बाप और बच्चे।"

"और हम"

सक्सेना जी ने दबे स्वर में कहा, सक्सेना जी का चेहरा उतर गया था, निर्मला कुछ-कुछ समझ रही थी। आखिर तीस साल-साथ बिताए थे। निर्मला ने हमेशा की तरफ बात को संभाला, "वो भी तो वही कह रहा है, माँ-बाप और बच्चे।"

सक्सेना जी ने दबे स्वर में बड़बड़ाते हुए कहा कौन से माँ-बाप और कौन से बच्चे वर्तमान वाले या फिर भविष्य वाले।

लघुकथा

असली जरूरतमंद

वत्सला भारद्वाज

मंदिर से बाहर निकलते ही एक वृद्ध महिला सामने आकर खड़ी हो गई। एक दो नहीं पूरे सौ रुपये की मांग की। मैं हतप्रभ। पूछा तो कहने लगी, मेरी पोती अस्पताल में पड़ी है। उसके सुई लगानी है, उसमें पैसे कम पड़ रहे हैं। मंदिर के पुजारी ने भी पचास रुपये दिए हैं। बिन मां बाप की बच्ची है। मदद कर दो।

मैं सोच में पड़ गई। आजकल दवा और बीमारी के नाम पर बहुत से लोग ठगी करते देखे गए हैं। समझ नहीं आ रहा था कि मदद करनी चाहिए या नहीं।

कुछ सोचकर मैंने कहा, अस्पताल की पर्ची दे दो, मैं ला देती हूं।

वह कहने लगी, वो तो नहीं है।

मैंने कहा, बिना पर्ची के दवा कैसे लाओगी?

उसने कहा, अस्पताल में मुफ्त इलाज होता है। लेकिन आज अस्पताल की छुट्टी है। इसलिए सुई बाहर से लेनी है।

मैंने दिमाग पर जोर डाला। आज किस बात की छुट्टी है? लेकिन कोई ऐसा अवसर नहीं था जो अवकाश हो। फिर भी अवकाश पर नर्सिंग स्टाफ तो रहता ही है। मेरा "शक पक्का हो गया। कुछ गड़बड़ सा मामला लगा। हांलांकि मेरे पास उसको देने के लिए पर्याप्त राशि थी, पर मैंने दस रुपये दिए और घर आ गई।

जेहन में कई देर तक उथल पुथल मची रही। क्या मैंने गलत किया या सही? यदि कभी वास्तव में कोई जरूरतमंद टकराया तो कैसे पहचानूंगी? मदद भी करना एक बवाल लगने लगा। बहुत से लोग मदद से वंचित रह जाते हैं और ढोंगी फायदा ले जाते हैं। क्या समय आ गया है? दान, पुण्य के लिए भी जरूरतमंद खोजने पड़ते हैं। आज याद आ रही थी, डाकू खड्गसिंह और बाबा भारती की कहानी। आज बाबा भारती की सीख चरितार्थ होती दिख रही थी। डाकू खड्गसिंह का छल फैल चुका है।

मैजिक

सविता चड्ढा

हेस्टिंग्स आए हुए मुझे बहुत वर्ष होने को है। यह लंदन से थोड़ा दूर एक बेहद साफ सुथरा गाँव है। मेरा यहाँ आना कैसे हुआ, मुझे भारत क्यों छोड़ना पड़ा, एक मार्मिक घटना है।

दिल्ली में, मैं सरकारी कार्यालय में एक अधिकारी के पद पर थी। एक दिन मेरे कार्यालय में एक व्यक्ति आया। वह बेहद काला था। उसकी आँखों में शायद कुछ दोष था जिस कारण उसने काला चश्मा लगाया हुआ था। उसकी नाक चेहरे पर अधिक फैली हुई लग रही थी तथा होंठ भी बड़े भद्दे से थे। कुल मिलाकर वह व्यक्ति दैत्य के आकार का, एक अजीब सा, अगर सच कहूं तो एक भद्दा दिखने वाला शख्स था। उसने मुझे अपनी संस्था की डायरी तथा कैलेंडर दिया। मैंने उसका आभार प्रकट किया।

शाम को जब मैं अपने दफ्तर से निकली तो वह अभी भी बाहर खड़ा था। मेरी बस दफ्तर के सामने ही रुका करती थी। उसकी ललचाई सी दृष्टि देख मैंने उसे अवहेलना भरी दृष्टि से देखा और पेड़ के नीचे खड़ी हो गई। मैं बस की प्रतीक्षा करने लगी और भी बहुत से लोग अपनी अपनी बसों की प्रतीक्षा में वहां खड़े हुए थे। वह चुपचाप दूर खड़ा देखता रहा। मेरी बस आ गई और मैं उसमें सवार हो गई। मैंने देखा वह भी मेरी बस में आ गया है। मैंने सोचा उसे भी इसी रूट की बस पर जाना होगा। बस में सीट मिलते ही मैंने टेक लगाई और आँखें मूँद ली। मैंने महसूस किया किसी का हाथ मेरे बालों को छू रहा है। मैंने पीछे मुड़ कर देखाए वह व्यक्ति मेरी सीट के ठीक पीछे की सीट पर बैठा है। मैंने उसे क्रोध में देखा पर वह घबराया नहीं, वैसे ही बैठा रहा मानो उसने जानबूझकर कुछ नहीं किया। मैंने फिर टेक लगा ली और आँखें मूँद ली पर उसके पीछे बैठने का एहसास मुझे बना रहा।

अगले दिन मैं अपने घर से ऑफिस के लिए अपने बस स्टॉप पर पहुंची तो वह पहले से ही वहां खड़ा था। उसे देखते ही मुझे क्रोध आ गया लेकिन वहाँ हमारी बस के नियमित यात्री खड़े हुए थे। मैं भी चुपचाप खड़ी हो गई। वह मेरे पास आया और अपने ब्राउन कोट की जेब से उसमें एक पुड़िया सी निकाली और कहा यह आपकी अमानत कल बस में गिर गई थी। मैंने उठाकर रख ली। मैंने जल्दी से वह पुड़िया पकड़ ली और इधर उधर देखा, कहीं किसी ने देखा तो नहीं।

मैंने पुड़िया खोली तो उसमें बालों में लगाने वाली हेयर पिन थी। मुझे लगा कल टेक लगाने से ये आसानी से मेरे बालों से गिर गई होगी। मैंने उसकी बात का कोई जवाब नहीं दिया और वह पुड़िया वहीं फेंक दी। उसने अपना रुमाल उस पुड़िया पर गिराकर वह हेयर पिन कोड पुनः अपनी जेब में रख लिया। मैं दिल ही दिल तिलमिला कर रह गई। बस आई और वह भी मेरे पीछे वाली सीट पर बैठ गया। मैं सारे रास्ते बेचैन रही।

उस दिन कार्यालय पहुंच कर मैंने अपनी एक मित्र आशा को बुलाया और पूछा "एक बात सच सच बताना, क्या मैं ऐसी दिखती हूं कि कोई मेरे पीछे पड़ जाए और कोई मुझे आसानी से उपलब्ध होने वाली समझ ले।"

आशा ने कहा था पागलों जैसी बातें करती हो, औरत जैसी भी हो, कैसा भी व्यवहार करें, पर कुछ आदमी उस पर हावी होने की कोशिश करते हैं। उसने कहा था आदमी तीन तरह के होते हैं, एक जो औरतों को देखकर राल टपकाते हैं, जिनकी राल दिख जाती है और दूसरे औरतों को देखकर अपनी पूछ सिकोड़ लेने वाले, मानों औरतें उन्हें देखते ही निगल जाएँगी। भाई

दोनों ही तरह के आदमी मुझे पसंद नहीं, तीसरी तरह के संयत व्यवहार के आदमी ही मुझे पसंद है।

आखिर बात क्या है, आशा ने मुझे पूछा तो मैंने आशा को सारी घटना बता कर कहा कि मुझे उस भद्दे आदमी से डर लगने लगा है। उस दिन आशा भी मेरे साथ ही दफ्तर से बाहर आई और बस आने तक मेरे साथ रही। उसे वहाँ न पाकर मैंने राहत की साँस ली। आशा को वहीं छोड़ मैं बस में चढ़ गई। बस में बैठते ही मैंने देखा कि वह पहले से ही बस में बैठा हुआ है। उसे अनदेखा कर मैं ड्राइवर के केबिन में घुस गई। कैबिन में बैठने पर मैंने उसे देखा। वह इधर ही देख रहा था। उसने काला चश्मा अब उतार रखा था। उसकी आँखें एक मुर्दे की खुली आँखों जैसी लग रही थी। मैं बाहर सड़क की ओर देखने लगी।

एक-एक करके दिन यूँ ही गुजरते रहे। कई वर्ष तक लगभग हर रोज मुझे दिखा, उदास, निराश, वह मुझसे कोई बात नहीं करता था क्योंकि वह मुझ से डरता था। बहुत सारी घटनाएँ हैं जिनका मैं उल्लेख नहीं करना चाहती और उसकी श्रद्धा को मैं इस उम्र में बाजारु भी नहीं बनाना चाहती, हां कुछ विशेष घटनाओं का वर्णन संक्षेप में अवश्य करूँगी ताकि आपको आगे की कहानी पर विश्वास आ जाए कि मैं लंदन कैसे पहुँची।

उससे बचने के लिए निजी कार से मैंने दफ्तर आना जाना शुरू कर दिया, तो उसने भी कार खरीद ली। वह हमारी कार के आगे पीछे या साथ साथ ही रहता तो मैंने फिर बस में आना शुरू कर दिया। एक दिन हमारी बस नहीं आई तभी वह डरता हुआ मेरे पास आया और बोला हमारी कार में यदि आप बैठें तो हमारी अंतिम इच्छा पूरी हो जाए। मुझे उस पर बहुत क्रोध आया। जब उसने मुझे गुस्से में देखा तो कहा आज ना सही, कभी ना कभी तो मैं आपको अपनी कार में बिठाऊँगा ही। मैंने जवाब दिया था इंपॉसिबल, इस जीवन में तो नहीं।

इस पर उसने इतना ही कहा "गॉड इज ग्रेट।"

इन वर्षों में उसने कई प्रयास किए लेकिन मेरा पत्थर मन नहीं पसीजा। मैं जितना भी उसे कठोर बोलती, गालियाँ देती, वह हँसता रहता। हँसते हुए उसकी सूरत और भी भयानक लगती। एक बार तो मैंने उसे कह दिया, तुम जानवर हो, तुम्हें मर जाना चाहिए, क्यों मेरे पीछे पड़े हो। मैं उस दिन बहुत परेशान थी, मैंने कहा मैं तुम्हारी शक्ल देख लूँ तो मेरा ब्लड प्रेशर बिगड़ जाता है। मेरी इन बातों को वह आराम से सह गया और बोला मैं जानता हूं, आपका प्यार का ढंग हमेशा ही निराला रहा है।

शायद वे इस बात को इस तरह से लेता रहा था कि अगर मैं उससे परेशान हूँ तो मैंने अभी तक अपने परिवार को, अपने घर वालों को उसके बारे में क्यों नहीं बताया। हालाँकि उसने अपनी पत्नी को मेरे बारे में कुछ कुछ बता दिया था, ऐसा उसने मुझे एहसास कराया था। उससे अगले दिन जब वह मेरे दफ्तर में आया तो बोला वंदना जी बहुत हो चुका, इतने बरस कुछ कम नहीं होते, मैंने बहुत तपस्या की है आपके लिए, सिर्फ एक बार, आप मेरी कार में चलिए, हम चाय या कॉफी पिएँगे मैं कसम खाता हूँ, मैं सच कह रहा हूँ आपकी इच्छा के विरुद्ध मैं कुछ नहीं कहूँगा बताओ ना, आप कब चलोगी। उसके चेहरे पर मेरी हाँ सुनने की बाल बेताबी दिखी थी। मैंने उसे साफ साफ कह दिया था, मेरे इरादे को आप नहीं बदल सकते, मैं न तो कभी आपकी कार में बैठूँगी और न ही कॉफी पीने चलूँगी, मैं शादीशुदा हूँ मेरा परिवार है, मेरा ऐसा करना धर्म के विरुद्ध है।

मेरे आखिरी वाक्य से उसका चेहरा और भयानक हो गया। उस दिन मैंने पहली बार उसे गुस्से में देखा था, फिर भी वह धैर्य से बोला आज शाम को मैं कार लेकर आऊँगा एबस एक बार, मेरे लिए, मुझ पर दया करो, नहीं तो मैं मर जाऊंगा। वह रुआंसा हो गया था। मुझे लगा कि वह बच्चों की जिद कर रहा है। मुझ पर भी जिद थी, मैं बहुत जिद्दी थी, शायद वह मुझसे भी ज्यादा जिद्दी था।

उस दिन मैं उससे पहले ही 4:30 बजे दफ्तर से

निकली, मैंने देखा वह पहले ही बाहर खड़ा था। उसका चेहरा खिल उठा, मेरे पास आ गया और बोला कार पार्किंग में है, मैं लेकर आता हूँ। वह गया तो मैंने ऑटो पकड़ कर अपने घर की राह ली।

अपनी अगली सुबह जब मैं बस स्टाप पर पहुँची तो सब लोग बतिया रहे थे वह कार के साथ ही यमुना में जा गिरा, कार तो मिल गई परंतु उसकी लाश नहीं मिली, तलाश जारी है। बातचीत में मुझे यकीन हो गया कि यह लोग उसी व्यक्ति की बात कर रहे हैं।

हम सब लोग उसके घर जाकर उसकी पत्नी से मिले। उससे जानकारी मिली, पता चला वह तंत्र-मंत्र भी जानता था, उसे पुनर्जन्म पर विश्वास था। उसकी पत्नी ने बताया कि पहले वे लोग मुंबई में थे।

एक रात उसे सपना आया कि वहीं दिल्ली में उसकी मां की आत्मा उसकी प्रतीक्षा कर रही है और वह वहाँ से नौकरी छोड़ दिल्ली में उसकी मां की आत्मा की शांति के लिए आ गया। उसने बताया कि किसी औरत के शरीर की गंध उसकी माँ के शरीर की गंध से मिलती है।

वह अक्सर कहता था मैं जब तक अपनी माँ को कार की सैर न करा लूँ तब तक मुझे शांति नहीं मिलेगी। उसकी मां की अंतिम इच्छा थी कि वह एक दिन कार का मालिक बने। उसकी माँ जब बीमार थी तब उसे शहर ले जाने के लिए गाँव के मुखिया ने अपनी कार तक नहीं दी थी।

माँ को अस्पताल ले जाते समय वह बहुत दुखी था। देर हो जाने की वजह से माँ ने रास्ते में ही दम तोड़ दिया था। तब से ही गोवा के गाँव को छोड़ मुंबई बस गए, मेहनत करके अच्छी जगह पाई और एक रात के स्वप्नों के बाद वे मुंबई छोड़कर हमें दिल्ली में ले आए। अब हम कहाँ जाएँगे रोते रोते ही वह कहती जा रही थी।

उसकी पत्नी की बातें सुन मुझे आत्मग्लानि होने लगी। हालाँकि मुझे विश्वास नहीं था कि वह मुझे अपनी माँ समझता होगा परंतु मैंने उसकी कई बातों पर विचार किया तो मुझे खुद में ही दोष दिखने लगा और स्वयं को मैं इस दुर्घटना का दोषी मानने लगी।

नौकरी मुझे बोझ लगने लगी। कुछ समय बाद अपने बेटे की शादी करके 50 साल की उम्र में मैंने सेवानिवृत्ति ले ली। समय बीतता रहा।

एक दिन मुझे लंदन से एक पत्र मिला। मुझे वहाँ के एक स्कूल में शिक्षक की नियुक्ति के लिए आमंत्रित किया गया था। मैं बहुत हैरान थी, मैंने न तो स्वयं आवेदन किया था न ही मुझे लंदन में कोई जानता है फिर यह पत्र।

आखिर मैंने उस पत्र पर अपनी स्वीकृति दे दी और उन्हें लिख दिया कि आप जब भी टिकट भेजेंगे मैं ज्वाइन कर लूँगी। एक दिन मुझे एक पार्सल मिला जिसमें लंदन का टिकट तथा कुछ जरूरी कागजात थे जिन्हें हस्ताक्षर कर उनको मुझे तत्काल लौटाना था। कागज पर दी गई शर्तें बहुत अजीब थी। सबसे अहम शर्त थी कि मुझे कम से कम 25 वर्ष वहाँ सेवा करनी होगी। यदि मैं हमेशा के लिए वहाँ बसना चाहूँ तो मेरा वेतन एक लाख रुपये महीना होगा।

मैंने अपने पति से पूछा तो उन्होंने भी स्वीकृति दे दी और कहा कि वह बाद में आ जाएँगे।

लंदन पहुँच, स्कूल में पहले ही दिन मैंने प्रिंसिपल, जो वहाँ के अत्यंत समृद्ध प्रभावशाली व्यक्ति थे, के साथ उनके नौजवान बेटे मैजिक को देखा जो मुझे बड़ी आत्मीयता की नजरों से देख रहा था। मैजिक भूरे बालों वाला आकर्षक नवयुवक था।

प्रिंसिपल ने मुझे बताया मैजिक ने कहीं आपका लेख देखा और उसने जिद पकड़ ली कि वह आपको यहाँ बुलाना चाहता है। मैजिक उनका इकलौता बेटा है और यह स्कूल अब उसी का है। मैं यहाँ खुश थी कुछ समय बाद मेरे पति और मेरा परिवार भी स्थाई रूप से रहने के लिए लंदन आ गए थे।

स्कूल में लाइब्रेरी थी, उस दिन मैं वहाँ अकेले बैठे भारत से संबंधित पुस्तकें देख रही थी। प्रिंसिपल वहाँ आए और उन्होंने मुझे एक पर्सनल फाइल देते हुए कहा

कि मैं उसे संभाल कर रख लूँ। मीटिंग से लौटने के बाद मुझसे ले लेंगे। उनके जाने के बाद मैंने फाइल खोली। मैजिक के सर्टिफिकेट थे। मैंने उसकी जन्मतिथि देखी 26 अक्टूबर, सन...।

मुझे अचानक दिल्ली का वही आदमी याद आ गया। वह भी तो 26 अक्टूबर को इसी साल मरा था। इस तारीख को मैं कभी भूल नहीं सकती थी। मेरा सर घूमने लगा और मैजिक का व्यवहार भी कुछ कुछ समझ में आने लगा। मैं दिल्ली के अपने व्यवहार से पहले ही बहुत खिन्न थी, आखिर मैंने इंसानियत की दृष्टि से क्यों नहीं सोचा। पुरुष स्त्री का एक ही संबंध तो नहीं होता।

प्यार के एक ही रूप को क्यों महत्व देते हैं हम लोग। अगले दिन मैंने प्रिंसिपल को वह फाइल सौंप दी। प्रिंसिपल ने बातों बातों में बताया मैजिक भारत से बहुत प्यार करता है। उसने कभी भारत देखा नहीं।

स्कूल में मैजिक मुझे प्रतिदिन मिलता परंतु वह मुझसे कोई विशेष बात नहीं करता। मुझे लगता वह मुझसे नाराज है, पता नहीं क्यों मुझे ऐसा लगने लगा था कि मैजिक दिल्ली वाला ही आदमी है।

एक दिन जब मैं स्कूल पहुँची तब पता चला कि मैजिक के पिता का दिल का दौरा पड़ने के कारण देहांत हो गया है। मैं अन्य टीचरों के साथ उसके घर गई तो वह उदास बैठा था।

मैंने प्यार से उसके सर पर जैसे ही हाथ फेरा वह फूट-फूट कर रोने लगा। देर तक वह रोता रहा और मैं उसे चुप कराती रही। एक सप्ताह के बाद मैजिक स्कूल में आया और उसने मुझे कहा आप मेरे साथ दुर्ग देखने चलें। मैंने उसकी उदासी देख स्वीकृति दे दी। उसके चेहरे पर खुशी थी, लंबी कार ड्राइव करते समय वह कई बार रोया था।कुछ कुछ मैं समझ रही थी परंतु कुछ भी कहना नहीं चाहती थी।

उस दिन मैंने मैजिक के साथ हेस्टिंग्स दुर्ग देखा। शाम को वह मुझे क्लब ले गया, वहाँ उसने मुझे काफी पिलाई। वह मेरा चेहरा पढ़ रहा था और मैं उसका मन। बात करने की हिम्मत नहीं हो रही थी। उसने मेरा हाथ पकड़ कर कहा आंटी अब आप स्कूल का सारा कामकाज सँभाल लीजिए। मैंने हैरानी से पूछा था क्यों।

"मैं ठीक कह रहा हूँ, मेरी अब कोई इच्छा नहीं रही, मैंने आपको कॉफी भी पिला दी है और अपनी कार पर घुमा भी दिया है, आपके इसी जन्म में।" मैंने हैरानी से उसे देखा तो वह मुस्कुरा उठा, आप सब भूल गई क्या।

अगले दिन उसने सारे कागजात मेरे नाम ट्रांसफर करवा दिए और स्कूल मेरे नाम सुपुर्द कर दिया।

मैंने उसे बहुत कहा कि वह यही शादी कर ले। उसने कहा उसे भारत लौटना है, वहाँ सब उसकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। भारत लौटने से पहले उसने मेरे बेटे और मेरे परिवार के सभी सदस्यों को यहां लंदन बुलवा ही दिया था। मेरे बच्चे अब स्कूल के काम में अपने पिता अर्थात मेरे पति का हाथ बटाते हैं।

मैजिक भारत लौट गया है। वह मुझे कह कर गया था, वह फिर लौटेगा पर लौटा नहीं। अभी तक न ही उसका कोई पत्र मेरे पास आया है।

क्या माँ की अंतिम इच्छा पूरी करना है उसका मकसद था क्या वह मुझ में अपनी माँ देखता था क्या वह काला आदमी ही तो जीवित नहीं जिसने मैजिक को प्रभावित किया हो क्या मैजिक उसी का पुनर्जन्म है पता नहीं, लेकिन सब कड़ियाँ एक होकर भी बिखरी बिखरी सी लगती है।

मैं आज भी उस काले और भद्दे आदमी को याद करती हूँ परंतु नफरत के साथ नहीं। काश मैंने उसी समय उसका अंतर्मन पढ़ा होता चेहरा नहीं। उससे बात की होती, चुप्पी नहीं ओढ़ी होती। मुझे लगता है मैजिक मुझे मिलने एक न एक दिन लंदन जरूर लौटेगा। आप भी दुआ करें, वह सिर्फ एक बार यहाँ आ जाए।

थैंक यू कोरोना बनाम काम के गुलाम

डॉ. श्याम सखा श्याम

प्रिंसिपल श्रीवास्तव, जी प्रिंसिपल राजेन्द्र श्रीवास्तव बड़े कड़क, सिद्धांतवादी व्यक्ति हैं लेकिन मेरे लिए तो वह राजू मेरा लंगोटिया यार ही है। जी मैं कौन? मैं श्याम पेशे से छाती रोग चिकित्सक कुछ साल पहले मेडिकल कॉलेज से रिटायर हुआ हूँ। किस्मत की बात है हम दोनों यहीं एक मोहल्ले में जन्मे पले पढ़े बढ़े यहीं नौकरी की, रिटायर होकर भी पड़ोस में रह रहे हैं। शाम को दोनों की शतरंज जमती है आज हम दोनों चाय पी रहे थे, राजेन्द्र बहुत खुश था बोला यार मेरा बेटा मुकुल कलयुग का श्रवण कुमार है।

मुझे सुन कर थोड़ा आश्चर्य हुआ आप कहेंगे क्यों?

असल में बात यह है कि श्रीवास्तव साहिब एक महीना पहले तक, अपने इकलौते इंजीनियर बेटे का नाम लेना तो दूर सुनना भी नहीं चाहते थे। हुआ यूं कि आईआईटी से इंजीनियरिंग कर उनका इकलौता बेटा अमेरिका चला गया था श्रीवास्तव जी की धर्मपत्नी भाभी विभा इस बात से दुखी रहती थी, लेकिन श्रीवास्तव जी कहते थे विभा पंछियों के बच्चे भी तो पंख आते ही उड़ जाते हैं तो मुकुल को भी शिक्षा के पंख लग गये तो क्या गलत हुआ? अच्छी नौकरी थी मुकुल की। हर साल टिकट भेजता दोनों पति पत्नी अमेरिका जाते खूब सैर कराता था। मुकुल ने अमेरिका ही नहीं कनाडा, मेक्सिको, इंग्लैंड व यूरोप के कई देशों की सैर करवाई थी। उसने माता पिता को फिर अमेरिका में ही नौकरी कर रही अपनी जूनियर लड़की से विवाह कर बैठा। श्रीवास्तव जी को इससे भी कोई दुःख नहीं हुआ मगर विभा भाभी मन मसोस कर रह गई थी कितने सपने पाले थे उसने मुकुल का विवाह धूमधाम से करने हेतु सब धरे के धरे रह गए थे। मुकुल विवाह कर जब आया तो श्रीवास्तव जी ने बढ़िया रिस्पेशन दी थी। भारत में सभी जातियों में दहेज़ विरोधी कानून के बावजूद यह बुराई चली आ रही है विभा भाभी के भाइयों को खूब दहेज मिला था लड़कों के विवाह में पर यह तो बिना दहेज़ की शादी थी जिसका अफ़सोस भी था भाभी को लेकिन बहू आलिना अच्छा कमाती थी जाते जाते सास ससुर को हौंडा सिटी ऑटोमेटिक कार दे गई थी। राजू शुरू से घुमक्कड़ रहा है नई गाड़ी ने उसे पंख लगा दिए थे। इस बुढ़ौती में मेरठ से मुंबई, गोवा तक गाड़ी दौड़ा आया था लेकिन एक दिन दिल्ली जाते हुए एक ट्रक की चपेट में आ गया उसे खुद तो थोड़ी चोट लगी लेकिन भाभी बहुत ज्यादा चोटिल हो गई थी मैंने ही फोन पर सूचना दी थी मुकुल को फोन पर मुकुल ने कहा था मैं पैसे ट्रान्सफर कर रहा हूँ आप उन्हें बेस्ट अस्पताल में दाखिल करवा दें जब मैंने पूछा तुम कब आओगे? तो वह चुप हो गया कुछ रुक कर बोला अंकल मेरा व आलिना का आना तो संभव नहीं होगा क्योंकि हमने स्टेट्स चेंज यानी ग्रीन कार्ड की एप्लीकेशन दी हुई है जब तक उसका निर्णय नहीं आता, अगर हम अमेरिका से बाहर आ गये तो हमें ग्रीन कार्ड नहीं मिलेगा और बिना ग्रीन कार्ड यहाँ नौकरी नहीं कर पायेंगे यानी नौकरी छूट जायेगी। मैंने यह बात अस्पताल बिस्तर पर पड़े श्रीवास्तव जी से कई दिन छुपाई कहता रहा कि छुट्टी मिलते ही आयेगा लेकिन एक दिन बतानी पड़ी।

उस दिन के बाद श्रीवास्तव जी ने मुकुल से नाता तोड़ लिया वे तो ठीक होकर बाहर आ गये थे लेकिन पत्नी लगभग तीन महीने अस्पताल में रही और वहीं बेहोशी में ही उसकी मृत्यु हो गई थी। हालांकि विभा की मौत से एक सप्ताह पूर्व मुकुल और उसकी पत्नी को ग्रीन कार्ड मिल गया था और वे आ गए थे लेकिन राजेन्द्र ने उनसे बात करने की इन्कार कर दिया घर में भी घुसने नहीं दिया मुकुल व उसकी पत्नी होटल में रुके रहे रोज अस्पताल आते पिता

के आगे हाथ जोड़ते कुछ बोलते इससे पहले राजेन्द्र दूर चले जाते मुकुल को मुखाग्नि भी नहीं देने दी थी उसने थक हार कर मुकुल चला गया था वो उन्हें फोन करता मगर वे जवाब नहीं देते थे। मुकुल मुझे फोन करता रोता रहता मैंने समझाने की कोशिश की लेकिन राजेन्द्र नहीं माना अंत में उसने मुझे धमकी दे डाली थी कि मुकुल का जिक्र किया तो दोस्ती खत्म मैं चुप हो गया था। लगभग एक महीने पहले श्रीवास्तव जी इस मुए कोरोना की चपेट में आ गये थे हालात गम्भीर होते देख डाक्टरों ने उन्हें दिल्ली एम्स में रेफर कर दिया था मैं उन्हें भरती करवा कर लौट आया था क्योंकि उनके पास जाने की तो इजाजत थी ही नहीं घर लौट कर मैंने मुकुल को फोन किया तो वह बोला मैं पहली फ्लाइट से आ रहा हूँ अंकल, मैंने कहा भी कि शायद तुम्हारे पिता तुमसे न मिलना चाहें।

वह बोला देखा जायेगा मैं आ रहा हूँ आप अभी उन्हें बताएं। जब तक मुकुल आया श्रीवास्तव जी बेहोश हो गए थे वेंटीलेटर पर थे, मुकुल उन्हें दिल्ली के सबसे बड़े प्रसिद्ध प्रायवेट अस्पताल में ले गया रात दिन सेवा में लगा रहा, उसकी मेहनत सेवा समर्पण काम आया जब श्रीवास्तव जी को होश आया तो उन्होंने पूछा मैं कहाँ हूँ, डाक्टरों के बताने पर कि वे फलां अस्पताल में हैं तो उन्होंने पूछा मैं तो एम्स में था यहाँ कैसे आया।

आपका बेटा आ गया था अमेरिका से वही लाया और लाख मना करने पर भी वह आपके कमरे में हो सोता था हमने कहा भी कि आपको कोरोना हो सकता है पर वह नहीं माना अब कहाँ है मुकुल जी पिताजी यहाँ बेड के पीछे खड़ा मुकुल बोला फिर उसने आगे बढ़कर उनके पाँव छुए वे ठीक हो गए थे घर आ गए थे।

और हम अब चाय पी रहे थे उनके घर पर वे कह रहे थे श्याम भाई सचमुच मुकुल कलयुग का श्रवण कुमार है जिस वक्त लोग डर के मारे कोरोना पीड़ित मां, बाप या बेटे तक की लाश का दाहकर्म करने भी नहीं जाते उस जमाने में पता लगते ही 24 घण्टे में अमेरिका से आ गया मेरा बेटा। और रात दिन सेवा कर के बचा लिया मुझे। परमात्मा ऐसा बेटा सब को दे।

चाय पीकर मैं घर जाने हेतु निकला तो मुकुल बाहर तक छोड़ने आया मैंने उससे कहा बेटा बहुत बहुत धन्यवाद जो तू फोन सुनते ही आ गया।

मुकुल बोला अंकल धन्यवाद के अधिकारी तो आप और कोरोना हैं। आप फोन न करते तो कैसे पता लगता और इस कोरोना के कारण वर्क फ्रॉम होम चल रहा है जिसकी वजह से ही तो मैं आ सका वरना अमरीका में इतनी जल्दी छुट्टी कहाँ मिल सकती थी। अब तो मैं अस्पताल में भी और यहाँ भी काम कर रहा हूँ जी वर्क फ्रॉम होम, वरना अमेरिका में तो हर कोई काम का गुलाम है।

इंडिया नेटबुक्स द्वारा प्रकाशित
डॉ. श्याम सखा श्याम की महत्वपूर्ण कृति

चुटकुले से मामाजी/खाओ सब्जी फल

दिशा ग्रोवर

चुटकुले से मामाजी

मामाजी ओ मामाजी
मेरे नटखट मामाजी!
गैया को कह देते साइकिल
उस पर ना चढ़ जाना जी।

मामाजी ओ मामाजी
मज़ेदार हो मामाजी!
बिस्तर को समझ के सागर
आप न गोते खाना जी!

मामाजी ओ मामाजी
हमें घूमने जाना जी!
बगिया में घूमेंगे, लेकिन
चिड़िया ना बन जाना जी!

मामाजी ओ मामाजी
आप चुटकुले मामाजी!
हँसा-हँसा बातों से अपनी
पेट दर्द मत करना जी!

मामाजी ओ मामाजी
ऐसे नहीं सताना जी!
बात बात में कर शैतानी
हमको नहीं हँसाना जी!

खाओ सब्जी फल

नानी कहती खाओ सबकुछ
सब्जी हो या फल।
दिल करता मैं कह दूँ सचमुच
नानी आना कल।

मेरे मन को नहीं न भाते
ये सब्जी ये फल।
बर्गर पिज़्ज़ा पेप्सी आए
चाहे मन हर पल।

नानी है मेरी ही नानी
ठहरे ना इक पल।

इंडिया नेटबुक्स द्वारा प्रकाशित पुस्तक

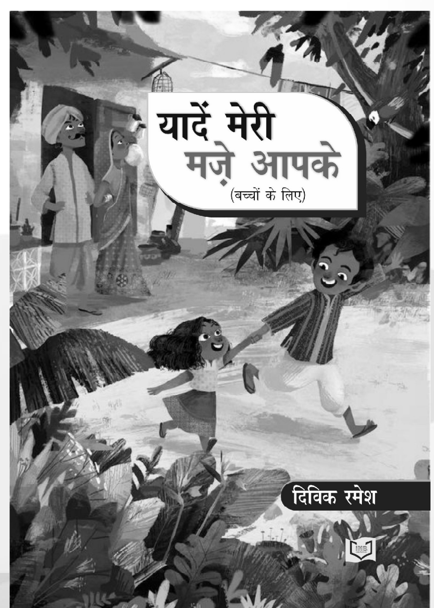

एक बिजूका ऐसा भी

मीनू त्रिपाठी

दादाजी को खेत पर जाने के लिए तैयार होते देख रोहन बोला, "दादाजी, जितने दिन मैं गाँव में हूँ मैं ही खेत पर जाऊँगा, आप आराम करना।"

यह सुनकर वह हँसते हुए बोले, "तुम जाओगे तो पापा कहेंगे कि मैं तुमसे खेती करवा रहा हूँ।"

"अरे दादाजी, खेती तो बहुत बड़ी बात है। टीचर ने भी बताया कि बड़ी-बड़ी पढ़ाई करने वाले भी लोग भी कृषि कार्य करने लगे हैं।"

"वो तो ठीक है पर तुम वहाँ परेशान हो जाओगे। देखो, कितनी धूप है।"

"अरे जाने दो उसे। मनोहर ध्यान रख लेगा।" सहसा दादी ने उसका पक्ष लिया तो पास ही खड़ा मनोहर जो दादाजी के खेत सँभालता था उत्साह से बोला, "हाँ बाबूजी, मैं ध्यान रख लूँगा। जाने दीजिये हमारे साथ" मनोहर की हाँ होते ही रोहन खुशी-खुशी तैयार होने चला गया।

दादा जी मनोहर से बोले, आज, मुखिया जी से मिलना है। दोपहर बारह बजे के आसपास उन्हें लेकर आऊँगा। वहाँ पर सरकारी ट्यूबवेल लगने के लिए उचित स्थान देखना है। तब रोहन को घर ले आऊँगा।

"आप रोहन भैया की चिंता न करें। मजे से लाई चना खाएँगे और मटके का ठंडा पानी पियेंगे।" मनोहर की बात सुनकर दादाजी "चलो ठीक है।" कहकर आराम से बैठ गए।

चलते समय दादी लाड़ से रोहन से बोली, "जाए घूम आए दोपहर को जब वापस आएगा तब चूल्हे पर सिंकी रोटी और साग खाना।" चूल्हे पर सिंकी रोटी और साग सुन कर उसके मुँह में पानी आ गया। उछलता कूदता रोहन खुशी खुशी मनोहर के साथ खेतों की ओर चल पड़ा।

रोहन कल ही अपने पापा के साथ गाँव आया था। गर्मियों की छुट्टियाँ शुरू होते ही वह गाँव जाने की जिद करता है। चूंकि मम्मी-पापा दोनों नौकरी करते हैं इसलिए पापा वीक एंड में गाँव छोड़ने आ जाते हैं। पन्द्रह बीस दिनों के बाद एक आध हफ्ते के लिए मम्मी पापा आ कर रुकते हैं और उसे साथ लेकर चले जाते हैं। इस तरह उसे ज्यादा दिन गाँव में रहने को मिल जाता है।

गाँव आने के लिए गर्मियों की छुट्टियों का उसे बेसब्री से इंतजार रहता है। दादा जी गाँव घुमाते हैं। दादी चूल्हे पर सिंकी देसी अनाजों की रोटी खिलाती है। वैसे तो उसके गाँव में गैस आ गई है पर उसकी फरमाइश पर चूल्हा जलाया जाता है और उस पर खाना बनता है। चूल्हे पर बनता खाना देखना जितना रोचक है, खाने में उतना ही स्वादिष्ट कल रात दादा जी पापा को बता रहे थे कि पिछले साल फसल अच्छी नहीं हुई थी। पर अबकी बार खूब बढ़िया फसल हुई है। रोहन मनोहर के साथ जब खेत पर पहुँचा तो दंग रह गया, सभी खेतों में फसलें लहलहा रही थीं।

"वाह मनोहर चाचा! इस बार तो बहुत बढ़िया फसल हुई।"

"हाँ भैया, ये सब जादुई दवा का काम है।"

"जादुई दवा"

हाँ भैया, पिछले साल फसल में कीड़े लग गए थे तो इस बार दवा डाली है।

"दवा कौन सी? पेस्टीसाइड क्या"

"हाँ, वही कुछ है। कीड़े नहीं लगते उससे। पिछले साल बड़ा नुकसान हुआ। इस बार खूब भर-भर कर दवा डाली है"

"भर-भर कर मतलब"

"मतलब, खूब ज्यादा" यह सुन कर रोहन की आँखे चिंता से सिकुड़ गईं।

कुछ देर चुप रहकर बोला, चाचा, हमारी टीचर बता रही थीं कि पेस्टीसाइड स्वास्थ्य को नुकसान पहुँचाता है।

"अरे ऐसा कुछ नहीं है। अच्छा अब तुम यही शांति से बैठो हम कुछ काम कर लें।" कह कर वह काम में लग गए। बीच-बीच में वह रोहन को भी देख लेते।

सहसा उनकी नजर रोहन पर पड़ी, वह हुर्र हुर्र करके पंक्षियों को उड़ाने लगा।

"अरे भैया काहे उड़ा रहे हो?"

"ये अनाज खा रही हैं"

"अरे तो खाने दो न जीव ही तो हैं।"

"नहीं, मैं इन्हें इस खेत से एक दाना भी नहीं खाने दूँगा।"

कहकर रोहन कभी इधर दौड़ता तो कभी हुर्र कहकर उधर दौड़ता।

"अरे, थक जाओगे।" मनोहर ने कई बार कहा पर वह दौड़ दौड़कर चिड़ियों को उड़ाता रहा। जब थक गया तो मनोहर से बोला, "चाचा एक बिजूका क्यों नहीं खड़ा कर देते।"

"तुम जानते हो बिजूका के बारे में!" मनोहर के हैरानी भरे प्रश्न पर वह उत्साह से बोला, "और नहीं तो क्या बिल्कुल जानता हूँ। दादा जी के साथ जब यहाँ आता था तब उसे खेत में उस तरफ खड़ा देखा था।" रोहन ने हाथ से इशारा किया तो मनोहर हँस कर बोला, "हाँ, चार दिन पहले तक था। कोई जानवर तोड़ गया उसे।"

"अरे! पर दादा जी तो बोल रहे थे कि चिड़िया और दूसरे जानवर डरते हैं उससे।"

"हाँ, कुछ दिन तक, पर जब बिजूका को देखने की आदत पड़ जाती है तो जानवर चले आते हैं।"

मनोहर की बात खत्म होते ही वह हुर्र हुर्र कर फिर चिड़ियों को उड़ाने लगा तो मनोहर ने जोर से कहा, "अरे, रहने दो भैया। ये कीड़े खाकर फसल को बचाती हैं।"

"कीड़े तो ढेर सारे पेस्टीसाइड से खत्म हो गए। अब कीड़े कहाँ हैं, ये अनाज खाने आईं हैं।" रोहन चिल्ला कर बोला तो मनोहर बड़बड़ाने लगा, "कभी तो इत्ती समझदारी की बातें करते हैं, तो कभी देखो, हुर्र हुर्र लगाकर सर दर्द किये हैं। ये नहीं होता कि शांति से एक जगह बैठें।"

थोड़ी देर भाग दौड़ कर रोहन आखिरकार थक हार कर बैठ गया। उसे हल्की-हल्की भूख और प्यास लगने लगी थी। तभी उसकी नजर पेड़ के नीचे रखे पानी के छोटे से मटके और उसके पास रखे डिब्बे पर पड़ी। उसने झट से डिब्बा खोला और लाई चना निकालकर खाने लगा।

रोहन की भूख का सिग्नल उसकी दादी तक पहुँच गया था सो वह रोहन के दादा जी से बोलीं, "अब ले आइये। उसे भूख लगी होगी।"

"ठीक है, मुखिया जी को लेकर जाता हूँ। एक-डेढ़ घँटे में हम आ जाएँगे।" कह कर दादा जी चमड़े के जूते में पैर में डालने लगे।

ट्यूबवेल के सिलसिले में मुखिया जी से बातचीत में आधा घँटा निकल गया फिर दोनों ट्यूबवेल लगवाने के लिए जगह देखने चले गए। वापसी में मुखिया जी के साथ दादा जी रोहन को लेने अपने खेत पर पहुँचे तो देखा मनोहर गुस्से में तमतमाया खड़ा था। पास खड़े रोहन का चेहरा भी उतरा हुआ था।

"क्या हुआ मनोहर सब ठीक तो है" दादा जी ने पूछा तो वह झुँझला कर रोहन की ओर इशारा करते हुए बोला, "अरे, क्या बाबूजी, इसने तो तंग कर डाला।"

"क्या किया इसने" दादाजी ने हैरानी से पूछा तो रोहन ने मुँह लटका लिया और मनोहर तो हैरान परेशान पहले से ही सर पकड़े खड़ा था।

"क्या किया तुमने बोलो" दादाजी ने रोहन से पूछा तो वह रुआँसा हो गया और कुछ कह नहीं पाया।

तब मनोहर ही बोला, "जब से आए हैं तब से हुर्र हुर्र करके पूरे खेत मे दौड़-दौड़ चिड़िया उड़ा रहें है। किसी तरह एक जगह बैठाया तो वो मटका देख रहे हैं, जिसमें पीने का पानी लाया था।" मनोहर टूटे हुए मटके की ओर इशारा करते हुये बोला, "उसे उठा लाए और सर पर टोपी की तरह

पहनकर बिजूका बन कर खेतों में बीचों-बीच खड़े हो गए।"

दादा जी यह सुनकर सकपका गए पर मुखिया जी की हँसी छूट गई। किसी तरह हँसी रोक कर उन्होंने उत्सुकता से पूछा, फिर "फिर क्या, हम देखे तो दौड़े इनकी तरफ। मटका सिर से निकालने लगे तो निकले ही न"

"अरे! अरे तो क्या फँस गया था" दादाजी कुछ तरस और कुछ खीज भाव से पूछकर कभी रोहन को देखते तो कभी टूटे मटके को "फिर, फिर निकला कैसे?" मुखिया के पूछने पर मनोहर माथे पर हाथ लगाते हुए बोला, अरे पूछिये मत मुखिया जी सब तरफ से कोशिश की फिर सर पर ही फोड़ना पड़ा मटका।

अब तो मुखिया जी हँस-हँस कर बेदम हो गए।

"तुम्हें चोट तो नहीं लगी बेटे?" दादाजी ने रोहन के सिर को सहलाते हुए प्यार से पूछा तो उसने शर्मिंदगी से 'न' में सर हिला दिया।

"आप तो कह रहे थे मेरा पोता बड़ा समझदार है। पर ये तो बड़ा नटखट निकला।"

दादा जी ने मुखिया जी की बात का जवाब न देकर रोहन से सवाल किया, "तुमने ऐसा क्यों किया बेटे?"

"बिजूका बनने के लिये।" वह रुआंसा सा हो आया।

"अरे वो तो मैं समझ गया। पर बिजूका तुम बने क्यों?"

"बहुत सारी चिड़िया खेत पर थीं। वो अनाज खा रहीं थी।"

"तो खा लेने देते बेटा। इनका पेट जरा सा तो है। जरा सा पुण्य मुझे मिल जाता।"

"पुण्य कहाँ, पाप मिलता दादाजी।"

"अरे कैसी बात कर रहे हो।"

"और क्या, काका ने बताया कि भर-भर कर पेस्टीसाइड डाला है।" अपने दोनों हाथों को फैलाते हुए उसने पेस्टीसाइड की मात्रा दिखाई।

"हाँ तो" दादाजी हैरानी से बोले तो वह तमक कर कहने लगा, "तो क्या एस.एस.टी में सेव गौरैया चैप्टर में बताया गया है कि गौरैया खत्म होने का एक कारण खेत भी हैं क्योंकि पेस्टीसाइड वाला अनाज इन्हें बीमार कर देता है।"

"अच्छा समझा, तो गौरैया को बचाने के लिए तुमने सारे करतब दिखा।" दादाजी ने गहरी साँस लेकर कहा तो मुखिया जी भी बोले, "पर तुम्हारी इतनी मेहनत का फायदा भी क्या होता। यहाँ से उड़कर चिड़ियाँ बगल वाले खेत पर चली जातीं।"

"हाँ, ये तो सोचा ही नहीं" रोहन कुछ खिसिया कर बोला तो मुखिया उसकी प्रशंसा करते हुए दादाजी से बोले, "आप सही कहते थे। आपका पोता बहुत समझदार है, और संवेदनशील भी। हमारे पिता भी रासायनिक दवाओं के बड़े खिलाफ थे। हम लोग ही लालच में पड़ गए।"

मुखिया के कहने पर मनोहर भी कुछ पछतावे के साथ बोला, "भैया की भावनाओं को हम भी न समझे। और डाँट अलग से दिए।"

दादाजी ने रोहन को झट से गले लगाया और बोले, "इस बात पर तो विचार करना पड़ेगा" फिर हँस कर पूछने लगे, "तुम्हारी टीचर ने पेस्टीसाइड का तोड़ बताया या नहीं"

"बताया था..." रोहन उत्साह से बोला, टीचर ने जैविक कीटनाशकों के बारे में बताया था। जो कि हमारे आसपास के वातावरण में मिल जाते हैं जैसे नीम, गो मूत्र, तंबाकू, नमक और कुछ सोचकर वह बोला, "अरे हाँ, याद आया करंज का तेल, लहसुन, सरसों की खली ये सब पेस्टीसाइड से बहुत कम खतरनाक होते हैं। टीचर ने और भी बहुत सी तरकीबें बताई थीं, पर अब याद नहीं आ रहीं।"

रोहन सिर खुजाता हुआ मासूमियत से बोला तो सब हँस पड़े। दादाजी बोले, "कोई बात नहीं और तरकीबें हम पता कर लेंगे" मुखिया जी रोहन की पीठ थपथपाते बोले, "बेटे, तुमने हमारी आँखें खोल दी, लगता है हमें फिर से स्कूल जाना पड़ेगा।"

यह सुनकर रोहन की आँखें चमक उठीं और दादा जी उसे गर्वमिश्रित स्नेह से देखने लगे।

नाटक

रंग बिरंगा राक्षस

प्रो. राजेश कुमार

पात्र

निम्नलिखित का मुखौटा पहने हुए बच्चे :

खरगोश

बंदर

हाथी

भालू

लोमड़ी

चिंपांजी

"बच्चों का चयन इस प्रकार करना चाहिए कि उनके आकार-प्रकार से इन जानवरों की प्रकृति यथासंभव प्रकट हो सके, जैसे हाथी के लिए मोटा बच्चा ठीक रहेगा और खरगोश के लिए पतला और नाटा। वगैरह।"

जंगल का दृश्य दिखाने के लिए जंगली किस्म के झाड़ झंखाड, पेड़, लताएँ आदि लगाई गई हैं। एक पेड़ की शाखा पर बंदर बैठा है। एक ओर से खरगोश भागता-हाँफता आता है। वह मंच के आगे की ओर दो चक्कर लगाकर पिछली ओर बंदर के नीचे से गुजरता है।,

बंदर : अरे, अरे खरगोश भाई, कहाँ चले इतनी अफरा-तफरी किसलिए है? क्या कोई लेनदार पीछा कर रहा है, या मकान मालिक का किराया फिर से बकाया हो गया है।

खरगोश रुक जाता है, लेकिन हाँफता रहता है और ऐसा दिखाता है कि वह भागने के लिए उद्यत है।,

खरगोश : ऐसा कुछ भी नहीं है, बंदर मियाँ! मेरी बात सुनोगे, तो तुम भी यों चैन से डाल पर बैठे नहीं रहोगे। जान बचानी है, तो मेरे पीछे भाग लो!

बंदर : (निश्चिंतता से) अरे, कुछ बोलोगे भी या पहेलियाँ ही बुझाते रहोगे। जंगल में आग लग गई है, या आदमी घुस आए हैं।

खरगोश : (भयभीत स्वर में) इससे भी बढ़कर ख़तरा आ गया है! जंगल में एक भयानक राक्षस आ गया है!

बंदर : (डर के मारे नीचे लटक आता है) राक्षस! तुम्हें कैसे पता चला?

खरगोश : मैं उसे अभी देखकर आ रहा हूँ। (हाथों से दिखाता है) उसका लंबा और गोल पेट है, लाल रंग का। उसकी पीठ पर एक काले रंग का कूबड़ है और एक गोल आँख है, जो खूब चमचमा रही है।

बंदर : (डाल से कूदकर नीचे आ जाता है) अरे बाप रे, ऐसे प्राणी के बारे में न तो पहले कभी सुना और न देखा। ज़रूर ही राक्षस है। और तुम्हें तो वह छोड़ भी दे, लेकिन मुझे तो कच्चा ही चबा जाएगा। चलो भागो भाई, जिधर को सींग समाएँ, निकल चलो...हालाँकि हमारे सींग नहीं हैं, पर खैर निकल तो चलो ही!

खरगोश भागने लगता है और उसके पीछे बंदर भी दौड़ने लगता है। दोनों मंच पर बड़े दायरे में दो चक्कर लगाते हैं। फिर खरगोश नेपथ्य में चला जाता है। बंदर उछलता-कूदता सिटपिटाता एक चक्कर और लगाता है कि उसके सामने झूमता-झामता हाथी आ जाता है। बंदर ठिठक कर रुक जाता है।,

बंदर : अरे रास्ता छोड़ो भाई, मेरे पास टाइम नहीं है।

हाथी : (सूँड उठाकर हँसते हुए) आदमियों की भाषा क्यों बोल रहे हो भाई! उन्हीं के पास किसी भी टाइम बस टाइम ही नहीं होता और तुम तो उन्हीं की तरह भागे भी चले जा रहे हो। क्या तुम्हारी गाड़ी छूटी जा रही है, या गन्ने का कोई खेत दिख गया है कि भागकर सारे माल पर खुद ही हाथ साफ़ कर लेना चाहते हो?

बंदर : (कानों को हाथ लगाता है) भगवान बचाए आदमियों के इन गुणों से। अरे भाई, यहाँ तो जान के लाले पड़े हैं, और तुम्हें ठिठोली सूझ रही है।

हाथी : (अकड़कर खड़ा हो जाता है) कौन तुम्हारी जान के पीछे पड़ा है? मुझे बताओ, मैं अभी उसकी हड्डी पसली एक कर दूँगा।

बंदर : (माथा ठोंक लेता है) अरे भाई, कभी-कभी तुम अपनी मोटी बुद्धि से काम न भी लो, तो तुम्हें बात आसानी से समझ में आ जाएगी। अब समय बर्बाद मत करो और मेरे साथ-साथ भाग लो, तो तुम्हें बताऊँ कि जंगल में राक्षस आ गया है, और वह हमें खाने के लिए बढ़ा चला आ रहा है।

बंदर भागने लगता है और डर के मारे हाथी भी उसके पीछे भागने लगता है।,

हाथी : (आश्चर्य से) कैसा राक्षस भाई, मैंने तो अभी तक उसके बारे में सुना नहीं। क्या बहुत डरावना है?

बंदर : अरे, यमराज का अवतार समझो! (हाथों से दिखाता है) उसका गोल-गोल लंबा पेट है, लाल रंग का। उसकी लंबी और मोटी पूँछ है भूरे रंग की। उसकी पीठ पर काले रंग का गूमड़ है और उसकी एक ही बड़ी और गोल-गोल आँख है, जो चमचमाती रहती है। अब तुम्हें अपनी जान बचानी है, तो भाग लो वरना जैसा चाहे वैसा करो। मैं तो चला।

हाथी : (भयभीत स्वर में हकलाते हुए) अपनी जान किसे प्यारी नहीं होती भाई! और मैं तो तेज़ भाग भी नहीं सकताए इसलिए सबसे ज्यादा डर तो मुझे ही है। वह तो सबसे पहले मुझे ही खाएगा। मैं भी आया तुम्हारे पीछे।

बंदर भागने लगता है और डर के मारे हाथी भी उसके पीछे भागने लगता है। बदहवास सी हालत में दोनों मंच पर बड़े दायरे में दो चक्कर लगते हैं। फिर बंदर नेपथ्य में चला जाता है। अचानक हाथी के सामने भालू आ जाता है, जो उसकी टाँग से टकराकर दूर तक लुढ़कता चला जाता है। हाथी ठिठककर रुक जाता है।

भालू : (कमर पकड़कर उठता है और लँगड़ाते-लँगड़ाते चलकर हाथी के पास आता है।) क्यों भाई, अंधे हो क्या जो देखकर नहीं चल सकते? मैं कोई फुटबॉल थोड़े ही हूँ कि उठाया और मार दी किक...उफ़...

हाथी : (सूँड माथे से जोड़कर) अरे भालू भाई, माफ़ करना, माफ़ करना... मेरा तुम्हें चोट पहुँचाने का कतई इरादा नहीं था।

भालू : (कराहते हुए) आह... लेकिन चटनी तो बना दी न!... पर बात क्या है, जो इस तरह भागे चले जा रहे हो कि रास्ता तक देखने की फुर्सत नहीं है। भाभी जी तो बेलन लेकर पीछे नहीं चली आ रहीं या किसी दौड़ प्रतियोगिता में हिस्सा ले रहे हो, या फिर नाक में चींटी घुस गई है।

हाथी : (थमकर लंबी साँस लेता है) इनमें से कुछ भी नहीं है, भाई! ये समझ लो कि जंगल के जानवरों की जान पर बन पड़ी है और अगर तुम भी अपनी जान से हाथ नहीं धोना चाहते, तो भाग लो आँख मींचकर!

हाथी भागने को होता है।,

भालू : (हाथी को सूँड थामकर रोक लेता है) लेकिन कुछ कहो तो सही! आखिर ऐसी क्या मुसीबत आ पड़ी है कि उसका सामना करने के बजाय भागने की नौबत आ गई है?

हाथी : (भयभीत स्वर में) जंगल में एक राक्षस आ गया है, जो हम लोगों को खाने दौड़ा चला आ रहा है।

(हाथों से दिखाता है) और ऐसा वैसा नहीं, बहुत भयानक और ख़तरनाक राक्षस है। उसका लंबा और गोल-गोल पेट है, लाल रंग का। उसकी पीठ पर गूमड़ है। उसकी लंबी और कठोर पूँछ है, भूरे रंग की। मेरे पैरों से भी बड़े और मोटे पैर हैं उसके, जामुनी रंग के। और उसकी एक गोल और बड़ी सी आँख है, जो रोशनी से चमचमाती रहती है।

भालू : (घबराकर, जैसे हाथों के तोते उड़ गए हों) ऐसा! उसके मुँह से निकला, तब तो शामत ही समझो! ऐसे रंग-बिरंगे जीव के बारे में तो कभी सुना तक नहीं। मेरे जैसे काले प्राणी को देखकर, तो वह भड़का ही समझो, और फिर सबसे पहले वह मेरा ही ख़ात्मा करेगा। भागूँ सिर पर पैर रखकर!

अपनी चोट भूल जाता है, और सरपट भागने लगता है। हाथी के साथ मंच के दो चक्कर लगाता है और फिर हाथी नेपथ्य में चला जाता है। भालू एक चक्कर और लगाता है, और फिर लोमड़ी रोक लेती है।,

लोमड़ी : भाई, राम राम! क्या मोटापा कम करने के लिए दौड़ लगाना शुरू कर दिया है। भई, बहुत अच्छी बात है। मोटा शरीर तो बीमारी का घर ही होता है। और रोज़ व्यायाम करने से तो वैसे भी शरीर और मन दोनों ही

तरोताज़ा रहते हैं।

भालू : (परेशान हाल, हाँफते-हाँफते) यहाँ व्यायाम की फुर्सत किसे है, लोमड़ी बहन...

लोमड़ी : (हँसकर) तो क्या कहीं शहद की गंध मिल गई है, जो लपके चले जा रहे हो? लोमड़ी ने हँसकर पूछा, भाई थोड़ा शहद तो हमें भी चखना। सुना है, पेट के लिए बड़ा फायदेमंद होता है।... और इससे आवाज़ भी मीठी...

भालू : (लोमड़ी की चिक-चिक सुनकर भड़क उठता है) लोमड़ी बहन, आवाज़ मीठी बाद में बना लेना। अभी तो जान बचाओ और भाग लो मेरी तरह। बला सिर पर आई ही समझो!

लोमड़ी : (होश फाख्ता हो जाते हैं, सकपकाकर) बला, वह बोली, यह कौन है भाई क्या जंगल में कोई बीमारी फैल रही है...

भालू : (गुस्से से) अब तुम एक भी शब्द बोली, तो मैं तुम्हें राक्षस के भरोसे छोड़कर भाग जाऊँगा!

लोमड़ी : (दो फुट ऊपर उछल जाती है) राक्षस! कहाँ है राक्षस! (घूमकर चारों ओर देखती है।)

भालू : (और ज़्यादा गुस्से से) फिर बोली! मैं चला...

भालू भागने को उद्यत होता है, लेकिन लोमड़ी उसका रास्ता रोक लेती है।,

लोमड़ी : (कानों को हाथ लगाती है) माफ़ी चाहती हूँ, भाई! मैं घबरा गई थी। अब नहीं बोलूँगी...बताओ क्या बात है यह राक्षस कौन है?

भालू : (जल्दी-जल्दी बोलता है) जंगल में एक भयानक राक्षस आ गया है, जो जानवरों के खा रहा है! भालू ने जल्दी-जल्दी बताया, उसका लम्बा और गोल पेट है, लाल रंग का। उसकी पीठ पर काले रंग का गूमड़ है और उसकी भूरी और मजबूत पूँछ है। उसके जामुनी रंग के मोटे-मोटे चार पैर हैं। उसके नीले रंग के बड़े-बड़े दाँत हैं और उसकी एक आँख है, जो गोल और बहुत बड़ी है। उस आँख में सूरज जैसी तेज रोशनी निकलती रहती है!...

लोमड़ी : (डर के मारे भाग लेती है, साथ ही बड़बड़ाती है) हे भगवान, बचाओ! मुझे तो वह राक्षस कच्चा ही चबा जाएगा। मैं तो इतनी छोटी हूँ कि उससे अपना बचाव भी नहीं कर सकूँगी। भागो, भागो... भागो रे भागो...

भालू : (भागते हुए) अरे मुझे कहाँ छोड़े जा रही हो!

दोनों मंच के दो चक्कर लगाते हैं, इसके बाद और फिर हाथी नेपथ्य में चला जाता है। लोमड़ी एक चक्कर और लगाती है कि सामने से चिंपांजी आ जाता है और भागते-भागते लोमड़ी उसकी गोद में चढ़ जाती है।,

चिंपांजी : (हड़बड़ा जाता है) अरे, अरे, लोमड़ी बहन! कहाँ भागी जा रही हो (फिर को लोमड़ी पुचकारते हुए पूछता है) कोई लकड़बग्घा पीछे लगा है या जंगली सूअर ऐसे आँख मूँदकर भागोगी, तो किसी गड्ढे में जा पड़ोगी और हाथ-पैर तुड़वा लोगी।

लोमड़ी : (डर के से काँपते हुए) हाथ पैर टूटेंगे, तो क्या हुआ, चिंपांजी भाई, लोमड़ी ने भय से काँपते हुए कहा, जान तो बची रहेगी! जान है, तो जहान है!...

चिंपांजी : (दिलासा देता है) कौन पड़ा है इस नन्हीं सी जान के पीछे! मुझे बताओ! मैं अभी उसकी नानी याद दिला दूंगा!

लोमड़ी : (रोकते हुए) भाई, ऐसे मत बोलो! वह तो बड़ा ख़तरनाक राक्षस है, जो जानवरों को खाता चला आ रहा है। आप भी मेरे साथ भाग चलो और अपनी जान बचा लो। वह राक्षस तो अब आया ही समझो!

लोमड़ी गोद से कूदने को होती है।,

चिंपांजी : (रोक लेता है) ठहरो-ठहरो! राक्षस-वाक्षस कुछ नहीं होता। मैं पाँच साल तक सर्कस में रहकर सारी दुनिया को समझ आया हूँ। (हिम्मत बँधाता है) मुझे बताओ, क्या बात है और कौन तुम्हें बहका रहा है। मैं उसे छठी का दूध याद दिला दूँगा!

लोमड़ी : (जल्दी-जल्दी बोलती है) समय कम है, चिंपांजी भाई! बस इतना समझ लो कि तुम्हारी दुनियादारी की समझ यहाँ काम नहीं आएगी, क्योंकि जंगल में आया यह राक्षस बहुत ख़तरनाक है! (हाथों के इशारों से बताती है) उसका लाल रंग का बड़ा गोल पेट है, पीठ पर काले रंग का गूमड़ है, और उसकी मजबूत और लंबी पूछ भूरे रंग की है। उसके जामुनी रंग के मोटे ओर बड़े-बड़े पैर हैं, तथा उसके नीले रंग के लंबे-लंबे दाँत हैं। उसके सिर पर

लंबे-लंबे न जाने किस रंग के नुकीले सींग हैं और एक ही बड़ी गोल आँख है, जो सूरज की तरह चमकती है।

चिंपांजी : (हँसता है) इतने सारे रंग या तो इंद्रधनुष में होते हैं या रंगों के डिब्बे में। तुम घबराओ मत! इस तरह का कोई जानवर नहीं होता...

लोमड़ी : (समझाती है) जानवर नहीं चिंपांजी भाई, वह तो राक्षस है राक्षस! अब आप भाग लो, वरना वह आता ही होगा...

चिंपांजी : (दुलारते हुए) मैंने कहा न राक्षस और भूत वगैरह कुछ नहीं होते, बस मन के वहम होते हैं। तुम मुझे उस जगह पर ले चलो। तुमने ज़रूर कोई तस्वीर देखी है और उससे डर गई हो। चलो, कहाँ है वह राक्षस, मुझे दिखाओ। फिर मैं तुम्हें उसकी असलियत बता दूँगा।...

लोमड़ी : (सोचते हुए) कहाँ है यह तो मुझे पता नहीं... यह तो भालू को पता होगा... उसी ने मुझे राक्षस के बारे में बताया था... वह देखो भागा जा रहा है,) चलो उसी से पूछे...

चिंपांजी : चलो...

दोनों ने तेज़ी से भागते हैं और भालू को पुकारते हैं। भालू मंच पर आ जाता है।,

लोमड़ी : (डर अभी भी कम नहीं हुआ) भालू भाई, जरा रुको। चिंपांजी का कहना है कि राक्षस कुछ नहीं होता और वह हमारा भ्रम दूर कर देगा। इसे बता दो कि तुमने उसे कहाँ देखा है

भालू : (बड़े-बूढ़े की तरह समझाता है) अरे-अरे, इस चक्कर में पड़कर क्यों अपनी जान से हाथ धोना चाहते हो! चलोए भाग चलो हमारे साथ!

चिंपांजी : (डाँटता है) शुतुरमुर्ग की चाल क्यों चल रहे हो! मुसीबत से जितना भागोगे, उतना ही वह तुम्हारा पीछा करेगी। मुझे बताओ कि वह राक्षस कहाँ है

भालू : (सोचता है) कहाँ है यह तो हाथी को ही पता होगा... उसी ने तो मुझे राक्षस की सूचना दी थी। वह देखो भागा चला जा रहा है। चलो भागकर उसे पकड़ें...

चिंपांजी : (हाथ नचाता है) कमाल है!

तीनों भाग लेते हैं और हाथी को जा पकड़ते हैं। हाथी मंच पर आ जाता है।,

भालू : (हाँफते हुए) अरे हाथी भाई, जरा रुको।

हाथी : (संदेह से पूछता है) क्यों, क्या वह राक्षस भाग गया?

चिंपांजी : (विश्वास से कहता है) मुझे उसका अता-पता बताओ, तो मैं उसे भगा दूँगा!

हाथी : (चिंपांजी को ऊपर से नीचे तक देखता है) क्यों भाई, घर में बाल-बच्चे नहीं हैं क्या? क्यों अपनी जान गँवाना चाहते हो। चलो, हमारे साथ भाग लो।...

चिंपांजी : (बेचैन हो जाता है) आप मेरी जान की चिंता न करें और न मेरे बच्चों की। मुझे बस राक्षस का पता बता दीजिए...

हाथी : (मुँह बिचकाता है और झल्लाकर कहता है) नहीं मानते, तो ना सही। उसका पता है पर पता तो मुझे नहीं पता... हाँ, वह तो बंदर को पता है चलो उसे ढूँढ़कर पूछें...

चिंपांजी : (माथा ठोंक लेता है) वाह भाई, वाह... बिना पता किए ही सब डरे जा रहे हो!

चारों भागते हैं। हाथी बंदर को पुकारता है। बंदर मंच पर आ जाता है।,

बंदर : (इधर-उधर देखकर चिल्लाता है) क्या बात है? क्या राक्षस मर गया?

चिंपांजी : (शांत भाव से) तुम मुझे उसका अता-पता दो, तो मैं अभी उसे जाकर ख़ात्मा कर दूँगा।

बंदर : (आपसदारी से समझाता है) अरे भाई, क्यों मौत के मुँह में कूदना चाहते हो? चलो, हमारे साथ भाग लो और जान बचा लो। जान है तो जहान है!

चिंपांजी : (मखौल करता है) यह कहावत मैंने बहुत बार सुनी है! अब तो मैं सिर्फ़ राक्षस का पता सुनना चाहता हूँ!

बंदर : (बेचारगी से) नहीं मानते, तो जाओ भाड़ में!

चिंपांजी : (याद दिलाता है) वो पता...

बंदर : (सिटपिटा जाता है) पता... क्या पता... हाँ, पता... पता तो पता होगा खरगोश को, क्योंकि इस संकट की सूचना तो हमें उसी भले जानवर ने दी थी न! वह देखो पास ही तो है। आओ, राक्षस से भी भागें और खरगोश को

भी पकड़ लें...

चिंपांजी : (जैसे विश्वास नहीं होता) भई, यह तो पागलपन की हद है! सुनी-सुनाई पर विश्वास किया और भाग लिए आँख मूंदकर...

पाँचों भाग लेते हैं, और खरगोश को पुकारते हैं। खरगोश मंच पर आ जाता है। सब उसके पास पहुँच जाते हैं।,

खरगोश : (डरते हुए) क्यों पुकार रहे हो, भाई! क्या राक्षस आ पहुँचा है?

बंदर : (हकलाकर) हाँ... ये चिंपांजी... मेरा मतलब है कि ये चिंपांजी भाई उसके पास पहुँचना चाहते हैं। आप इन्हें उसका पता दे दें...(व्यंग्य से) ये उसका ख़ात्मा कर देंगे...

खरगोश : (समझाता है) क्यों अकल के पीछे लट्ठ लिए पड़े हो, चिंपांजी भाई! वह राक्षस बड़े-बड़ों के बस में नहीं आया। तुम तो किस खेत... मेरा मतलब है कि हमारे साथ चलो भागकर और जान बचा लो अपनी।

चिंपांजी : (झल्लाकर) कृपया अपनी राय न दें। बस राक्षस का पता भर दे दें!

खरगोश : (सोचते हुए) ऐसा है, तो यही सही... आपकी कोई आखिरी इच्छा है, तो बता दें, जिसे हम सभी पूरा करने की कोशिश करेंगे...

चिंपांजी : (सिर के बाल नोचते हुए, बेचैनी से) पता!...आपको राक्षस का पता मालूम है या आप भी किसी की सुनकर भाग पड़े हैं?

खरगोश : (सोचते हुए) हाँ, पता... खरगोश ने बताया, पते की बात तो यह है कि आप नाहक अपनी जान के पीछे पड़े हैं... मेरी मानें तो...

चिंपांजी : (चिल्ला उठता है) पता!...

खरगोश : (फिर से चिंपांजी को समझाने की कोशिश करता है) देखो भाई, तुम हमारे दोस्त हो इसलिए कहता हूँ...

चिंपांजी : (सीधे-सीधे पूछता है) तुम्हें राक्षस के बारे में किसने बताया?

खरगोश : (अपनी आँखों की ओर इशारा करता है) क्यों, मैंने खुद अपनी इन आँखों से देखा है

चिंपांजी : (मज़ाक़ बनाता है) और इन आँखों ने उसे कहाँ देखा है?

खरगोश : (हाथ से एक ओर इशारा करता है) उस अंधे कुएँ के पास, जहाँ ताड़ के पेड़ लगे हैं, पर अब तक तो वह वहाँ से कहीं और चला गया होगा।

चिंपांजी : (चल देता है) धन्यवाद!...

सभी जानवर : (एक सुर में) हम नहीं चलेंगे... हमें अपनी जान अभी फालतू नहीं लगती...

चिंपांजी : (बेपरवाही से) तो ठीक है मैं ही जाता हूँ...जो मेरे पीछे आना चाहे आ सकता है सभी जानवर वहीं खड़े होकर सिर जोड़कर खुसर-पुसर करने लगते हैं।,

खरगोश : (फुसफुसाता है) भाई, पीछे-पीछे सावधानीपूर्वक चलने में क्या हर्ज है? अगर राक्षस खाएगा, तो पहले चिंपांजी को ही तो। इतने में हम भागकर अपनी जान बचा लेंगे!

लोमड़ी : (फुसफुसाती है) और हाँ, हम सुरक्षित दूरी पर बने रहकर तमाशा देख सकेंगे।

सभी जानवर : (असमंजस की हालत में) चलो, चलो चलकर देखें।

सब चिंपांजी के पीछे चल देते हैं। चलते-चलते चिंपांजी अंधे कुएँ के पास पहुँच जाता है। सारे जानवर झाड़ियों, पेड़ों आदि के पीछे छिपकर उसे देखते हैं।,

भालू : (दुख के साथ ठंडी सांस लेकर) अब राक्षस चिंपांजी को खा जाएगा... बेचारा चिंपांजी... कितना भला जानवर था!

अचानक चिंपांजी हँसने लगता है। वह ज़ोर-ज़ोर से ठहाके लगाने लगता है। चिंपांजी को हँसता देख बाकी जानवरों का डर चला जाता है, और धीरे-धीरे झाड़ियों आदि से निकलकर सारे जानवर उसके पास आ जाते हैं।,

चिंपांजी : (लोमड़ी से व्यंग्यपूर्वक) इस ख़तरनाक राक्षस का पेट इतना बड़ा तो नहीं है। और उसकी भूरे रंग की मजबूत पूँछ, जामुनी रंग के मोटे और बड़े-बड़े पैर, नीले रंग के लंबे-लंबे दाँत और न जाने किस रंग के नुकीले सींग कहाँ हैं?

लोमड़ी : (अचकचा जाती है, और कुछ नहीं सूझता, तो भालू की ओर मुड़ जाती है) हाँ बताओ, इसकी भूरे रंग

इंडिया नेटबुक्स द्वारा प्रकाशित

प्रो. राजेश कुमार की दो महत्वपूर्ण कृतियाँ

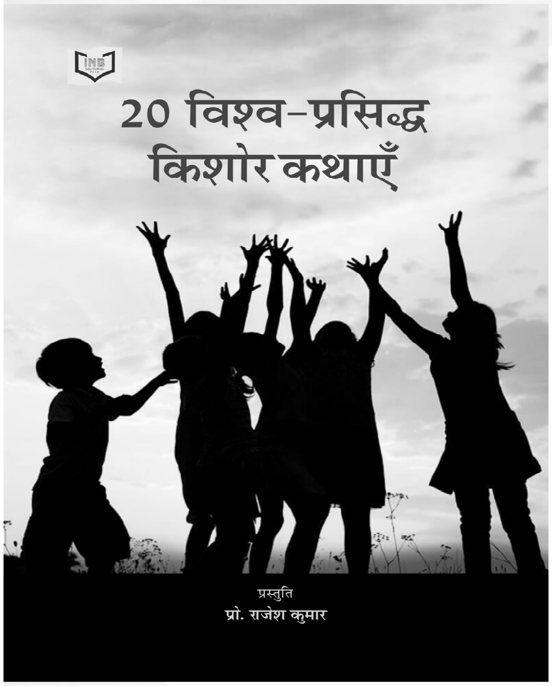

की मज़बूत पूँछ, जामुनी रंग के मोटे-मोटे चार पैर और नीले रंग के बड़े-बड़े दाँत कहाँ हैं?

भालू : (जवाब नहीं सूझता, तो हाथी और मुड़ जाता है) हाँ, हाँ, बताओ, इसकी लंबी और कठोर भूरे रंग की मज़बूत पूँछ और जामुनी रंग के तुम्हारे पैरों से भी बड़े और मोटे पैर कहाँ हैं?

हाथी : (हाथ झाड़ते हुए तुरंत बंदर की ओर घूम जाता है) ये तो इनसे पूछो! कहाँ है, इसकी लंबी, मोटी और भूरी पूँछ?

बंदर : (तुरंत खरगोश की ओर मुड़ जाता है) यह तो...

खरगोश : (बंदर को बोलने का मौका नहीं देता) जितना मैंने कहा था, उतना तो अभी भी यहाँ है। देख लो भयानक लंबा लाल पेट, पीठ पर काला गूमड़, और एक चमचमाती गोल आँख!

बंदर : (सिर हिलाकर समर्थन करता है) हाँ... यह तो है!

सभी जानवर : (चिंपांजी की ओर मुड़कर) और हम न जाने अपनी ओर से क्या-क्या जोड़कर इस राक्षस को और भी भयावना बनाते रहे...

चिंपांजी : (हँसकर) और मज़ेदार बात तो यह है कि यह राक्षस नहीं है अरे बुद्धुओं, यह तो टॉर्च है

टॉर्च उठाने के लिए आगे बढ़ता है।,

सभी जानवर : (घबराकर) आगे मत बढ़ो... आगे मत बढ़ो...!!

चिंपांजी : (आगे बढ़कर टॉर्च उठा लेता है) अरे अक्ल के दुश्मनों, यह तो टॉर्च है, जो अंधेरे में उजाला करने के काम आती है। और यह गूमड़ इसका बटन है, जिससे इसकी आँख की रोशनी चालू होती है, और बंद भी हो जाती है। वह टॉर्च के स्विच को पीछे खिसकाकर रोशनी गुल कर देता है। सारे जानवर अचरज से उस नई चीज़ को देखने लगते हैं। धीरे-धीरे उनका डर दूर हो जाता है, और वे उसे हाथ में लेकर उलटने-पुलटने लगते हैं। वे उसे चालू करके और बंद करके देखने लगते हैं, और अपनी मूर्खता पर "हो हो" करके हँसते हैं। पर्दा गिरता है।

अपराजिता

अंजू खरबंदा

आज पति को गुजरे तीन महीने होने को आए। कितना कुछ बदल गया न इन तीन महीनों में! पति थे तो कितनी निश्चिंतता थी जीवन में, वे ही कारोबार का सारा हिसाब किताब देखते, बेटा न होने का ताना मिलने पर वे ही उमा और दोनों बेटियों की ढाल बन डटकर खड़े रहते। एक बेटी तो ब्याहा गए, दूसरी भी बस ब्याहने लायक ही है।

"चलो शुक्र है संयुक्त परिवार है, माँ बेटियाँ ढकी रहेंगी।" पति की मृत्यु पर सभी के लबों पर बस यही वाक्य था, उसने भी खुद को यही समझाया। दुनियादारी से अनजान उमा इन तीन महीनों में शतरंज का मोहरा बन गई थी। आज्ञाकारी बहू की तरह जेठ के इशारों पर नाचती, विरोध तो कभी करना सीखा ही न था पगली ने!

एक दिन जेठ ने मकान के पेपर उसके आगे रख दिये।

बहू इन पर हस्ताक्षर कर दो।

उसने पहली बार नजर उठा जेठ की ओर देखा

जेठ ने समझाने के लहजे में कहा

बन्नो अब ब्याहने लायक है, उसका ब्याह इतनी धूमधाम से करूँगा कि दुनिया देखेगी। तुम बस इन कागजों पर हस्ताक्षर कर दो, आज से तुम तीनों की पूरी पूरी जिम्मेदारी मेरी।

उनकी कुटिल मुस्कान कमरे की मद्धम रोशनी में भी उनके चेहरे पर दमक रही थी।

उनका काईयांपन और शतरंज की चालें समझ आने लगी थी उमा को।

बड़ी और दामाद जी को ये कागज दिखा दूँ एक बार...!

उनका क्या लेना देना हमारे घर के मामले में

पहली बार जेठ जी क्रोधित हो फुफकार उठे।

मेरे परिवार का हिस्सा हैं वे दोनों!

तुम्हारा सहारा हम लोग बनेंगे न कि वे दोनों!

अपना घर, कारोबार सब आपके नाम करके मैं आश्रित नहीं बनना चाहती जेठ जी... और हाँ मुझे ऐसे किसी सहारे की कोई आवश्यकता नहीं जो मुझे ही बेसहारा बना दे।

कहते हुए उमा ने वे कागज टुकड़े टुकड़े कर डस्टबिन में डाल दिये और साँझ का दिया जलाने मंदिर की ओर बढ़ गई। दीपक की लौ फड़फड़ाने लगी तो उसने झट अँजुरी से ओट दे उसे सुरक्षित कर लिया। दीपक का उजास उसके सूने चेहरे पर पड़ा तो चेहरा ओज से जगमगा उठा।

इंडिया नेटबुक्स द्वारा प्रकाशित
अंजू खरबंदा की महत्वपूर्ण कृति।

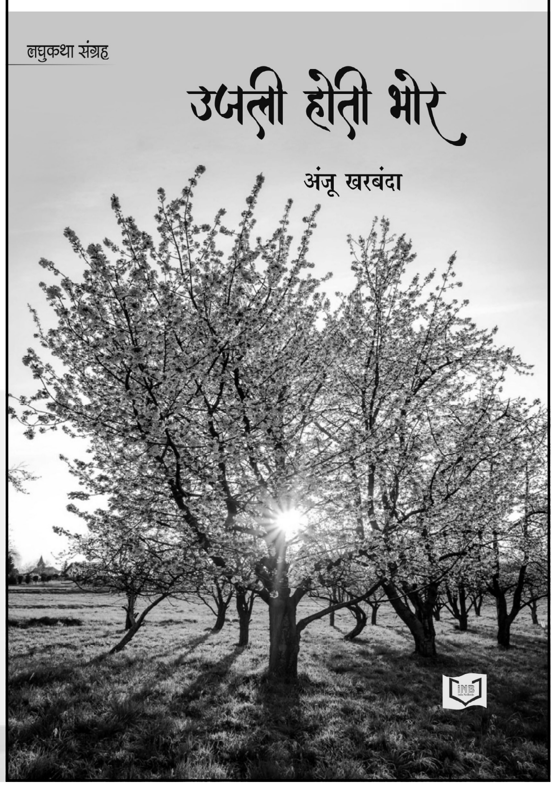

माँ की नज़र

कान्ता रॉय

"लंच में क्या बनाऊं"

"आप रहने दीजिए। एक अर्जेंट मेल करना है, बस पांच मिनट में उठती हूँ।"

"तुम रहने दो, अपना प्रोजेक्ट पूरा करो। आज लंच मैं बना लेता हूँ।" कहते हुए अखिलेश फ्रीज में से सब्जी निकालने लगे।

ईमेल करने के बाद राहत महसूस करते हुए कुर्सी पर सिर टिकाए पूना वाले अगले क्लाइंट के लिए एस्टीमेट बनाने लगी। तभी कुकर की सीटी बजी। नजर रसोई में सब्जी काटने में व्यस्त अखिलेश पर जाकर टिक गई।

मां के जाने के बाद अखिलेश में कई बदलाव देखने को मिल रहें हैं। अब मेरे देर तक बाहर काम करने पर ऐतराज नहीं जताते। बात-बात में टोकने की आदत खत्म हो गई है। इन्हीं सब बातों को लेकर पहले घर में जाने कितनी तनातनी और लड़ाईयां हुई हैं।

माँ के आँखों से उमड़ते आँसू जेहन में एकाएक तैर आए हम पति पत्नी की लड़ाईयों से माँ बेचारी कितनी दुखी रहती थीं। माँ को तो बेटे की सुखी गृहस्थ जीवन देखना भी नसीब नहीं हुआ था। चैन से बेचारी ने कभी एक रोटी न खाईं।

मैं, न तो ऑफिस में पूरी पड़ती, न ही घर में। दस घंटे की नौकरी और ये गृहस्थी। दोनों को अकेले सम्भालना।

माँ और अखिलेश, दोनों की अपनी-अपनी जरूरतें, पूरा करने वाली अकेली मैं।

कभी तो सोचती थी कि कह दूं,

माँ, आपको नौकरी वाली बहू नहीं लानी चाहिए थी। किसी कम पढ़ी-लिखी को ब्याह लातीं जो सुबह से रात तक आप दोनों माँ बेटे की तीमारदारी में लगी रहती।

लेकिन उनका इसमें दोष नहीं था। मां बड़ी ही अच्छी थीं। भले वह घर के किसी काम में मदद नहीं करती थीं, कभी मुझे परेशान करने की उनकी मंशा भी नहीं रही।

जो जैसा मैंने थाली में परस दिया, बेचारी खुशी-खुशी खा लेती थीं। वो तो बस अखिलेश ही थे जो माँ की थाली में ताक-झांक करते रहते थे और लड़ाई के लिए कोई न कोई विषय ढूंढ लेते थे। रोटी के साथ सलाद क्यों नहीं रखा, माँ की थाली में दही नहीं परोसी, माँ भिंडी नहीं खाती, माँ के लिए तुरई और लौकी की सब्जी रोज बनाया करो।

कपड़े धोने से लेकर प्रेस करने तक की जिम्मेदारी मेरी थी। मेरी नौकरी इस घर की जरूरत नहीं थी बल्कि वह मेरी अपनी महत्वाकांक्षाएं थी। इसलिए झेलना मुझे ही था। यह अकेली मेरी समस्या थी।

अकेले घर बाहर सामंजस्य स्थापित करते हुए मेरा बुरा हाल हो रहा था। उस दिन सुबह अचानक माँ को सोते में ही अटैक आया और सदा के लिए सो गई।

उनके जाने से घर में एक बहुत बड़ा सन्नाटा पसर गया था। अखिलेश, मैं और लम्बी चुप्पी। लगा जैसे माँ के हाथों में ही हम सबकी जीवन डोर थी। बिना इशारे के ही हम दोनों कठपुतली बनकर उनके लिए नाच रहे थे।

माँ को गए करीब तीन माह बीत चुके हैं।

रसोई की परिधि में जहां सिर्फ मैं हुआ करती थी अब उसमें अखिलेश भी शामिल हो गए हैं।

अखिलेश का घर जल्दी लौटने पर हमारे लिए डिनर तैयार करके रख लेना, सुबह वॉशिंग मशीन चलाना और अपने कपड़ों के साथ मेरे कपड़े भी धो देना।

लगभग घर के सभी कामों में मदद करना, मन में मीठी लहर भरता था पर कौतूहल भी जगाता था।

आज मैंने कहा जानते हैं, जैसे अब आप हैं, हमेशा से मैंने ऐसे ही पति की परिकल्पना की थी। मेरे सपनों के राजकुमार। मेरी हर बात में मेरे साथ ऐसे ही खड़े होने वाले।

उन्होंने मेरी तरफ देखा और करीब आकर रूमानियत से पूछा, और क्या-क्या सोचा था।

इस अनोखी अदा पर मेरा रोम-रोम पुलकित हो उठा। शर्मा कर झट् नजरें उन पर से हटाने की कोशिश की। हठात्

दीवार पर सुनहरे फ्रेम में जड़ी माँ की तस्वीर देखने लगी।

"माँ के सामने कितने झगड़े हुए हमारे। जैसे हम आज प्यार से रहते हैं, वैसे ही मां के होने पर रहते तो मां भी कितनी खुश होती न!"

सुन कर अखिलेश गम्भीर हो गए और मां की तस्वीर के पास जाकर खड़े हो गए।

मैंने फिर से कहा, काश, माँ हमारी खुशियों में शामिल हो पाती। हम दोनों में सामंजस्य देखकर वे कितनी खुश होती। मां के सामने आप इस तरह से क्यों नहीं रहते थे।

"नहीं रह सकता था।"

"क्यों नहीं रह सकते थे"

"क्योंकि मुझे माँ की नजरों में 'जोरू का गुलाम' नहीं बनना था।"

लघुकथा

सावधानी

सदानंद कविश्वर

ठीक एक बजे छुट्टी की घंटी बजी और बच्चों का झुण्ड अपने-अपने बस्ते, पानी की बोतलें इत्यादि सँभालते हुए बाहर की ओर बढ़ने लगा। जिन बच्चों को स्कूल बस से जाना था वे बाईं तरफ खडीं अपने अपने रूट की बसों की तरफ जाने लगे स ग्यारहवीं कक्षा की दीपा भी अपने रूट की बस में बैठ गई। बच्चों को उनके निर्धारित स्थान पर उतारती हुई बस बढ़ी जा रही थीए सबसे आखिर में उतरने वाली दीपा को हल्की झपकी सी आ गयी थी स जब एक झटके से बस रुकी तो दीपा ने हड़बड़ाते हुए बाहर देखाए जुलाई महीने की चिलचिलाती धूप में एक जंगलनुमा उजाड़ स्थान (जो दीपा के घर और मुख्य सड़क के बीच में था) के पास पेड़ों के झुरमुट में बस रुक चुकी थी बस में उस समय दीपा, ड्राईवर और कंडक्टर यही तीन लोग थे।

"क्या हुआ अंकलए यहाँ क्यों रुक गयी बस" उसने कंडक्टर से पूछा, तब तक ड्राईवर इंजन बंद करके उसके पास आया और उसके कंधे पर हाथ रख कर बोला, "देख, जैसा हम कहते हैं, वैसा चुपचाप कर स हम कुछ नहीं कहेंगे वर्ना यह देख ले" उसके हाथ में लोहे की बड़ी सी छड़ थी।

दीपा ने एक पल सोचा और बोली, "मुझे पानी पीना है",

"हाँ, हाँ पी ले, तू भी क्या याद रखेगी"

दीपा ने बस्ते से पानी की बोतल निकालने के स्थान पर एक डिब्बी बस्ते में ही खोली और उसमे रखा मिर्च का चूरा मुट्ठी में भर लिया, ड्राईवर ने जैसे ही झुक कर उसके पास आना चाहा, दीपा ने मुट्ठी ऊपर करके जोर से फूँक मारी और पूरा चूरा ड्राईवर की दोनों आँखों में पहुँच गया। बिलबिलाता हुआ ड्राईवर जोर से चीखा और एक भद्दी सी गाली देता हुआ दोनों हाथों से आँखों को दबाता हुआ एक तरफ गिर सा गया स कंडक्टर, खिड़की का पर्दा ठीक कर रहा था, कुछ न समझ कर, हैरान सा दीपा के पास आया,

तब तक दीपा डिब्बी में बचा हुआ मिर्च का चूरा मुट्ठी में भर चुकी थी स उसने जैसे ही दीपा का एक हाथ पकड़ा, दीपा ने मुट्ठी खोल कर उसकी आँखों की तरफ उछाल दी स ड्राईवर की ही तरह वह भी तड़पता हुआ सीट पर गिर पड़ा।

दीपा ने आव देखा न ताव, तुरंत बस्ता उठाया और बस से निकल कर बेतहाशा घर की तरफ भागने लगी स मन ही मन माँ को याद करती जा रही थी, जिसकी सावधानी के कारण ही उसके साथ अनर्थ होते-होते बच गया था।

मिर्ची के रंग

संस्कृति चौराहे पर एक शाम

धर्मपाल महेंद्र जैन

हम हिंदी के राजमार्ग पर चल रहे थे। रास्ते में रसीलाजी छतरी खोल कर खड़े थे। आँगन में न धूप थी, न बारिश, न बादलों की आवाजाही, फिर भी उनकी छतरी खुली थी। उनकी छतरी पर अंग्रेजी में लिखा था हिंदी। उन्होंने लयबद्ध होकर बूम मारी 'मेरी छतरी के नीचे आजा'। मेरे साथ दो-तीन अन्य संभ्रांत राहगीरों का ध्यान उन्होंने बँटाया और हम उनकी तरफ खींचे चले गए। आकर्षण हो तो ऐसा, कचरा बगदा सड़क पर चलता रहे और माल-माल उनकी ओर खींचा चला आए। उन्होंने हमें ठोका बजाया और संभावना देख कर कहा 'आ जाइए, हमारी छतरी है, इसलिए हमने डंडा पकड़ रखा है। अन्यथा यह सबके लिए खुली है। मर्जी हो तो चंदा देना, मर्जी न हो तो सदस्यता शुल्क दे देना।' उनकी छतरी यकायक संस्था जैसी लगने लगी। मैंने जिज्ञासा व्यक्त की कि 'आपकी छतरी में बड़ा स्कोप है, हमारे लिए कोई विशेष सेवा हो तो बतायें'। वे सांकेतिक शब्दावली में बोले "यदि छतरी की ताड़ी बन कर सेवा करनी हो तो नियत खर्चा देना पड़ता है। हाँ, इसका खटका बनना हो तो हमें बड़े दानदाता की तलाश है। परंपरा ही ऐसी है, आप कुछ देंगे तो हम कुछ बना देंगे। दो हाथ हैं ही इसलिए कि एक हाथ दो, दूसरे हाथ लो। हम मंत्रमुग्ध हो छतरी में घुस कर अप्राकृतिक सौंदर्य का आनंद लेने लगे। छतरी में साहित्य था, संस्कृति थी, नाम था, पद थे और भी बहुत कुछ था जो जानना शेष था। तब तक हम नए मुर्गों की गंध पा कर सुरीलीजी आ गईं।

मैं उनका नामकरण करता तो उन्हें अतिसुरीली कहता। जैसा कि प्रतिभाशालियों के साथ होता है, वे अपने नाम से कम गुणी निकलीं। उनके मुखारविंद से शब्द ऐसे बहते थे जैसे पतित-पावनी नदी बहती हो। उनके श्रीमुख से आ रहीं फुहारों से मेरा आचमन हो रहा था। मेरी इच्छा हुई उनसे दूर छिटक कर अवांछित बूंदाबांदी से बच जाऊँ। उनके दो गुण बार-बार उद्‌घाटित हो रहे थे, उनका सद्‌ज्ञान और वाक्वैभव। यूँ तो हम भारतवंशी जन्मजात सर्वगुण संपन्न होते हैं पर वे विश्वविद्यालय से पच्चीसवीं कक्षा पास कर आई थीं। रट्टा ज्ञान अनायास ही छलक जाता था। उन्होंने हमारे स्वागत में अपनी दंत पंक्तियाँ खोलीं तो मेरे होंठ डर कर चिपक गए। मेरे भीतर का कबाड़खाना केवल डेंटिस्ट के देखने के लिए है, इसका सार्वजनिक प्रदर्शन वैसे भी निषेध है। वे हमें एक बड़े टेंट में ले आईं। यहाँ उनकी छतरी की खूबियों के फोटो जगह-जगह चस्पा थे। छतरी के नीचे सजे मंच के 'हाई डेंसिटी फोटो' थे। हमेशा मंचासीन दिखने वाली हस्तियाँ यहाँ भी थीं। रसीलाजी कभी उन्हें पुष्पहार पहना रहे थे, तो कभी सुरीलीजी उन्हें पुष्प गुच्छ दे रही थीं। ये फोटो आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने देख लिए होते तो हिंदी साहित्य का इतिहास कुछ और होता। भजन मंडली पूरी निष्ठा से उनकी ज्ञात-अज्ञात सेवाओं के भजन गा रही थी। 'हे रसील पालुए हे सुरील सम्हालु।' यहाँ परस्पर आदर की पराकाष्ठा देखने मिली। सब एक दूसरे के नाम के आगे श्री और नाम के पीछे जी का डबल इंजिन लगा रहे थे। वे नाम के साथ श्रीजी के उपसर्ग और प्रत्यय लगा कर मूल व्यक्ति के इतिहास और भूगोल का सत्य विवेचन कर देते थे। इस छतरी में बस रसील-सुरील ही गुणी थे, शेष चीयर लीडर्स बना दिए गए थे।

हम खा-पीकर खिसकने लगे तो सुरीलीजी बीमा एजेंट की तरह चिपक गईं। हमने कहा, हमें और भी छतरियों की आभा देखनी है। उनकी लालिमा पीली पड़ने लगी और वे खिसियानी बिल्ली की तरह अपनी छतरी के गुण पुनः गिनाने लगीं। यथा 'हमारी छतरी नगर की सबसे बड़ी साहित्यिक छतरी है। हमारी छतरी हिंदी की प्रतिष्ठित और पुरानी छतरी है। यह अंतरराष्ट्रीय स्तर की छतरी है।' वे 'मैं' से बाहर नहीं निकल पा रही थीं, पर उन्हें 'हम' होने का

वहम् हो गया था। वे छतरी को छत्री जैसा बोल रही थीं और खुद को क्षत्रिय जैसा दिखा रही थीं। मेरा दिमाग वहीं से सटक गया। हम बाहर निकल आए तो देखा रसीलाजी मजबूती से छतरी पकड़ कर खड़े थे। छतरी में घुसने के आतुर लोगों की भीड़ बढ़ती जा रही थी।

हम एक छतरी देख कर ही थका-थका महसूस कर रहे थे। हिंदी मार्ग तो छोटी-बड़ी कई छतरियों से अटा पड़ा था। सभी अपनी दुकानें चमकाने में लगे थे। आगे बढ़ते हुए हमें सुरीलीजी की चेतावनी याद आ रही थी 'नकली छतरीवालों से सावधान रहना। वे आज छतरी खोलते हैं, अनुदान बटोरते हैं और कुछ दिनों में छतरी सहित गायब हो जाते हैं। फिर वे पुरानी छतरी पर नया नाम लिख देते हैं, झकास कशीदाकारी करते हैं और हमारी नकल उतारते हुए गाते हैं 'मेरी छतरी के नीचे आजा'। उन्होंने हमें आगाह करते हुए कहा था 'हमारी छतरी में नहीं आओ तो कोई बात नहीं, किसी और की छतरी में घुसे तो मुश्किल होगी।' उन्होंने हमें समझाया था कि 'उनकी छतरी सबसे प्रामाणिक है। यह धूप में छाँह देगी, बारिश में छत देगी। दूसरी छतरी वाले, जब बारिश होती है आपको छतरी में से भगा देते हैं और जब बर्फ गिरने लगती है तो वे अपने दड़बे में दुबक जाते हैं। जब धूप निकलती है तो वे बेरंग उग आते हैं, वे केवल रौशनी बटोरना चाहते हैं।'

हिंदी मार्ग बहुत प्रसिद्ध मार्ग हैं, पर स्वर्ग तो नहीं है। सुना है, इसके आगे संस्कृति चौराहा है, वह स्वर्ग बन रहा है। संस्कृति चौराहे पर पूरा पैकेज मिलता है, पूरा मतलब, जो चाहिए वो। हम सोचते रहे, एक अकेले हिंदी के नाम पर किस कदर देश लूटा जा सकता है। आगे तो संस्कृति चौराहा है, वहाँ कितनी धमचक मची होगी। वहाँ तो साहित्य, संगीत, कला, आस्था और धर्म सबके ठेके हैं। वहाँ पुण्य इधर-उधर करने और कमाने के कितने अवसर हैं। वहाँ वंश, जाति, भाषा, राज्य और राजनीति की भी विशाल दुकानें हैं। जिसकी जब मर्जी हो वह अपनी छतरी खोल कर वहाँ खड़ा हो जाता है और देखते-देखते अपना हॉल खड़ा कर लेता है। सड़क के दोनों ओर बनीं बहुतेरी छतरियाँ, दुकानें और हॉल देखते-देखते हम अंततः संस्कृति चौराहे पर आ गए।

यहाँ की रौनक मशहूर थी। सरकारी सूर्य के प्रकाश में संस्थागत ट्यूबलाइटें जल रही थीं। स्वर्णिम प्रकाश में चौराहे पर दूधिया चांद की मृदुलता छा रही थी। यहाँ छतरियों की बजाय भव्य प्रवेश द्वार बने थे। द्वार मनमोहक थे, पर अक्सर बंद रहते थे। इनमें घुसने के लिए छोटे-छोटे चोर दरवाजे बने थे। जानकार लोगों की संगत में रहकर अंदर-बाहर होना आसान था। आसपास के मिष्ठान भंडार भरे पड़े थे। गेंदे और गुलाब की महक से गुमठियाँ भरी थीं। जैसे ही अंदर किसी सम्मान की घोषणा होती, बाहर पुष्पहार और मिठाइयों के भाव बढ़ जाते। कानाफूसी शुरू हो जाती कि फलां अयोग्य यकायक कैसे योग्य बन गया! उन्हें कौन समझाता कि प्रभु कृपा भी कोई चीज होती है जो अयोग्यों पर ही होती है। सम्मान सीमित थे और सम्मानाकांक्षी बहुत सारे। इसलिए मार्ग के दोनों ओर भिक्षुकों के याचक हाथ फैले थे। कुछ लोग इतने श्रद्धानिष्ठ थे कि संस्कृति के नाम पर हाथ फैलाने के लिए अपाहिज बन गए थे। साथ ही कुछ श्रेष्ठ, भिक्षुक कोटे से गलियारे में प्रवेश पा गए थे। पैसों से अधिक उन्हें नाम कमाने की चिंता थी। वे बड़ा हाथ मारने के लिए भीतर घुसे थे और बड़े दीन भाव से मठाधीशों से कह रहे थे 'प्रभु?, मेरे अवगुण चित्त ना धरो'। हम नौटंकी देखते-देखते येन-केन प्रवेश द्वार से अंदर आ गए। यहाँ विशाल छतरियाँ लगी थीं, जैसी पाँच सितारा होटलों के लॉन में लगी होती हैं। इन छतरियों के नीचे पड़ा कचरा, साहित्य माना जा रहा था। हमने कचरे को साहित्य में बदलने की प्रक्रिया जाननी चाही तो उन्होंने हमें आदर से बिठाया और अपना मेनू रख दिया। अपना विमोचन करवाना हो तो 'एक्स' लाख, अपने विमोचन के साथ विवेचना करवानी हो तो 'वाय' लाख। सुपर-डुपर पैकेज चाहिए तो 'झेड' लाख। टॉप क्लास के पैकेज में अकादमियों को गिलास में उतारना शामिल था। बाहर लोककला, परंपरागत रासलीला और उदात्त संस्.ति को ले कर बड़ी-बड़ी छतरियाँ ताने लोग खड़े थे। भीतर शैम्पेन के फव्वारे फूट रहे थे। कैबरे में उत्तर आधुनिकाएँ थिरक रही थीं। बाहर सुरीली जी एक तालाब गंदा करती लग रही थीं, यहाँ भीतर मछलियाँ ही मछलियाँ थीं और मगरमच्छ पहरा दे रहे थे।

काश! भगवान इतने दांत न देता

मुकेश राठौर

कहते हैं वकील और डॉक्टरों से भगवान बचाए अपना दूसरा गाल हमेशा आगे रखने वाली सोच के कारण वकीलों से तो कभी पाला नहीं पड़ा, लेकिन डॉक्टरों से कौन बचा है जो अपन बचते! शरीर है तो दिल है,दिल है तो डॉक्टर है और डॉक्टर है तो बिल है ही दिल, जिगर, नज़र क्या!आज हर अंग के स्पेशलिस्ट है। गुर्दों से लेकर अग्नाशयी इन्सुलिन तक और फेफड़ों से लेकर दिमागी उधेड़बुन तक हर रोग के स्पेशलिस्ट हैं बेचारे दिल के डॉक्टर...! मरीज का एक दिल, वह भी चोट खाया हुआ नाक, कान, गला विशेषज्ञ तो इस तरह मरीज निपटाते हैं,जिस तरह सरकारी प्राइमरी टीचर आधे घण्टे की क्लास में तीन-तीन कक्षाओं को निपटाते हैं आर्थोएन्यूरो और हेयरोलॉजिस्ट के अलग ही ततुम्बे हैं बुरा न माने तो मेरी नज़र में सबसे बड़े 'डेंटिस्ट' ही है क्योंकि इनके लक्ष्यांग एक, दो नहीं बल्कि पूरे बत्तीस हैं यहां धंधे की फुल अपॉर्च्युनिटी है।

बीते दिनों मेरी एक डेंटिस्ट से मुठभेड़ हुई हुआ यूं कि अपने छह वर्षीय पुत्र के दांत दिखाने मुझे खण्डवे जाना पड़ा मैंने शहर के जाने-माने डेंटिस्ट को दिखाया तो उन्होंने बताया कि दांतों में कीड़ा लग गया है। मैंने पूछा कि वैसे ही जैसे देश को नेता लग गए हैं डॉक्टर मुस्करा दिए, मुस्कुराना ही था न मुस्कुराते नहीं तो क्या करते मुस्कुराहट में ही बड़े सच छुपाए जा सकते हैं।

डॉक्टर ने इंद्रजाल फैलाना शुरू किया बोले कीड़ें ज्यादा है इसलिए एडवांसड लेज़र उपचार करना होगा हमें इंद्रजाल में फंसना ही था, सो फंसे डॉकसाब ने 'मैगी टाइम' में मामला निपटा दिया बच्चे का मुंह और अपने हाथ साफ कर वे ठान पर विराजे अब बारी मेरा खीसा साफ करने की थी। मैंने पूछा डॉकसाब कित्ते हुए वे बोले तीन सौ तीन सौ सुनकर मैं भौचक मुझे लगा यार ये डॉक्टर तो भयंकर देवता आदमी है। तीन सौ रुपये में तो आज मिट्ठू वाला हाथ तक नहीं देखता और ये बेचारा दांत देख रहा है मैंने खुशी के अतिरेक में 51 का शगुन जोड़कर कुल 351 रुपये टेबल पर धर दिए 351 रुपल्ली देख डॉक्टर बिदकने वाले लहज़े में बोला ये क्या है तीन सौ तो रजिस्ट्रेशन चार्ज बाकी मेरी फीस हजार रुपये अब मेरी नजर में अचानक वह देवता से यमराज हो चुका था। मैंने रुपये देने के बाद हिम्मत जुटाकर पूछा डॉकसाब अब तो सब बढ़िया हो गया न! वे बोले, एक्चुअली इनैमल प्रॉब्लम है अभी ऊपरी जबड़े के लेफ्ट साइड वाले सबसे ज्यादा डैमेज 'इंसाइजर' को ठीक किया है बाक़ी दांत जैसे-जैसे डैमेज होते जाएंगे, वैसे-वैसे ठीक करेंगेद्य...और हां दस दिन के भीतर आने पर रजिस्ट्रेशन फीस नहीं लगेगी।

'जैसे-जैसे' और वैसे-वैसे में मुझे बाकायदा लूट की इंस्टॉलमेंट जैसी प्रतिध्वनि सुनाई दी मैंने कहा, डॉकसाब ऐसा है तो एक बार में ही टँटा खत्म करो और जो दांत जरा भी खराब है उसे तुरंत निकाल-नुकुल दो वे और मद्धम होते हुए बोले ऐसा नहीं है। बच्चा इतनी देर बैठ नहीं पायेगा हर हफ़्ते हम एक-एक दांत निपटाते चलेंगे मैंने मुंडी हिलाईद्य उन्हीं के मेडिकल स्टोर से सात सौ की दवाई-गोली ली और चलता बना।

अगले हफ़्ते फिर बालक को ले गया इस बार ऊपरी जबड़े के दूसरे 'इनसाइजर' का नम्बर था इसी तरह तीसरे हफ़्ते में 'केनाइन्स' का मेन्टेन्स हुआ चौथे हफ्ते देखा तो बच्चे के 'प्रीमोलर' दांत की तरह डॉकसाब भी गायब थे। पांचवें और छठवे हफ्ते बाक़ी दो 'मोलर्स' दांतों का इलाज हुआ मुझे सहूलियत और खुशी इस बात की थी कि क़ायदे अनुसार हर हफ्ते फीस की छूट मिलती रही और बालक की मिसिंग टेबलेट्स भी वापस होती रही हम भारतीय लोग गर्दन कटा कर भी अंगुली बचाकर खुश हो लेते हैं इस तरह ऊपरी जबड़े के वामपक्ष का निपटारा हो गया।

सातवें हफ्ते से दक्षिण पक्ष की बारी थी लेकिन मैं अब और दक्षिणा देने के पक्ष में नहीं था सो मैंने पांच दांतों पर पारी घोषित करते हुए आखिरी लाइफ लाइन लेते हुए कहा

डॉकसाब भागते-दौड़ते डेढ़ महीना हो गया अब नहीं बनता। एक काम करो सड़े दांतों को सही करने के बजाय 'नई बत्तीसी' ही लगा दीजिये वे मेरी अल्पज्ञता पर हंसे बोले भले आदमी, बच्चों के बीस ही दांत होते हैं तो फ़िर 'बीसी' ही लगा दीजिये, मैंने कहा मुझे अनेकों तर्क दिए गए लेकिन मैं अब फ़ाइल बन्द करवाने के मोड में आ गया था उन्हें लगा पंछी हाथ से उड़ने वाला है सो "जाते पर जस चढा" दिया जाए उन्होंने कहा, क्यों अनावश्यक खर्चे में पड़ते हो बस सफाई रखना वैसे भी दूध के दांत गिरकर स्थाई दांत दोबारा आने ही हैं मुझे लगा रन फ़ॉर बत्तीसी के बाद गोया 'गुरु मंत्र' मिल गया हो मैंने कहा, डॉकसाब यह बात पहली ही बार में बता दी होती दांत वाले डॉकसाब हं, ही, ही, ही...कर दांत निपोरते रहे इन सब दांतों में इतना पैसा गया कि मैंने जीवन में पहली बार सोचा कि काश! भगवान इतने दांत न देता...।

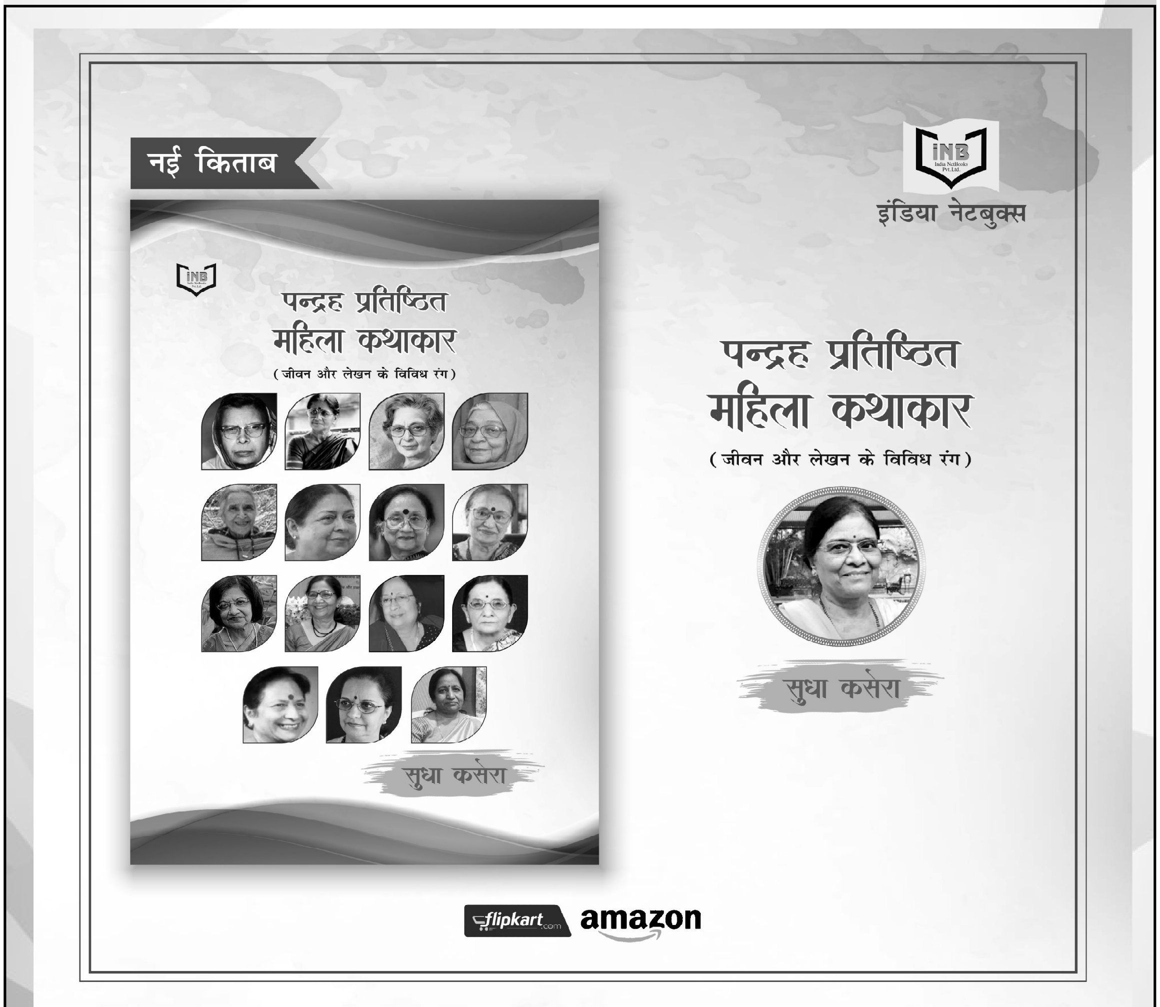

पांडेय जी सर्दी और आशिकी का लुत्फ

लालित्य ललित

जब से मौसम ने करवट ली है तब से पांडेय जी ने भी कमर कस ली है, वह भी घबराते हैं कि सर्दी कहीं किसी बेहाल प्रेमिका की तरह आलिंगन न कर बैठें। बचाव में ही सुरक्षा है यह बात पांडेय जी भली-भांति जानते हैं।

आजकल पांडेय जी ने ट्रैफिक से बचने के लिए सावर्जनिक साधन यानि मेट्रो का चुनाव कर लिया है। हफ़्ते में एक दिन गाड़ी का उपयोग करते हैं और चार दिन मेट्रो में चलना पसन्द करते हैं। उनके दफ्तर के लोग भी कहते हैं कि क्या पांडेय जी आजकल गाड़ी लेकर नहीं आते!

पांडेय जी ने कहा कि गाड़ी चलाते समय मास्क से चश्मे पर हल्की सी फॉग आ जाती है जिससे गाड़ी चलाने में असुविधा होती है। यह असुविधा बिल्कुल वैसी है जैसे गाड़ी चलाते समय खबर आई कि पेट्रोल महंगा हो गया या डीज़ल का भाव बढ़ गया।

पांडेय जी एक जनसंपर्क विभाग में अधिकारी हैं। जब भी उस इलाके में कोई उल्लेखनीय समाचार होता तो उसको मीडिया में पांडेय जी ही हाइलाइट करते।

पांडेय जी को सर्दी अच्छी लगती थी मतलब बिना प्रेस की हुई शर्ट स्वेटर में छुप जाती और खाने पीने का आनंद आ जाता। किसी ने सच ही कहा है कि मजा तो सर्दी का है और गर्मी!

न बाबा काहे याद दिला रहे हो! चिपचिपा मौसम अब क्या बताएं! बिजली का बिल! कूलर की उमस! और जहां देखो जेनरेटर की भक भक आवाजें जैसे जंगल में कितने शेर दहाड़ रहे हो!

पांडेय जी घर पहुंचे ही थे कि सामने से चीकू अपने दोस्तों के साथ दिखाई दिया। देखते ही बोला–

पापा गुड इवनिंग, आय एम चीकू पांडेय। पांडेय जी मुस्कुराए और दरवाजा खोल कर घर के भीतर चले गए।

बच्चों का जीवन और उत्साह देख कर पांडेय जी को अपना बचपना याद आ गया। घर में रामप्यारी ने पांडेय जी के लिए सकरगन्धी बना कर रखी और तसल्लीबख़्श नीम्बू और इमली का पानी भी ऊपर से छिड़क दिया ताकि स्वाद बना रहें।

जीवन में इश्क़, रोमांस और आशिक़ी बनी रहनी चाहिए। कहते भी हैं स्वयं पांडेय जी। एक बार माइनस चार टेम्परेचर में अमृतसर गए थे और वहाँ की सर्द रातों में ठंडी कुल्फी जिसे वहां कुल्फा कहा जाता है,खाते हुए फेसबुक पर फोटो चस्पा कर लोगों की नींद उड़ा दी थीं। उनका उद्देश्य यह रहता है कि अपने प्रशंसकों को अपडेट करते रहना चाहिए, आखिर प्रतियोगिताओं का समय है सबकी जानकारी चुस्त रहनी चाहिए। बहरहाल पांडेय जी अपने घर पर आजकल समय पूरा देने लगे हैं कि चले दफ्तर से और पहुंच गए चाय के टेम पर।

आशिक़ी के लिए आशिकी करने की कोई उम्र नहीं। इसी लिए पांडेय जी सबको प्रेरित करते है कि जो आशिकी करेगा वह शालीन रहेगा और विनम्र भी।

इसका मतलब लगा लीजिये भाई साहब जो विन्रम हैं और अत्यंत शालीन भी तो समझ लीजिए कि वह अभी भी प्रेम में हैं।

जब से पांडेय जी को लेखन की दुनिया में यह कहा कि यह सबसे शालीन और विनम्र व्यंग्यकार है तो साहब एक साहब बुरा मान गए। ये भी लोचे हैं जमाने में।

आइए आगे बढ़ते हैं कि दुनिया बड़ी महत्वाकांक्षी है जो अपने उद्देश्य के लिए किसी भी हद तक जा सकते हैं।

पांडेय जी सोचने लगे कि दुनिया के लोचे बेशक अपना रूप, रंग कुछ भी बदल लें पर अपने विलायती राम पांडेय जी कभी अपना मिजाज़ नहीं छोड़ेंगे। आखिर छोड़ें भी क्यों। ओरिजनल टाइप के भारतीय हैं।

बहरहाल आजकल पांडेय जी भरी सर्दी में भी गर्मी को महसूस करते हैं। उसकी नमी को महसूस करते हैं। कोई कहानी उसे अपने परिवेश में ले जाने को इतनी सक्षम है कि

अपने पांडेय जी सुबकने लगे दो बार। वह तो भला हुआ अपने दयाल बाबू का जिन्हें पांडेय जी को सम्भालना पड़ा।

पांडेय जी कहने लगे कि यही ताकत होती है किसी भी कथाकार की जो आपको संवेदनशील बना दें।

तभी चौरसिया ने खबर की कि कुछ देर में एक मीटिंग है। कांफ्रेन्स हाल में। पांडेय जी लघुशंका के उपरांत तैयार हो गए। आखिर बिजली विभाग का अखिल भारतीय कार्यक्रम है जिसमें अनेक प्रदेशों के प्रतिनिधियों ने भागीदारी करनी है।

पांडेय जी के अफसर ने कहा कि हम चाहते हैं कि इस अवसर पर आप एक कवि सम्मेलन का आयोजन कर दें। उससे माहौल बन जायेगा।

पांडेय जी ने सहमति प्रकट की और कुछ मंचीय कवियों के नाम भी बताएं। अधिकारी ने गर्दन हिलाई। उनके सहायक ने डायरी में नोट किया और पांडेय जी एक्टिव मॉड पर आ गए।

पांडेय जी के बारे में कहा जाता है कि जब तक उन्हें कोई काम नहीं सौंपा जाता वे शान्त रहते हैं और जहाँ काम दिया नहीं कि उनका स्टाफ भी एक्टिव मोड पर आ जाता था।

कुछ दिनों में अखिल भारतीय बिजली विभाग का कार्यक्रम भली भांति संपन्न हो गया।

खैर बड़े दिनों से बैठकी हुई नहीं थीं। पांडेय जी ने चंदू सिंह चंदोलिया से कहा कि मन हो और दोस्तों पर दोस्ती खर्च करने का मूड और जज्बा हो तो कल आ जाओ प्रेस क्लब!

चंदू सिंह चंदोलिया ने इस बात को प्रेस्टिज मान लिया और सहमति दे दी कि बिल्कुल आ रहे हैं, प्रेस क्लब!

दरअसल चंदोलिया को कुछ दिनों से लिखने का भूत सवार हुआ है और पांडेय जी लेखन की दुनिया के जाने माने साहित्यकार हैं।

उन्होंने राधेश्याम गोड़बोले को भी बुला लिया यह कहते हुए कि कल शाम आ जाइए, एक नए लेखक को दिशा निर्देश देने का मन है। गोड़बोले खुश हुए और कहा कि पांडेय जी आपकी यही अदा तो हमें भाती है।आप जैसा कहेंगे वैसा दिशा निर्देश कर दिया जाएगा।

पांडेय जी सोचने लगे कि आखिर जीवन में यह महत्वाकांक्षा क्यों पाले रखते हैं लोग!

समझ नहीं आता।

किसी को काली लड़की से शादी नहीं करनी, कन्या गोरी हो। और लड़कियां सोचती हैं कि दुपहिया वाला तो जिंदगी क्या नजदीक भी बर्दाश्त नहीं, कम से कम चौपाया वाला हो, मारुति तो हो या एस यू वी वाला। आखिर स्टेटस की बात है।

हैरानी का विषय यह कि कोई मेट्रो में चल रहे यात्री को पसन्द करना नहीं चाहतीं। वर हो तो सरकारी या फिर मल्टीनेशनल वाला।

अब जरा सोचिए निम्न क्लास के लड़के कहाँ जाएंगे!

बेचारे ओला टाइप के और भटूरे वाले क्या कुंवारे रह जाएंगे!

जबकि सरकारी वाले से बेटर हैं ये लोग। पिछले दिनों एक अमृतसर कुलचे वाले ने अपनी बेटी की शादी में फरारी दी।

सोच कर देखिये। ये हाल है और आप बैठे हैं बैठकी करते।

चंदोलिया ने तीन कविताएं सुनाई और गोड़बोले ने चार पैग सीवास रीगल के खेंच दिए, शुद्ध परम्परा से के व्यक्ति है, पांडेय जी से कई बार प्रेरित भी हो जाते हैं।

पांडेय जी ने कहा कि चंदू सिंह चंदोलिया की कविताएं नए क्षितिज का निर्माण करती है और नए बिम्ब से भी पाठकों का परिचय कराने में सक्षम है। इनकी कविताओं में जमीन से जुड़े भाव और मौलिकता की माटी की सुगंध अपने आपमें सम्पूर्ण भारतीय होने का साक्ष्य प्रस्तुत करती है।

गोड़बोले समझ रहे हैं कि विलायती राम के भीतर विदेशी जाते ही भाव भी विलायती न होकर स्वदेशी वह भी शुद्ध प्रस्तुत होते हैं, यही पांडेय जी की खूबसूरती है।

अब गोड़बोले जी ने कहा कि मैं पांडेय जी के कथन से सहमत हूँ, चंदोलिया की रचनाएं बिल्कुल नए विषयों पर आधारित हैं जो पाठकों को निश्चित तौर पर आकर्षित करेंगी।

तभी गोड़बोले ने वेटर को कहा कि लिसन रामगोपाल, ये पैग रिपीट कर देना और एक रोस्टेड चिकन ले आना।

चंदोलिया का काव्य पाठ पूरी तन्मयता से जारी है

आइये आपको भी सुनाते हैं चंदू सिंह चंदोलिया की एक कविता

धूप का आना
उसका मुस्कराना
फिर तन्हा हो जाना
क्या आदत है तुम्हारी
जो भी हो
पसन्द है हमें
यह आदत और इश्क की बिसात!
सोच लो
हम ठहरे सीधे सादे
कहीं कुछ हो गया
इश्क में
कहीं फ़ना तो कहना कुछ नहीं हमें
हम ऐसे ही हैं
एक बार यदि किसी को देख लिया
तो सीधे दिल में उतरकर लॉकर खोल दिया करते हैं
चाहे ताला कितना ही मजबूत क्यों न हो!

राधेश्याम गोड़बोले ने कहा कि चंदू भाई आपकी शिद्दत से सुनाई कविता के संदर्भ में मुझे अपने कॉलेज जमाने की वह अभिव्यक्ति याद आ गई। पांडेय जी समझ गए कि ये यदि शुरू हो गए तो रोकना मुश्किल हो जाएगा। बोल पड़े कि आपकी कविताओं को किसी दूसरे सत्र में सुना जाएगा, आज हम चंदू सिंह चंदोलिया की रचनाओं को सुनने और उसपर दाद देने के लिए एकत्र हुए हैं। समझे न भाई साहब।

बड़ी मुश्किल से गोड़बोले को बात समझ आई। होता क्या है कि किसी के भीतर यदि चार पैग चले जाएं तो उसके भीतर का कवि खन्न से बाहर आने को उतावला रहता है।

उधर रामखेलावन भी कविता सुनते ही मूड में आ गया, पर पांडेय जी के इशारे से समझ गया कि आज का दिन उसके लिए नहीं है सुनाने को।

ये हमारा संसार जो है वह इतना उतावला क्यों है! समझ नहीं आता।अब महिलाओं को ही लीजिये, गोलगप्पे वाले पर खड़ी है कि गोलगप्पे खाये नहीं कह देगी कि भैया एक पापड़ी चाट भी बना दो, अच्छा पानी जरा हिला कर डालिये, देखिये न मुंह में नीम्बू का बीज आ गया।

चौरसिया गोलगप्पे वाला मथुरा से है। महिलाओं के नखरे और स्वाद सब समझता है।

पांडेय जी को दूर से ही सलाम बजाता है। पांडेय जी भी कभी-कभार उसके पास रुक कर एक प्लेट गोलगप्पे भकोस लेते है। आखिर जीवंत आदमी है और भाई साहब जिंदादिली भी इसी को कहते है।

क्या गोलगप्पे खाने का मौलिक अधिकार केवल महिलाओं के पास ही सुरक्षित है! बता दीजिए!

कोई था ही नहीं। पांडेय जी बड़बड़ाये और घर की ओर तेजी से निकल गए। रामप्यारी ने साबुन और मैदे के साथ एक किलो बेसन मंगवाया था।

आइए आगे बढ़ते हैं।

टेलीविजन खोला ही था कि एक मशहूर अभिनेता और अभिनेत्री की शादी की खबरें आ रही हैं। पांडेय जी को बड़ा गुस्सा आया। एक तो शादी में इनवाइट नहीं भेजा और दूसरा ये एंकर चिल्ला क्यों रहे हैं कि इतना खर्च और बाहर से बौउंसर बुलवाए गए!

बहरहाल ये कहानी जिसको पसन्द आये, आएं। हमें क्या!

अजी, सुनती हो!

खाना लगा दो, पेट में आज हाथी कदमताल करते हुए अनुलोम और विलोम की मुद्रा में है।

तभी चीकू प्लेट में फलों की चाट बना लाया। कि पापा जी मम्मी कह रही है कि शुरुआत करें, कमसे कम तड़का तो लगेगा। चलो भाई जो मिल जाये, उसी को मुक़द्दर मान लो, धन्य हो अन्नपूर्णा जी।

पांडेय जी जब अन्नपूर्णा कहते हैं तब रामप्यारी को बड़ा अच्छा लगता है।

वाह रे भारतीय नारी। तुम्हें कब कौन सा किरदार

पसन्द आ जाएं, यह कहना जरा मुश्किल है। बाय दवे तुसी जो भी हो, पर ग्रेट हो। है की नहीं।

अपने आपसे बोलने में पांडेय जी को बड़ा मजा आता था आइए आगे बढ़ते हैं।

पांडेय जी को एक निमंत्रण मिला किसी परिचित के आयोजन का। सोचा चलो हो आते है इसी बहाने सैर भी कर आएंगे और खाना भी हो जाएगा।

वहाँ से निबट कर रास्ते में ही वाट्सप की तुनतुनिया बज गए। घर आ कर देखा कि क्या है!

पढ़ते ही पांडेय जी ने रामप्यारी को कहा कि कहां सोचा था कि इस बहाने आराम करेंगे, लेकिन दफ्तर ने कहा कि कल सभी को आना है। बेचारे पांडेय जी कहाँ सोचा था कि कल गाड़ी की बैटरी बदलवानी हैं। एक बार कहीं बीच रास्ते में नखरे दिखा दिए थे, इसने। ये भी न! वाकई ग़जब मामला है। वह तो भला हो, प्यार से दुलार से चल पड़ती है। पांडेय जी ने सोच लिया था कि बैटरी बदलवाने से ही काम चलेगा, नहीं तो बात बनेगी नहीं।

सुबह दफ्तर पहुंचे कि गलियारा अंधेरे से लबरेज। चौकीदार ने कमरा खोला। पांडेय जी ने कहा कि कोई आया नहीं!

अब भला मानुष जटाशंकर क्या बोलता। ऐसे चुप हुआ जैसे क्रोमोजॉन से मिलकर आया हो। पांडेय जी ने बीस रुपये दिए और ये कहा कि चाय पीयो खुद और मन हो तो मेरे लिए भी ले आना।

पांडेय जी की यह अदा ही सबको भाती है। किसी को भी पकड़ कर काम पर लगा देते है।

अब एक बात समझ आ गई थी कि जब आगे से निर्देश मिलें ऐसा कोई भी तो उसका भी मौलिक अधिकार होना चाहिए। दफ्तर से निकलते ही मोबाइल बन्द कर देना चाहिए, न बजेगा बांस और न बजेगी बांसुरी। आई बात समझ में। खुद को समझाते और बुझाते रहे विलायती राम पांडेय जी।

सोचने लगे एक सन्देश ने सेटरडे खराब कर दिया। भगवान बाकी तुम निबट लेना, इन सबसे। जिन भाई लोगों ने सैटरडे खराब किया। अन्तर्मन खुश दिखाई दिया।उसको पता है कि पांडेय जी इसमें से भी मसाला निकाल कर मसाला डोसा बना ही लेंगे।

वैसे सर्दियों में डोसा से ज्यादा आलू का मसाला मजेदार लगता है और उससे भी ज्यादा सांभर। पांडेय जी कभी जाते है साउथ इंडियन पर तो डोसा रामप्यारी खाती है और सांभर पांडेय जी सुड़क सुड़क पी जाते है। ये है निम्न मध्यवर्गीय फार्मूला। सीख लो, फायदे में रहोगे।

पता नहीं किस को बता रहें और क्यों!

आज सर्दी ज्यादा है। पांडेय जी ने जैकेट निकाल ली। उससे यह फायदा होगा कि सर्दी से बचाव भी हो जाएगा और पांडेय जी सुरक्षित भी रहेंगे।

आज रामप्यारी ने एक डिब्बी में मूंगफली बांध दी कि जब मौका मिले तो चबा लेना। क्या दिन आ गए।

एक जमाना था जब काजू खाने को मिल जाते थे और अब मूंगफली!

महंगाई बढ़ गई, क्या खाए और क्या न खाएं। सोचने की बात है। वैसे सोचने से सर्दी डोर टू डोर जाती है। यह व्यक्तिगत अनुभव है और इसको पांच लोगों को वाट्सप करने से सदी उड़नछू हो जाया करती है।

जैसे ही चिलमन को पता लगा उसने टिप्सी मुटरेजा से लेकर मधुबाला और रामखेलावन तक सबको संदेशा भेज दिया।

राधेश्याम गोड़बोले से लेकर कल्लू कालिया तक को भी। आखिर सर्दी से बचाव करने का सबका अपना अपना मौलिक अधिकार है।

हमें चाहिए कि मूंगफली खाए और सर्दी बचाए।

तभी किसी ने कहा कि ज्यादा मूंगफली खाने से कोलेस्ट्रोल बढ़ता है। दिल की बीमारियों से यदि दूर रहना है तो मूंगफली ज्यादा न चबाए। शब्दों को चबाएं और सुरक्षित संसार बनाये।

तभी दफ़्तरी ने चाय और मट्ठी लाकर विचारों पर विराम दिया। अब पांडेय जी है और गर्मागर्म चाय विद मट्ठी। आइये आप भी बिस्मिल्लाह करें। हरि ॐ।

आदतें जो ससुराल ले जाएँ

स्मृति कुमार

कमला की नई-नवेली बहू देखकर सब पड़ोसिनें नाक-मुँह चढ़ाकर बाहर निकलीं। कारण यह पता चला कि कमला की बहू उन्हें नमस्कार करने के बाद मुँह झुकाए बैठी रही। कोई बात मुँह से नहीं निकली। निष्कर्ष यह कि बहू गँवार है। आधुनिक बहुओं जैसी एक भी बात नहीं है उसमें। यह सब जानकर कौतूहल होना स्वाभाविक था। मैं कमला की बहू को देखने के लिए गई तो मुझे भी अटपटा-सा लगा। लंबे हाथ जोड़ने के बाद बहू सिर झुकाए बैठी रही।

यों बहू सुंदर और सुशील लगी। लेकिन कहीं-न-कहीं ऐसा ज़रूर था, जिसे कमी का रोग कहा जा सके। घर लौटी तो यही बात मेरे दिमाग में घूमती रही। जैसे-जैसे मैं इस विषय पर सोचती, मेरे ज्ञानचक्षु खुलते जाते और अंततः मुझे बोधिसत्व की उपलब्धि हो ही गई। विवाहेच्छु, नवोढ़ाओं और प्रौढ़ाओं सभी के हित में मैं आगामी पंक्तियों में इस ज्ञान का प्रकाशन कर रही हूँ।

अक्सर ऐसा होता है कि ससुराल जाने से पहले लड़कियाँ अपनी बचपन की आदतों को तिलांजलि दे बैठती हैं और ससुराल जाकर छुइमुई सी बनी बैठी रहती हैं। कदाचित वे ऐसा समझती हैं कि ऐसा करने से उन्हें नए माहौल को अपनाने और उसमें अपने को स्वीकृत करवाने में मदद मिलती है। लेकिन होता यही है, जो कमला की बहू के साथ हुआ यानी कि जले-कटे ताने और 'गँवार' जैसी मनभावन उपाधि।

आधुनिक बहू बनने, नए माहौल में अपने झंडे गाड़ देने की बाबत आइए, हम आपको कुछ गुर बताएँ।

सबसे पहली बात तो यह कि आपमें जो बचपन वाली आदतें हैं, जिन पर आपके माता-पिता वारी-वारी जाते थे, उन्हें पचपन तक भी मत छोड़ि, क्योंकि ये ही तो वे साधन है, जो आपको नए माहौल अपनी जड़ें ज़माने में मदद देंगे और जिनके बल पर लोग आपका लोहा मान लेंगे। पति आपके कब्ज़े में होगा, सास चाकरी करेगी और जो कभी आनंदित नहीं होती, यह ननद पैर दबाएगी।

आपका बड़-बड़ करना, ज़ोर-ज़ोर से बोलना, बात-बात पर हँसकर ताली बजाना, अपनी तरफ़ से कोई ज़ोरदार बात कहकर हाथ मिलाना या पड़ोस में बैठे व्यक्ति की जंघा तोड़ना, सोफ़ा पर धम्म से चौकड़ी मारकर बैठना, देर तक सोते रहना, काम टालने के लिए हरदम कोई-न-कोई बहाना तैयार रखना, आदि ऐसी आदतें हैं, जो आपको ससुराल में भी मायके का आनंद देंगी।

ससुराल में आप जितना अधिक तथा जितने ऊँचे सुर में बोल सकती हों, बोलिए। बात-बात पर ज़ोर से हँसकर ताली बजाइए (चाहे हँसने की कोई बात न भी हो)। इससे आप लोगों को हँसमुख लगेंगी। दूसरे, ऐसा करने पर लोग आपको 'तल्लो भाभी' जैसे शानदार उपनाम से पुकारने लगेंगे। जानती हैं, इससे आपको कितनी शोहरत मिलेगी? आप दूर-दूर तक 'तल्लो भाभी' के नाम से जानी जाएँगी तथा लोग अपनी तल्लो भाभी को देखने के लिए बेकरार हो उठेंगे।

जब आप सोफ़े पर धम्म से चौकड़ी जमाकर बैठेंगी, तो यह आपके बचपने का प्रतीक होगा तथा आपकी ससुराल वालों को लगेगा कि वे अपने घर नन्ही सी, प्यारी सी गुड्डो लेकर आए हैं। मुँह-दिखाई आदि अवसरों पर घर आने वाले मेहमानों से खूब घुल मिलकर बातें कीजिए। उनका तथा उनके बच्चों (फिर चाहे वे कुँवारे ही हों) का हालचाल पूछिए। उनसे तरह-तरह के रंग-बिरंगे नाते जोड़िए। इससे मेहमानों और ससुराल वालों को लगेगा कि आप सबका

अच्छी तरह से ख्याल रख रही हैं और आगे भी रखेंगी।

खाना खाने बैठें, तो खूब चपड़-चपड़कर खाएँ। ख़ास तौर से तब, जब और लोग भी खाने पर साथ बैठे हों। शरमाएँ बिलकुल नहीं, वरना आप भूखी रह जाएँगी। चपड़-चपड़कर खाने से लोगों को एहसास हो जाएगा कि आप खाते-पीते घर से आई हैं। इससे आपके मायके वालों की शान में चार चाँद लग जाएँगे (जो ससुराल में आपका मुख्य कार्य होना चाहिए)।

(अर्ली टू बेड एंड अर्ली टू राइज़' को अपनाएँ। सिर्फ़ दूसरे 'अर्ली' की जगह 'लेट' लगा लें। घर का काम तभी करें, जब टाला न जा सके। बात-बात पर रूठ जाएँ और दिखावटी तौर पर खाना-पीना छोड़ दें। आप पाएँगी कि ससुराल वाले सब काम-काज छोड़कर आपको मनाने में लग गए हैं। न न न, इतनी जल्दी क्या है, जरा मुश्किल से ही मानिए। मान भी जाएँ तो न खाने की बात पर अड़ जाएँ और जब खाएँ तो यह स्पष्ट करते हुए कि खाना खाकर आप अपनी ससुराल वालों पर एहसान कर रही हैं (खाने के बारे में पहले बताई गई बातों पर अमल कीजिए)। इस प्रक्रिया से आपके ससुराल वालों पर यह स्पष्ट हो जाएगा कि आप अपने मायके में बहुत लाडली थीं तथा आपका वहाँ पर खूब ख़्याल रखा जाता था। अब आपको अपनी ससुराल में भी लाड़-प्यार मिलने लगेगा तथा शीघ्र ही आपको यह पता चल जाएगा कि लोग आपसे डरे-डरे रहते हैं।

आपको घूमने जाना है, तो किसी से पूछने की ग़लती न कर बैठिए। इस बारे में आपसे कोई कुछ पूछ बैठे, तो उसे डाँटकर चुप करा दीजिए। इससे लोगों पर प्रकट हो जाएगा कि आप उच्च शिक्षित युवती हैं। हाँ, अपने देवर या ननद वगैरह को अपने साथ ले जाने की भी ज़रूरत नहीं है।

आप अपना अधिकतर समय घर पर नहीं, पड़ोसिनों के यहाँ बिताइए। खोद-खोदकर उनके घर के सारे राज़ जानने की कोशिश में लगी रहिए। इससे आप यह साबित करेंगी कि आप दूसरों के दुख-दर्द में शरीक होती हैं। वापस आकर आप ये सब बातें अपनी ससुराल वालों को बताकर उन्हें अचंभित कर दीजिए कि जो बातें इतने सालों तक पास-पास रहकर वे आज तक नहीं जान सके, उन्हें आपने इतनी जल्दी कैसे जान लिया। इससे ससुराल वालों का आपमें आकर्षण बना रहेगा। हाँ, बदले में पड़ोसिनों के सामने अपनी ससुराल वालों की बुराइयाँ करना न भूलें। इसके लिए आपको यदि बुराइयाँ गढ़नी भी पड़ें, तो अपनी पूरी प्रतिभा इसमें झोंक दें। आप पाएँगी कि पड़ोसिनें आपको अपने घर का सदस्य मानने लगी हैं, आपकी आवभगत में कोई कमी नहीं आने देतीं और आपकी प्रतीक्षा में पलक-पाँवड़े बिछाए रखती हैं।

पति नामक जीव को भी कब्जे में करना निहायत ज़रूरी है। इसके लिए प्रकृति प्रदत्त साधनों का खुलकर उपयोग कीजिए। पति के सामने यह स्पष्ट करना बहुत ज़रूरी है कि आप नितांत सती साध्वी हैं। प्यार करने की उनकी कोशिशों का जवाब झिड़कियों से दीजिए। अपनी ओर से इसमें कोई उत्साह दिखाना अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मारने जैसा होगा। पति ज़बरदस्ती करे तो वीतराग हो जाइए।

आपको यह ध्यान रखना है कि पति और शेष परिवार के बीच खाई खोदने और उसे दिनोदिन चौड़ा करते जाने में ही आपकी भलाई है। इसके लिए आप आग लगाकर भोली बन जाइए, अपने आँसुओं का इस्तेमाल करके उसे भड़काइए और ज़रूरत पड़ने पर बैग में कपड़े भरना शुरू कर दीजिए। आप पाएँगी कि पति जोरू का गुलाम हो चुका है, आपकी बातों को तरजीह देता है और वक्त ज़रूरत आपके लिए उपहार भी लाता है।

बहनों, अगर ये सब आदतें आप अपने साथ ससुराल ले जाएँगी, तो ऐसा कोई कारण है कि आप भी कमला की बहू की तरह 'गँवार' कहलाएँ। और हाँ, यह तो ज़रूरी नहीं है कि आप इन बेमिसाल आदतों को ससुराल से ही ले जाएँ। आप नए सिरे से ससुराल में भी इनका विकास कर सकती हैं। भगवान आपका और ज्यादा करके आपके ससुराल वालों का भला करेगा।

फ्रॉडिये के फेर में फंसा रामखेलावन

रणविजय राव

रामखेलावन के आंखों की नींद उड़ गई थी। रात करवटें बदलते में बीतती रही। दाएं करवट, बाएं करवट, पेट के बल तो कभी पीठ के बल। सारे उपाय कर लेने के बावजूद उसे नींद नहीं आ रही। वैसे तो ऐसा रामखेलावन के साथ पहले भी कई बार हो चुका था, पर वजह कुछ और होती थी। दफ्तर में बॉस की झाड़ लगी हो या कोई गलत बिल बना दिया हो या कोई गलत शब्द या सेंटेंस ही लिख दिया हो। तब परेशानी दफ्तर से उसके साथ घर आ जाती थी और सीधे बेडरूम में घुस जाती थी।

तब वह रात भर हिचकोले खाते रहता था। जैसे न्यू इंडिया में दूर बीहड़ गांव में टूटी-फूटी सड़क पर निकल गया हो गाड़ी से। कच्चे-पक्के रास्ते पर वह हिचकोले खा रहा हो। और जैसे कभी कोई वाहन आगे निकले जा रही हो तो धूल का गुबार उठ कर उसकी गाड़ी के अंदर फैल गया हो।

आज नींद न आने की वजह दफ्तर की कोई परेशानी नहीं थीए बल्कि घर की ही परेशानी थी। और वह परेशानी उसकी पत्नी फुलमतिया की वजह से झेलनी पड़ रही थी।

दरअसल, हुआ यह था कि सस्ते सामान पा लेने की लालच में फुलमतिया ने महंगा सौदा कर लिया था। आजकल तो ऑनलाइन शॉपिंग का जमाना आ गया है। घर बैठे बल्कि रात-बेरात अपने बेडरूम में सिरहाने तकिया लगाए बैठे दुनिया भर की खरीदारी करते रहो। और पसंद आने पर "एड टु कार्ट" कर दो अर्थात अपनी 'पसंद की टोकरी' में डाल दो।

फुलमतिया ने भी आव देखा न ताव, सस्ते में जो पसंद आया उसे 'ऐड टु कार्ट' करती चली गई। देखते ही देखते वह ऑनलाइन पेमेंट कर दी और कुल जमा पचास हजार रुपए की खरीदारी हो गई। यह सब उसने न रामखेलावन से साझा किया और न बच्चों से। बच्चों से भी साझा करती पेमेंट करने से पहले तो वह भी उसे सचेत कर सकते थे, क्योंकि वह तो साइबर एज के बच्चे हैं। बोले तो डिजिटल इंडिया के निवासी हैं। वे सब जानते हैं। पर नहीं, फुलमतिया को तो सबको सरप्राइज देना था।

जब नियत तिथि के दो-चार दिन बाद तक भी होम डिलीवरी नहीं हुई तो धीरे-धीरे उसके होश ठिकाने आने लगे। पहले उसने यह बात बच्चों से शेयर की। उन्होंने वेबसाइट देखा। सर्च कियाए तो पता चला कि यह तो फ्रॉड साइट है। गलत साइट से खरीदारी कर ली। जो ईमेल आईडी दी थी और जो कस्टमर केयर का नंबर दिया था, सब कोशिश कर ली। पर कहीं से कोई सकारात्मक तो क्या नकारात्मक जवाब भी नहीं आया।

डरते-डरते फुलमतिया ने यह बात रामखेलावन को बताई। उसे तो जैसे काटो तो खून नहीं। होश उड़ गए। आखिर उसकी गाढ़ी कमाई के पैसे थे। खून-पसीने की कमाई के पैसे थे। पेट काट-काट कर जमा किए पैसे थे। उसने भी बहुत हाथ-पांव मारे। फोन से, ईमेल से, पुलिस कंप्लेंट से, पर न तो उसका कुछ होना था और न ही कुछ हुआ।

उसे विलायतीराम पांडेय की बातें याद आने लगीं। वह रामखेलावन को समझाते हुए कहते थे कि ऑनलाइन फ्रॉडियों से बच कर रहा करो। आजकल फोन कॉल, मैसेजिंग, ईमेल, एप्स, सोशल मीडिया, फर्जी साइट्स फिशिंग करने वालों के, साइबर फ्रॉडियों के सबसे बड़े हथियार बन चुके हैं। और आज वह भी इसका शिकार हो गया था। बेशक उसने स्वयं खरीदारी न की थी, पर चूना तो उसी का लगा था। इसी कारण से आज उसकी रातें करवटें बदलते बीत रही थी।

ऐसा भी नहीं कि फुलमतिया ने पहली बार ऑनलाइन खरीदारी की थी। पहले भी वह अक्सर खरीदारी करती रही थी। और लॉकडाउन में तो ऑनलाइन खरीदारी ही एकमात्र विकल्प था। सरकार ने भी तो डिजिटल इंडिया का नारा बुलंद किया है और कैशलेस खरीदारी को बढ़ावा दिया है।

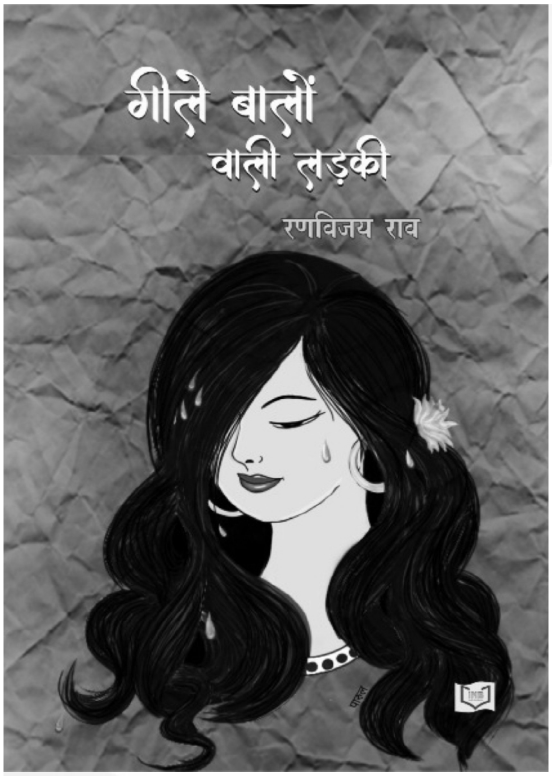

तो बेचारा रामखेलावन सरकार के खिलाफ जाकर 'कैश ऑन डिलीवरी' अथवा नकदी खरीदारी पर जोर देकर सरकार के खिलाफ क्यों जाता। वह भी पक्का देशभक्त जो ठहरा।

पूरी रात जैसे जागते बीती उसकी। दिमाग में कई बातें आतीं और चली जातीं। उसे ध्यान आया कि फुलमतिया तो आग लगाने में एक्सपर्ट है। आग लगा कर चुप हो जाती है और बुझाना पड़ता है बेचारे रामखेलावन को। एक बार ऐसे ही उसने पड़ोसन से किसी बात पर झगड़ा कर लिया। आव देखा न ताव उसका पूरा परिवार राशन पानी लेकर रामखेलावन पर चढ़ बैठा। जैसे भारत-पाकिस्तान सीमा तनातनी होती है, ठीक वैसे ही। दोनों तरफ से बातों की हवाई फायरिंग होती रही। फुलमतिया हल्के से सरक ली और घर में घुस गई। बड़ी मुश्किल से दहकती आग पर काबू पाया उसने।

सब्जीवाला आता उसी से झगड़ पड़ती। धोबी कपड़े दे जाता, उससे भी झगड़ पड़ती। कामवाली बाई से भी झगड़ती रहती। न जाने कितनी कामवालियों ने कुछ दिन काम कर छोड़ दिया था। झगड़ा टाले नहीं टलता था। बड़ी मुश्किल से स्थिति को संभालता था बेचारा रामखेलावन।

पहले भी जब ऑनलाइन खरीददारी करती थी फुलमतिया। पर सामान जैसा चाहे जैसा भी, उसे लौटा, या न लौटाए, रामखेलावन कुछ बोलता नहीं था। वह खुश थी। बाजार उसके बेडरूम में जो आ गया था। बस रामखेलावन को ऑफिस में बैठे-बैठे यही चिंता सताती रहती थी कि पता नहीं आज उसने क्या बुक कर डाला होगा। ऐसे ही एक बार फुलमतिया ने उसके लिए ऑनलाइन "टी शर्ट" बुक कर दिया। साइज नहीं आ रहा था ठीक से, उसका प्रिंट भी पसंद नहीं आ रहा था उसे, फिर भी पहनने की जिद कर डाली फुलमतिया ने।

इतनी महंगी खरीददारी की थी और वह भी प्यार से तो पहनना ही था। वैसे 'ऑफ द रिकॉर्ड' कह रहा हूं कि पत्नियां अपने पति के लिए प्यार से ही खरीददारी करती हैं। अब बेशक पूरा मोहल्ला हंसता रहे, पर पहनना तो था ही।

ऑनलाइन शॉपिंग से रामखेलावन भी बड़ी राहत की सांस ले रहा था। पहले उसे फुलमतिया के साथ जो गधे बने दुकान-दर-दुकान भटकना पड़ता था, उससे छुटकारा मिल गया था। ढेर सारे बैग पीठ पर लादे चलता था रामखेलावन फुलमतिया के शॉपिंग के शौक पूरा करने के चक्कर में। अब तो भी मोलभाव की खीच-खीच नहीं। किसी जिन्न या परी की तरह एक उंगली हिलाई और मनचाहा सामान घर पर आ गया। फुलमतिया को तो लगता है जैसे ऑनलाइन मतलब फ्री। ऐसे लुभावने ऑफर और स्कीम लाते हैं कि इंसान बेचारा लालच में फंस ही जाता है। और तो और होम डिलीवरी भी मुफ्त। यही शौक उल्टा पड़ जाता है। जैसा कि फुलमतिया के साथ इस बार हुआ था।

इस ऑनलाइन प्रोडियो के फेर में फंसे रामखेलावन को कोई काट सूझ नहीं रहा था। और यही सोचते-सोचते बाहर का अंधेरा तो छंटने लगा था, पर उसके मन में जो अंधियारा छाया हुआ था वह सूरज निकलने के साथ और भी गहराता जा रहा था।

रामखेलावन का अगला पूरा हफ्ता करीब इसी तरह गुजर गया। दफ्तर में जाए तो वहां काम करने में मन न लगे और घर में आए तो जैसे घर काटने को दौड़े। फुलमतिया के साथ-साथ बच्चों की भी उदासी उससे देखी नहीं जा रही थी।

इधर फुलमतिया भी बुझी-बुझी सी रहने लगी। उसे अपने किए पर पछतावा हो रहा था। "आ बैल मुझे मार" वाली कहावत चरितार्थ हो रही थी। अति उत्साह में जबरदस्ती आफत मोल ले लिया था। उसने अब घर के खर्चे में कटौती करनी शुरू कर दी। दाल बनाए तो सब्जी नहीं, सब्जी बनाए तो दाल नहीं। दूध भी पहले से कम लेना शुरू कर दिया। पहनना-ओढ़ना तो दूर, वह नून तेल में भी कटौती करने लगी।

जैसे आइटम सॉन्ग के बगैर अब दर्शकों को फिल्में देखने में मजा नहीं आता, उसी तरह से जब तक सब्जी-भाजी में तेल-मसाले का जोरदार तड़का न लगे, तब तक स्वाद कहां आता है भला। बच्चों को भी खाने में स्वाद नहीं आ रहा था। पर अपने मम्मी-पापा के बुझे-बुझे चेहरे देखकर कुछ बोल नहीं पाते थे बेचारे।

यह सब रामखेलावन से देखा नहीं जा रहा था। "अपनी करनी पार उतरनी" वाली बात है। अब उसे ही कुछ उपाय करना था, ताकि घर में मातमपूर्सी जैसा जो माहौल बना हुआ था पिछले कई दिनों से, उससे निजात मिले और सब कुछ पूर्व स्थिति में आ जाए।

उसे एक उपाय सूझी। उसने, एफडी तुड़वाने का निश्चय किया। और वह फुलमतिया को यह बताएगा कि फ्रॉडिया पुलिस की पकड़ में आ गया और उसने सारे पैसे अकाउंट में ट्रांसफर कर दिए। योजनानुसार उसने ऐसा ही किया। अगले दिन दफ्तर से शाम में घर लौटते वक्त मिठाई का डब्बा लेते आया।

"किस खुशी में"

जब ऐसा पूछा फुलमतिया ने तब उसने मुस्कुराते हुए कहा, "चिंता मत करो फूलो। मैंने गरीबी में आटा गीला नहीं किया है। पहले मुंह मीठा करो। फिर बताता हूँ।"

रामखेलावन ने सारी बात बताई की फ्रॉडिया पुलिस की पकड़ में आ गया और उसने मेरे खाते में पैसे ट्रांसफर कर दिए। उसने बताया कि दफ्तर में आज सारा दिन इसी काम में लगा रहा। बच्चे भी तब तक आ चुके थे। सबने मिठाई खाई और खुश हुए कि अब दिन बहुरेंगे।

फुलमतिया ने चेहरे पर प्रसन्नता और गंभीरता मिश्रित प्रतिक्रिया देते हुए कहा, "यह मेरे लिए बहुत बड़ी सीख है। अब जो भी ऑनलाइन खरीददारी करूंगी, बहुत ही सोच-समझकर करूंगी। तुम सबसे राय लेकर करूंगी।" उसने सोच लिया था कि अब वह 'काठ का उल्लू' नही बनेगी।

इंडिया नेटबुक्स द्वारा प्रकाशित

प्रकाशित कृतियाँ

उफ़ भईया जी की चोट

हरीश नवल

वह गर्मियों की एक उमस भरी सुबह थी, दिनेश भाई का फोन आया, उनकी आवाज़ सुनकर ऐसा लगा मानो सारी उमस उदासी में बदल कर उनकी वाणी में स्थित हो गई हो। लगभग रोते से स्वर में शब्द फूटे थे, ''अशोक जी एक बुरी खबर है। भईया जी सिविल अस्पताल में हैं, उनके पैर में गहरी चोट आई है, वी.आई.पी. रूम नं. 1 में दाखिल हैं। जब समय मिले देखने आ जाना मैं वहीं सेवा में हूँ।''

मुझमें चिंता की एक लहर दौड़ने लगी, मुझे लगा कि अभी एक़दम भईया जी को देखने चला जाऊँ, मुझे मालूम था कि वी.आई.पी. के लिए कोई नियम नहीं होता, जब चाहे रोगी को देखने जाया जा सकता है।

पत्नी नाश्ता बना रही थी और मैं अस्पताल जाने को तैयार होने लगा। पत्नी ने पूछा ''कहाँ जा रहे हो, नाश्ता करके जाना।'' मैंने बताया ''भईया जी को भीषण चोट आई है मैं उन्हें देखने जा रहा हूँ लौट कर नाश्ता कर लूँगा।''

पत्नी के चेहरे पर घबराहट खेलने लगी, वे बोली, ''अरे जल्दी जाओ पास ही तो है। मैं भी तुम्हारे आने पर ही नाश्ता करूँगी।''

भईया जी एक राजनैतिक दल की हाईकमान के सदस्य हैं और उनकी तूती बोलती है क्योंकि आजकल उनके दल की सरकार है। भईया जी ने मुझे एक जोनल कमेटी का सदस्य बनाया था जिसके कारण मेरी आय के साधन बढ़ गये थे। मेरे जैसे उनके मातहत सैंकड़ों थे और उनसे भी अधिक संख्या में उम्मीदवारी में लगे हुए थे।

सिविल अस्पताल मेरे घर से केवल चार किलोमीटर है जिसे मैंने अपनी मोटर बाईक पर दस मिनट में कवर कर लिया। बाईक को पार्किंग में लगाकर मैं अस्पताल के भीतर लिफ्ट तक जाने के लिए क़दम बढ़ाने लगा। लिफ्ट और मेरे बीच दो सिक्यूरिटी गार्ड थे जिन्होंने मुझे रोक लिया। मैंने बताया कि मैं वी.आई.पी. में जा रहा हूँ भईया जी को देखने एक गार्ड ने नरम पड़ते हुए कहा ''जी नमस्ते जनाब आप जा सकते है लकिन पहले भईया जी के आदमी से पूछ लें। उसने मेरे कुछ कहने से पहले ही इंटरकाम घुमा दिया उधर से दिनेश जी की ही आवाज़ आई मुझसे बात हुई और उनके हरी झंडी देने से मैं सम्मानपूर्वक चौथी मंज़िल में स्थित वी. आई. पी. कक्ष एक तक पहुँचा दिया गया।

कमरे के बाहर तीस-चालीस लोग रुआंसे खड़े थे। मैं भीड़ चीर कर दरवाज़े तक पहुँच गया जहाँ दिनेश जी हाथ में रजिस्टर थामे हुए थे। उनके संकेत से मैं भीतर दाखिल हुआ और पाया कि यह कोई कमरा नहीं था बल्कि तीन कमरों का एक स्वीट या कहिए फ्लैट सा ही था। मैं जहाँ दाखिल हुआ था वह एक गैलरी थी जहाँ पंद्रह बीस लोग हाथ में कूपन लिए खड़े या बैठे थे। दिनेश जी मुझे भीतर एक छोटे कक्ष में ले गए जहाँ नाश्ते के पैकिट रखे गये थे। दिनेश जी ने मुझे एक पैकेट दिया और कहा, ''ये ले लो और साथ वाल कमरे में बैठ कर खा लो।'' मैंने कातर स्वर में पूछा, ''भईया जी की तबीयत कैसी है?'' दिनेश जी ने बताया कि ''पहले की अपेक्षा थोड़ा सा फ़र्क है, अभी भीतर उन्हें देखने एक मंत्री जी आए हुए हैं और उनके साथ कुछ विदेशी हैं। उनके जाने पर तुम्हें भीतर भेज दूँगा तुम नाश्ता कर लो मैं चाय भिजवाता हूँ।''

मैं साथ वाले कक्ष में दाखिल हो गया वहाँ एक बहुत बड़ी डाईनिंग टेबल थी और दस बारह व्यक्ति नाश्ता कर रहे थे। मैं भी एक कुर्सी लेकर बैठ गया। डिब्बा खोलने से पहले पत्नी का फोन करके बताया कि वो नाश्ता कर ले मेरा नाश्ता यहीं हैं। पत्नी ने भईया जी का हाल पूछा मैंने बता दिया अभी मैंने उनको देखा नहीं लेकिन बताया गया कि पहले से थोड़ा फ़र्क है।''

डिब्बे में एक सैंडविच, एक समोसा, चटनी की पुड़िया और एक बेसन का लड्डू था। मैंने भैया जी के जल्दी ठीक होने की कामना करते हुए नाश्ता कर लिया और बाहर आकर दिनेश जी को ढूंढने लगा। तभी एक महिला के ज़ोर

ज़ोर से रोने की आवाज़ आई मैं रुदनस्थल तक पहुँच गया और देखा एक लगभग पचास वर्ष की महिला रोते हुए कह रही थी, ''हाय भईया जी जल्दी भगवान तुम्हें तंदरुस्त करे। मेरे तो तुम असली भईया हो, सगों से ज़्यादा हो, हाय तुम्हें क्या हो गया?''

मैं धक सा रह गया, देखा दिनेश जी उस महिला को उसकी पीठ पर अपना हाथ चुभाते हुए सांत्वना दे रहे थे। मैं उनके पास पहुँच गया और पूछा, ''दिनेश जी सब ठीक है ना'' दिनेश जी ने महिला की पीठ से हाथ हटाये बिना कहा, ''ये भईया जी की बहन जैसी है मेरठ से सुबह सुबह टैक्सी लेकर भईया जी को देखने आई हैं। मंत्री जी तो जा चुके लेकिन अभी दो एम. पी. भीतर है। तुम इंतज़ार करो, उनके जाने के बाद ये बहन जी अंदर जाएगी, मैंने इनको संभाला हुआ है बहुत दुखी हैं।''

मैं एक प्याला चाय का और लेकर डाईनिंग रूम में जाकर बैठ गया और उधर दिनेश जी महिला का दुख कम करने में लगे रहे। चाय समाप्त होने पर मैं पुनः बाहर आया और देखा दिनेश जी अभी तक दुख-हरण क्रिया में व्यस्त हैं। मैं उनको डिस्टर्ब नहीं करना चाहता था लेकिन वे खुद ही डिस्टर्ब होकर मेरे पास आ गये और बोले, ''तुमने नम्बर ले लिया?'' मैंने उत्तर दिया ''नहीं, अपने फोन पर कहा मैं आ गया। क्या मुझे भी नम्बर लेना पड़ेगा'', वे बोले, ''हाँ तुम्हें वी. आई. पी. नम्बर देता हूँ और यह कहकर वे थोड़ी देर के लिए लुप्त हुए और एक टोकन दिया जिस पर नम्बर छः अंकित था। मैंने टोकन लेते हुए आचर्य से कहा ''पीतल का इतना सुंदर टोकन इतनी जल्दी अपने बनवा लिए।'' वे मुस्करा कर बोले ''मैं चार साल से भईया जी का जनसंपर्क देखता आ रहा हूँ, कई बार ऐसे मौके आते हैं जिनके लिए नम्बर देना ज़रूरी होता है। तुम बीच-बीच में देखते रहना कि तुम्हारा नम्बर कब आएगा अभी दूसरा चल रहा है।'' मैंने पूछ लिया ''दिनेश जी बाहर जो इतने लोग नम्बर लिए खड़े हैं वो कब भीतर जाएगें। उन्होंने जटिलता भरे स्वर में कहा, ''बाहर जो खड़े हैं वे 'पी' नम्बर वाले हैं जो यहाँ गैलरी में है, उनके पास 'आई पी' नम्बर हैं और तुम्हारे जैसे भईया जी के ख़ास लोगों के लिए 'वी. आई. पी.' नम्बर हैं। इसी नम्बर वाले सबसे पहले भीतर जा रहे हैं, आई पी वाले उनके बाद और फिर सबके बाद 'पी' नम्बर वाले भीतर जाएँगे, चिंता न करो सबके लिए दयाल सेठ ने खाने पीने की बढ़िया व्यवस्था अपनी ओर से की हुई है।

जब तक मेरा नम्बर आता, चार बार पत्नी का यह पूछने के लिए फोन आ चुका था कि मैं लंच तक आ जाऊँगा कि नहीं। चौथे फोन पर मैंने स्थिति को समझते हुए कह दिया कि लंच यहीं अस्पताल में ही करूँगा, चिंता न करें सारी व्यवस्था यहाँ हैं।''

जो लोग भईया जी की खबर लेकर बाहर आ रहे थे, उनके चेहरों पर गहरे विषाद की गहरी रेखाएँ दिख रहीं थीं और जो लोग भीतर जा रहे थे उनके चेहरे पर दुख के साथ-साथ उत्सुकता टपक रही थी। जब भईया जी की बहन जी दिनेश जी के साथ भीतर गईं तो उनके भीाण क्रंदन से सब हिल गए घोर सन्नाटा हो गया। कुछ लोग भईया जी के कमरे की ओर लपके, मुझे भी आशंका ने अपनी भुजाओं ने घेर लिया कि कहीं भईया जी फिर मन में यह बात भी आई कि एक बार वे मुझे देख तो लेते कि मैं भी हाल पूछने आया था।

लपके लोग वापिस आकर बता रहे थे कि अभी डर की कोई बात नहीं है। बहन जी का दिल बहुत कमज़ोर है, इसलिए ज़ोर-ज़ोर से रो रही हैं। यह सुनकर मुझे और बाकी सभी को बड़ी तसल्ली हुई।

चार बजने को हुए, मैं अपने शरीर में पनप रहे आलस्य को भगाने के लिए पुनः चाय लेकर डाइनिंग रूम में चला गया और देखा कि वहाँ चाय के बिना आलस्य भगाने के हेतु आठ-दस लोग फर्श पर सो रहे थे। मैंने पत्नी को फोन करके कहा कि वे भी आराम कर लें, मुझे और देर लग सकती है। मैं भी लेट गया।

डेढ़ घंटे बाद मेरा नम्बर आ गया। मुझे थोड़ा दुख तो था ही, थोड़ा और अधिक मैं अपने मुखमंडल पर लाद कर भईया जी के कमरे में प्रवेश कर गया। देखा कि भईया जी बेड पर ऐसे ही लेटे हैं जैसे विष्णु जी क्षीरसागर में कमल पर लेटे होते हैं। वहाँ विष्णु जी की सेवा एक लक्ष्मी करती है और यहाँ भईया जी की सेवा में दो लक्ष्मियां जुटी हुईं थीं, एक

सिरहाने और दूसरी पैताने। मैंने अचकचाते हुए भईया जी के चरणों की ओर अपने हाथ बढ़ाने की चेष्टा की ही थी कि पैताने वाली देवी बोल उठी, ''भैया पैर में ज़ख़्म है'' मेरे हाथों ने चरण वंदना की मुद्रा में करबद्ध प्रणाम करने की मुद्रा बनाई और मेरे मुख से फूटा, ''भईया जी सादर प्रणाम, अब कैसा हाल है, डॉ. क्या कह रहे हैं। हम सबको बहुत चिंता है।''

भईया जी ने मेरा प्रणाम कबूल करते हुए अपना दाहिना हाथ जो सिरहाने वाली के हाथ में था, उठाकर आशीर्वाद दिया और उनकी ओर से सिरहाने वाली बोली, ''ईश्वर का बहुत-बहुत धन्यवाद कि यह बाल-बाल बच गए, एक हफ्ता अभी और यहाँ रहना होगा।''

मैंने अपनी वास्तविक और लादे हुए दुख को भईया की ओर फेंकते हुए हाथ जोड़कर कहा ''आप जल्दी स्वस्थ हों, मैं भगवान से आपके लिए सुबह से निरंतर प्रार्थना कर रहा हूँ। जान सकता हूँ चोट कहाँ लगी हैं आपको?'' शायद यह प्रश्न उपयुक्त नहीं था। भईया जी बोले ''पैर में लगी है। तुम्हें अभी मेनका जी ने बताया तो है।'' हठात् मेरे मुख से निकला। ''क्या देख सकता हूँ चोट कितनी गहरी है।'' भईया जी के चेहरे पर ऐसा भाव आया जैसे कोई बहुत कड़वी वस्तु खा ली हो उन्होंने मेनका जी से कहा ज़रा पैर से चादर हटा दीजिए।''

हतप्रभ सी पार्यताने वालाी मेनका ने पूछा, ''कौन से पैर से?''

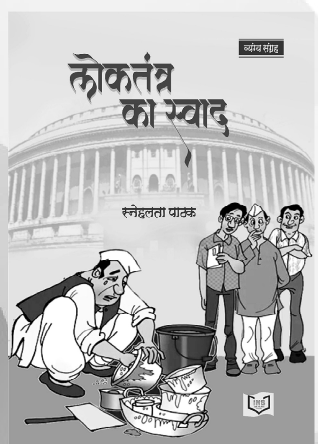

इंडिया नेटबुक्स द्वारा
व्यंग्य की नई पुस्तकें

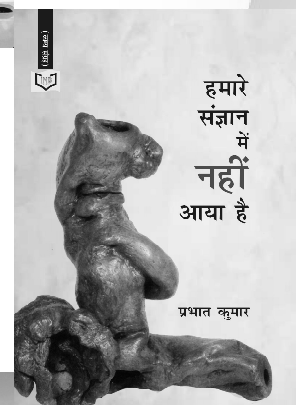

पेशाब की गंध के कारण एवं निवारण

डॉ. एस.एस.मुदगल

1. खाना : कॉफी पीने, या मछली, प्याज, या लहसुन और शतावरी असपरेगस, खाने से हो सकता है। हानिरहित गंध एसिड के टूटने के कारण होती है। जीन प्रभावित करते हैं कि क्या इन सल्फर उत्पादों की गंध सकते हैं। इसके बाद भी पेशाब में तेज गंध आ सकती है।

2. निर्जलीकरण डी हाईडेरशन : तरल पदार्थ पेशाब को पतला करने में मदद करते हैं। मूत्र में हमेशा अमोनिया अपशिष्ट होता है, यदि निर्जलित हैं तो गंध अधिक तेज होती है। इसका मतलब यह नहीं है कि व्यक्ति अस्वस्थ हैं। लेकिन तरल पदार्थों की कमी से आपको गुर्दे की पथरी और मूत्र पथ के संक्रमण होने की संभावना बढ़ जाती है। इसलिए जरूरी है कि प्यास लगने पर पानी पिएं। फल और सब्जियां भी आपको हाइड्रेट करने में मदद कर सकती हैं।

3. मूत्र मार्ग में संक्रमण : यूटीआई होने पर बहुत बार बाथरूम जाना पड़ सकता है। बैक्टीरिया मूत्र में बदबू पैदा कर सकते हैं। पेशाब करने में दर्द, जलन या बुखार हो तो इलाज हेतु डॉक्टर से संपर्क करें।

4. पथरी : पथरी मूत्र प्रवाह को रोक या धीमा कर सकती हैं, जिससे नमक और अमोनिया का निर्माण हो सकता है। वे संक्रमण की अधिक संभावना भी बना सकते हैं। कुछ स्टोन सिस्टीन से बने होते हैं, एक पदार्थ जिसमें सल्फर होता है। यदि मूत्र में सिस्टीन है, तो यह सड़े हुए अंडे की तरह गंध पैदा कर सकता है। इसके लक्षण बुखार पेशाब में खून, या बहुत दर्द हो रहा है, तो पथरी हो सकती है।

5. अनियंत्रित मधुमेह : से पेशाब या सांस से फल की गंध आ सकती है। मीठी गंध कीटोन यूरिया या कीटोन्स के निर्माण से होती है। ये वो रसायन हैं जो शरीर ऊर्जा के लिए ग्लूकोज के बजाय वसा जलाने पर बनता है अगर आपको उल्टी हो, सांस लेने में तकलीफ हो, या कन्फ़्युजन महसूस हो तो तुरंत डॉक्टर को बताएं। आपको डायबिटिक कीटो, सिडोसिस नामक गंभीर स्थिति हो सकती है।

6. मेपल सिरप मूत्र रोग : इस स्थिति के साथ पैदा हुए लोग कुछ अमीनो एसिड को नहीं तोड़ सकते। जब ये अमीनो एसिड बनते हैं, तो उनके पेशाब या ईयरवैक्स से मीठी गंध आने लगती है। यदि बच्चे को यह बीमारी है, तो जन्म के एक या दो दिन बाद इस सिरप की गंध को देख सकते हैं। उन्हें एक विशेष आहार का पालन करने की आवश्यकता होगी।

7. यौन रूप से संक्रामित संक्रमण एस टी आई : कुछ एसटीआई पुरुषों और महिलाओं में बदबूदार स्राव पैदा कर सकते हैं। जैसे ही यह तरल पेशाब के साथ मिश्रित होता है, गंध पैदा कर सकता है या जननांगों में खुजली हो सकती है, पेशाब में जलन हो सकती है।

8. विटामिन का सेवन : पेशाब शरीर से उन पोषक तत्वों से छुटकारा मिल जाता है जिनकी शरीर को आवश्यकता नहीं होती है। अतिरिक्त विटामिन बी 6 (पाइरिडोक्सिन) इसे एक तेज गंध दे सकता है। बहुत अधिक विटामिन बी1 (थियामिन) पेशाब को मछली जैसी गंध पैदा कर सकता है। बी विटामिन भी पेशाब को चमकीले हरे पीले रंग का बना सकते हैं।

9. दवा : सल्फा दवाएं पेशाब को थोड़ी सी बदबू दे सकती हैं। इसमें सल्फोनामाइड एंटीबायोटिक्स शामिल हैं। वे आमतौर पर यूटीआई और अन्य संक्रमणों के इलाज के लिए उपयोग किए जाते हैं। मधुमेह और संधिशोथ के लिए दवाएं भी पेशाब की गंध को प्रभावित कर सकती हैं। अगर बदबूदार गंध परेशान करती है, तो डॉक्टर को इसके बारे में बताएं।

10. गर्भावस्था : मॉर्निंग सिकनेस आपको डिहाइड्रेटेड छोड़ सकती है। और प्रसवपूर्व विटामिन पेशाब की गंध के तरीके को बदल सकते हैं। गर्भावस्था मूत्र पथ के संक्रमण और कीटोनुरिया की संभावना को भी बढ़ा देती है। इसे हाइपरोस्मिया गंध के प्रति संवेदनशीलता, हो सकता है विशेषज्ञों का मानना है कि यह हार्मोन गंध के प्रति धारणा को बदल सकते हैं। और इसका मतलब है कि भले ही पेशाब सामान्य फिर भी ऐसा लग सकता है कि गंध अजीब या अधिक तीव्र है।

11. अंग विफलता : जिगर की बीमारी पेशाब और सांसों से बदबूदार बना सकती है। गंध मूत्र में विषाक्त पदार्थों के निर्माण और रिलीज के कारण होता है। यदि आपकी किडनी खराब है, तो बाथरूम जाने पर आपको अमोनिया की बहुत अधिक गंध आ सकती है।

12. डाउचिंग : योनि को अपने आप साफ होने दें। इसके अंदर धोने से अच्छे और बुरे बैक्टीरिया का संतुलन बिगड़ सकता है। इससे संक्रमण और डिस्चार्ज हो सकता है, जिससे पेशाब करने पर दुर्गंध आ सकती है। डाउचिंग से जुड़ी स्वास्थ्य समस्याओं में खमीर संक्रमण, बैक्टीरियल वेजिनोसिस और श्रोणि सूजन की बीमारी शामिल हैं। योनि की प्राकृतिक गंध को मिटाने की कोई आवश्यकता नहीं है। यदि आप को एक नई या अजीब गंध महसूस होती हैं, तो डॉक्टर से बात करें। वे।

13. पूप योर ब्लैडर में हो जाता है : यदि मूत्राशय और आंतों के बीच फिस्टुला हैं, तो पेशाब करते समय मल या गैस निकल सकती है। यदि कैंसर या सूजन की स्थिति है, जैसे क्रोहन रोग या डायवटीकुलिटिसए तो आपको इस तरह का फिस्टुला हो सकता है। महिलाओं को यह बच्चे को जन्म देने या किसी विशेष प्रकार के ऑपरेशन के बाद हो सकती है। सर्जरी फिस्टुला को ठीक कर सकती है।

14. टायरोसिनेमिया : कुछ बच्चे टायरोसिनेमिया टाइप 1 नामक स्थिति के साथ पैदा होते हैं। इसका मतलब है कि उनके पास अमीनो एसिड टायरोसिन को तोड़ने के लिए सही एंजाइम नहीं बंता। इस यौगिक की बहुत अधिक मात्रा शरीर के तरल पदार्थए जैसे मूत्र, एक सड़ा हुआ गंध दे सकती है। इसमें गोभी जैसी गंध आ सकती है। टायरोसिनेमिया का इलाज दवा और कम टायरोसिन आहार से किया जाता है।

15. मछली गंध सिंड्रोम : इसे ट्राइमेथिलैमिनुरिया भी कहा जाता है, यह अनुवांशिक स्थिति पेशाब को एक बदबूदार गंध दे सकती है। यह तब होता है जब शरीर ट्राइमेथिलैमाइन को तोड़ नहीं पाता है। यह पेशाब, पसीने, सांस और अन्य तरल पदार्थों के माध्यम से यौगिक से छुटकारा पा लेते हैं। इसका मतलब यह नहीं है कि आप अस्वस्थ हैं। लेकिन डॉक्टर गंध को प्रबंधित करने में आपकी मदद कर सकता है डॉ. इलाज हेतु एंटीबायोटिक्स, विशेष साबुन से या कुछ खाद्य पदार्थ खाने का सुझाव दे सकते हैं।

16. बहुत देर रोकना : यदि पेशाब मूत्राशय में अधिक देर से रुका हुआ है तो मूत्र से अजीब गंध आ सकती है। इससे आपको यूटीआई होने की संभावना भी बढ़ सकती है। यह उन बच्चों में अधिक होता है जो स्कूल में बाथरूम जाने से कतराते हैं इसलिए बच्चों को बाथरूम ब्रेक लेने के लिए याद दिलाना एक अच्छा विचार है।

निवारण (cause) का इलाज है

1. यथा निर्जलीकरण से उत्पन्न स्थिति में अधिक पानी पिए।
2. संक्रमण की स्थिति में संक्रमण का उपचार
3. कुछ स्थितियों में यथा विटामिन लेने से हो जाए तो नॉर्मल है डोज कम की जा सकती है या खाद्य पदार्थों से होने वाली गंध ने उन खाद्य पदार्थों का परहेज करें या मात्रा कम करे।
4. मेपल सिरीप स्थिति आनुवंशिक है उसका कोई इलाज नहीं होता अधिक पानी या द्रव्य सेवन कुछ राहत दे सकता है।

भारत के संविधान निर्माण में डॉ. अंबेडकर का योगदान

डॉ. सन्तोष खन्ना

डॉ. अंबेडकर को भारत के संविधान निर्माता के रुप में माना जाता है। उन्हें भारत के संविधान का जनक भी कहा जाता है। अंबेडकर जी को बाबासाहेब के नाम से जाना जाता है। यद्यपि वह महार के अछूत जाति परिवार में पैदा हुए लेकिन वह अपने परिश्रम के बल पर शिक्षा के क्षेत्र में बुलंदियों पर पहुंचे जिसके लिए उन्होंने अथक संघर्ष किया। उनके ज़माने में इस चरम पर पहुँचना कोई आसान बात नहीं थी क्योंकि अछूतों को शिक्षा पाने की अनुमति नहीं थी, उन्हें मंदिरों में पूजा करने की अनुमति नहीं थी, उन्हें ऊंची जाति के लोगों द्वारा इस्तेमाल किए जाने वाले स्रोत से पानी पीने की अनुमति नहीं थी। स्कूल में पढ़ाई करते समय भी उन्होंने इस तरह के सभी भेदभावों का सामना किया था। फिर भी अपनी दृढ़ इच्छाशक्ति के बल पर वह भारत में कॉलेज शिक्षा प्राप्त करने वाले अपनी जाति में पहले व्यक्ति बन गये।

संघर्ष की सच्ची भावना के साथ वह आगे के अध्ययन के लिए लंदन चले गये, जहां उन्होंने कानून की पढ़ाई के लिए दाखिला लिया और एक महान वकील बने। उन्होंने लंदन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स से अर्थशास्त्र में पी.एचण्डी की और अमेरिका के कोलंबिया विश्वविद्यालय से भी पढ़ाई की। इस तरह देखा जा सकता है कि वह एक स्वनिर्मित व्यक्ति का सच्चा उदाहरण थे जो अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए सभी बाधाओं के खिलाफ इतनी मेहनत कर रहे थे।

डॉ. अंबेडकर अर्थशास्त्री, न्यायविद, विधिवेत्ता, राजनीतिज्ञ के साथ साथ एक समाज सुधारक भी थे। वह समाज में पसरी छूआछूत को गुलामी से भी बदतर मानते थे। अतः उन्होंने समाज में अछूतों के साथ हो रहे भेदभाव के विरुद्ध अभियान चलाया और संविधान में उनके उद्धार के लिए समुचित प्रावधान करवाये।

वह स्वतंत्र भारत के प्रथम कानून और न्याय मंत्री बनाये गये। बाद में उन्होंने उस पद से त्यागपत्र दे दिया था।

‘डॉ. बी आर अंबेडकर संविधान के निर्माता है’ यह वाक्य इन 75 वर्षों में इतनी बार दोहराया जा चुका है कि भारत जनमानस में यह बात इतनी पैठ चुकी है कि अगर अब यह कहा जाए कि भारत में संसदीय शासन लोकतंत्र अपनाने के पीछे डॉक्टर बी आर अंबेडकर की मनीषा नहीं बल्कि नेहरू की तानाशाही थी तो इस बात परघ् कोई विश्वास नहीं करेगा। डॉक्टर बी आर अंबेडकर को संविधान प्रारूप समिति का अध्यक्ष बनाया गया था और उनकी अध्यक्षता में संविधान का प्रारूप तैयार किया गया और उसी प्रारुप को संविधान सभा ने पारित कर दिया था। अतः इसी आधार पर कहा जाता है कि डॉक्टर अंबेडकर ने हमें संविधान दिया। परंतु इस प्रारूप में संविधान को क्या रूप दिया जाना है इसका फैसला तो कांग्रेस ने ही किया था। कांग्रेस ने क्या बल्कि इसका फैसला पंडित नेहरू ने ही किया था और उन्होंने ही अपनी इच्छा को समूची कांग्रेस पर थोप दिया था। यह सब कैसे हुआ, यह जानने के लिए इतिहास के कुछ पन्नों को खंगालना पड़ेगा।

इतिहास गवाह है कि कांग्रेस के पटेल और अन्य कई कद्दावर नेता ब्रिटेन की संसदीय शासन प्रणाली अपनाएं जाने के विरुद्ध थे। महात्मा गांधी तक इसके समर्थन में नहीं थे। महात्मा गांधी ने कहा था कि ‘यदि भारत इंग्लैंड की संसदीय शासन प्रणाली की नकल करेगा तो मेरा यह पक्का विश्वास है वह तबाह हो जाएगा।’ यद्यपि जिन्ना भारत के संविधान के निर्माण में सम्मिलित नहीं थे, उन्होंने वर्ष 1939 में ही कह दिया था कि वह संसदीय शासन प्रणाली के बिल्कुल पक्ष में नहीं हैं। बाद मैं पाकिस्तान ने इसे नहीं अपनाया।

भारत की संविधान सभा में जब संविधान बनाया जा

रहा था तब पटेल और अंबेडकर संसदीय शासन प्रणाली के संबंध में अपने अपने विचार प्रस्तुत करते रहते थे किंतु उन प्रस्तावों पर या तो ध्यान ही नहीं दिया जाता था या उन्हें उन्हें अस्वीकार कर दिया जाता था।

भारतीय प्रायः यही विश्वास करते हैं कि संविधान सभा में संसदीय शासन प्रणाली अपनाएं जाने पर सभी एकमत थे। किंतु इतिहास गवाह है कि न केवल पटेल और अंबेडकर के इस संबंध में अलग ही विचार थे बल्कि कई अन्य कांग्रेसियों के इस बारे में भिन्न भिन्न विचार थे।

संसदीय शासन प्रणाली अपनाने का फैसला केवल कांग्रेस पार्टी की समितियों में किया गया था और उसे संविधान सभा ने पारित किया था। कांग्रेस पार्टी ने नेहरू की अध्यक्षता में एक विशेषज्ञ समिति का गठन किया था जिसे संविधान सभा के लिए संविधान बनाना था और 15 सदस्यों के इस छोटे से पैनल ने फैसला किया कि स्वतंत्र भारत में ब्रिटिश संसदीय शासन प्रणाली अपनाई जाएगी।

वर्ष 1946 में संविधान सभा बनाई गई थी। उसमें कांग्रेस संविधान विशेषज्ञ समिति के फैसलों को संघ संविधान समिति की ओर से मानते हुए उसी आधार पर संविधान बनाने का फैसला किया गया। यद्यपि पटेल की अध्यक्षता में बनी प्रांतीय संविधान समिति की सिफारिशें अलग प्रकार की थी। पटेल की अध्यक्षता में बनी प्रांतीय संविधान समिति की सिफारिशों में कहा गया था कि भारत को एकात्मक अथवा संघीय शासन प्रणाली अपनानी चाहिए और सरकार के प्रमुख को लोगों द्वारा प्रत्यक्ष मतदान प्रणाली से चुना जाना चाहिए। चूंकि नेहरू ब्रिटिश संसदीय शासन प्रणाली अपनाई जाने के पक्ष में थे जिसमें सरकार के प्रमुख को अप्रत्यक्ष रूप से चुने जाने की व्यवस्था थी इन मतभेदों पर विचार करने के लिए 7 जून, 1947 को दोनों समितियों की एक संयुक्त बैठक की गई और उसमें यह फैसला किया गया कि प्रांतीय गवर्नर को केंद्र द्वारा नियुक्त नहीं किया जाएगा बल्कि वह वहां की जनता द्वारा चुने जाएंगे और कार्यपालिका के बारे में संयुक्त समिति ने फैसला किया वह संसदीय शासन प्रणाली के अनुरूप निर्धारित होगी। इस संयुक्त बैठक में एकमत नहीं बन पाया क्योंकि नेहरू ब्रिटिश संसदीय शासन प्रणाली अपनाने पर जोर दे रहे थे जबकि पटेल प्रांतीय गवर्नर का प्रत्यक्ष निर्वाचन चाहते थे। जब 1946 में संविधान सभा का गठन किया गया और उसमें नेहरू की अध्यक्षता वाली संघ संविधान समिति की सिफारिशों के आधार पर ब्रिटिश शासन प्रणाली को पारित किया गया उस संयुक्त बैठक में इस बारे में सहमति नहीं बन पाई थी। चूंकि नेहरू ब्रिटिश शासन प्रणाली के पक्ष में थे इसलिए 10-11 जून, 1947 को एक और संयुक्त बैठक की गई। इस संयुक्त बैठक की अध्यक्षता डॉ राजेंद्र प्रसाद कर रहे थे और इसमें नेहरू, पटेल, अंबेडकर, के एम मुंशी, श्यामा प्रसाद मुखर्जी, गोविंद बल्लभ पंत, जगजीवन राम, के.एंटनी. के.एम. पनीकर और जेबी.पलानी जैसे 36 प्रतिष्ठित नेताओं ने भाग लिया था। दो दिन की गरमागरम बहस के बाद इस संयुक्त बैठक में प्रस्ताव पारित किया गया कि राष्ट्रपति और गवर्नरों का प्रत्यक्ष निर्वाचन कराया जाएगा। इसमें नेहरू से कहा गया कि वह राष्ट्रपति के अप्रत्यक्ष निर्वाचन के अपने फैसले पर पुनर्विचार करें, परंतु उन्होंने कभी उस पर पुनर्विचार नहीं किया। फिर भी पटेल ने अपने प्रांतीय संविधान को सीधे संविधान सभा में रखा जिसमें कहा गया था कि गवर्नरों का प्रत्यक्ष निर्वाचन होगा। इसके बारे में सदस्यों को इस मतभेद के बारे में सूचना ही नहीं दी गई। उन्होंने पटेल की सिफारिशों को स्वीकार कर लिया किंतु 31 मई, 1949 को संविधान सभा ने अपने इस फैसले को बदल दिया। संविधान के प्रारूप में संशोधन कर गवर्नर की प्रत्यक्ष नियुक्ति का प्रावधान रखा गया। किंतु संविधान सभा ने इस फैसले को उलट दिया। संविधान सभा के पूरे इतिहास में केवल इसी फैसले को बदला गया था।

जहां तक डॉक्टर अंबेडकर का संबंध है, वह ब्रिटिश संसदीय शासन प्रणाली के पक्ष में ही नहीं थे। उन्होंने 6 मई, 1945 में अखिल भारतीय अनुसूचित जाति संघ के अध्यक्ष पद से अपने संबोधन में कहा था कि संसदीय शासन प्रणाली का 'बहुमत का शासन' जैसे आधारभूत प्रावधान ना तो सिद्धांतः न ही व्यवहार में समर्थनीय (अनटेनेबल) हैं।

प्रारूप समिति के अध्यक्ष बनने से केवल 7 महीने पहले संविधान सभा में उन्होंने मौलिक अधिकार समिति

को जो अपना प्रारुप प्रस्तुत किया था उसमें 'यूनाइटेड स्टेट्स ऑफ इंडिया' के मौलिक अधिकार कहा गया था अर्थात् वह अमेरिका की राष्ट्रपति प्रणाली के पक्ष में खड़े दिखाई देते हैं। जब यह प्रस्ताव चर्चा के लिए प्रस्तुत किया गया तो उन्होंने उस सत्र में उपस्थित ना रहने का फैसला किया। ऐसा प्रतीत होता है तब तक वह भी कांग्रेस के फैसले के पक्षधर बन गए थे। जब नेहरू जुलाई, 1947 में संघ संविधान समिति की सिफारिश संविधान सभा में लेकर आए तो उन्होंने सभी सदस्यों को इसका समर्थन करने के लिए कह दिया था। सदस्यों ने अपने दल के कहे अनुसार उस प्रस्ताव का समर्थन किया। इस स्थिति पर बाबा साहब अंबेडकर ने कहा था चूंकि कांग्रेस के पास 70 प्रतिशत सीटें हैं अतः सभा तो कांग्रेस की जेब में ही है। कहने का अभिप्राय यह है कि कांग्रेस के सदस्यों को स्वतंत्र रूप से मतदान करने का अधिकार नहीं था।

जब नेहरू की संघ संविधान समिति की रिपोर्ट मतदान के लिए संविधान सभा में रखी गई उसे सहज ही समर्थन प्राप्त हो गया। इसमें राष्ट्रपति के अप्रत्यक्ष निर्वाचन का प्रावधान था यहां तक के राष्ट्रपति के प्रत्यक्ष निर्वाचन संबंधी सभी प्रस्ताव वापस ले लिए गए थे। बड़े आश्चर्य की बात यह है कि संविधान सभा में कभी इस पर मतदान नहीं हुआ कि क्या भारत को संसदीय शासन प्रणाली अपनानी चाहिए बाबासाहेब अंबेडकर उसी प्रकार के संविधान का प्रारूप बना रहे थे जिसमें ब्रिटिश शासन प्रणाली को भारत के लिए अपनाया जा रहा था क्योंकि वह जानते थे कांग्रेस पार्टी, नेहरू ऐसा ही चाहते थे।

कांग्रेस के एकमात्र सदस्य जिनका नाम राम नारायण सिंह था, ने केवल इसका विरोध किया था। जब संसदीय शासन प्रणाली अपनाने के प्रारूप को अपनाया जा रहा था तो वह यह कहने से अपने को रोक नहीं पाए कि संसदीय शासन प्रणाली हमें नहीं अपनानी चाहिए। यहां के लोग इसके पक्ष में नहीं हैं क्योंकि यह पद्धति पश्चिम में भी असफल सिद्ध हो चुकी है और यह इस देश में भी विनाश लाएगी।

इधर कुछ वर्षों में दलित राजनीति में आई जागरूकता और इस संदर्भ में अंबेडकर की लीगेसी घ्को लेकरघ राजनीतिक दलों में बढ़ती परस्पर प्रतिस्पर्धा से डॉ.अम्बेडकर के संविधान में योगदान के संबंध में हो रहे महिमामंडन से कुछ दल विशेष रूप से कांग्रेस पाटी सतर्क घ्हो रही है। कांग्रेस में यह सुगबुगाहट शुरू हो गई है कि कि संविधान निर्माण का सारा श्रेय यदि अंबेडकर को दिया जा रहा है तो नेहरू ने क्या किया था, क्या संविधान निर्माण में उनका कोई योगदान नहीं था जबकि कांग्रेस का मानना है कि संविधान निर्माण घ्मेंं नेहरू के योगदान के सामने कोई नही टिक सकता। सुधींद्र कुलकर्णी के अनुसार कांग्रेस में महात्मा गांधी के बाद सब से बड़ा कद नेहरू का ही था। स्वतंत्रता सेनानियों में वह सब में अग्रणी थे। वह भारत के प्रधानमंत्री तो थे, वह आधुनिक भारत के निर्माता थे और संविधान निर्माण में भी उनके मुकाबले में कोई नहीं है।

संविधान में नेहरू के योगदान पर सुधींद्र कुलकर्णी का एक आलेख पहले कंविट में प्रकाशित हुआ और बाद में 27 नवम्बर 2017 में नेशनल हेराल्ड में प्रकाशित हुआ है जिसमें उन्होंने इस विषय पर विस्तार से प्रकाश डाला है। उन्होंने लिखा है कि इस भ्रम को फैलाया जा रहा है कि डॉ.अंबेडकर ही संविधान का एकमात्र निर्माता था। इस प्रकार डॉ. अंबेडकर की भूमिका को नेहरु के अवदान से बढ़ा चढ़ा कर बताने का प्रयास किया जा रहा है यहां तक कि कांग्रेस के लोग भी इस प्रकार के भ्रम को फैला रहे हैं।

हम मानते हैं कि डॉक्टर अंबेडकर ने संविधान के प्रारूपण में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, इसके लिए यह कहना कि भारत का संविधान भारत को अंबेडकर की देन है, सच से बहुत दूर की बात है। हम मानते हैं वह सामाजिक न्याय के पैरोकार थे और उन्होंने दलित वर्ग के लोगों के अधिकारों के लिए बहुत संघर्ष किया और संविधान में भी उनके लिए प्रावधान करने के लिए प्रयास किए थे किंतु संविधान का प्रारूप तैयार करने के लिए संविधान सभा की संविधान प्रारूपण समिति अथवा उसके अध्यक्ष को अनन्य अधिकार नहीं थे। उन्हें विभिन्न विषयों की समितियों की सिफारिशों के अनुसार प्रारूप तैयार करना होता जिसे बादघ में संविधान सभा ने पारित किया था।। इस प्रक्रिया

में नेहरू ने ही सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। यह स्वाभाविक भी था क्योंकि एक तो कांग्रेस में महात्मा गांधी के बाद उनका ही सबसे बड़ा कद था तथा दूसरा सितंबर, 1946 में गठित अंतरिम सरकार के वे प्रधानमंत्री थे। महात्मा गांधी ने नेहरू को मंत्रीपरिषद में डॉक्टर अंबेडकर को शामिल करने के लिए कहा था और महात्मा गांधी के सुझाव पर और उनके विधि के क्षेत्र में विशेषज्ञता को देखते हुए उन्हें संविधान की प्रारूप समिति का अध्यक्ष बनाया गया था। अतः ऐसी स्थिति में यह सोचना सही नहीं है कि संविधान निर्माण में कांग्रेस की कमतर भूमिका थी। हम जानते हैं कि संविधान का प्रीएम्बल उसकी आत्मा और आधार है और इसका श्रेय श्री नेहरू को दिया जाता है। हम कह सकते हैं कि संविधान के आधारभूत संरचना का श्रेय भी नेहरू को और कांग्रेस को जाता है। वह संविधान की आधारभूत संरचना उसका आधार स्तंभ है इस आधारभूत संरचना को उच्चतम न्यायालय ने भी केशवानंद भारती के मामले में मान्यता दी है। संविधान सभा में नेहरू के भाषणों के अनुशीलन से भी यह स्पष्ट हो जाता है कि संविधान निर्माण में किस की भूमिका अधिक महत्वपूर्ण थी।

स्वतंत्र भारत के प्रथम विधि और न्याय मंत्री डॉ. अंबेडकर को ही बनाया गया किंतु इस पद से उन्होंने वर्ष 1951 में त्याग पत्र दे दिया। उन्होंने त्याग पत्र क्यों, दिया, इसके बारे में हमें यहां उनका लोक सभा में दिए गए उस भाषण के कुछ अंश यहां दे रहें हैं जिसे पढ़ कर पाठकों को उस समय के संसदीय इतिहास का पता चलेगा और उस समय क्या संसदीय प्रणाली को उसकी मूल भावना के अनुसार क्रियान्वित किया जा रहा था।

1. अंबेडकर की जीवनी, अंबेडकर प्रतिष्ठान।
2. गांधी एंड कांस्टीट्यूशन मेकिंग इन इंडिया डी.के.चटर्जी, ऐसोसियेटिड पब्लिशिंग हाउस, 1984
3. इन लॉ फ्रेमिंग आफ इंडयाज़ कांस्टीट्यूशन, भी एस.राव, खंड-5, पृष्ठ-28
4. द फ्रेमिंग आफ द कांस्टीट्यूशन वी.आर. राव. खंड 1, पृष्ठ-331, यूनिवर्सल ला पब्लिशिंग, दिल्ली।
5. संयुक्त बैठक का कार्यवृत, 7 जून, 1947
6. राव, खंड 2, पृष्ठ 84 104
7. संविधान सभा, वाद विवाद, 17 दिसंबर, 1946
8. संविधान सभा वाद-विवाद, 5 जुलाई, 1947
9. संविधान सभा वाद-विवाद, 5 नवंबर, 1948 रवि, खंड 2, पृष्ठ 609
10. सुधींद्र कुलकर्णी का आलेख, 27 नवंबर, 2017
11. लोक सभा वाद-विवाद, 1951

इंडिया नेटबुक्स द्वारा प्रकाशित महत्वपूर्ण कृति

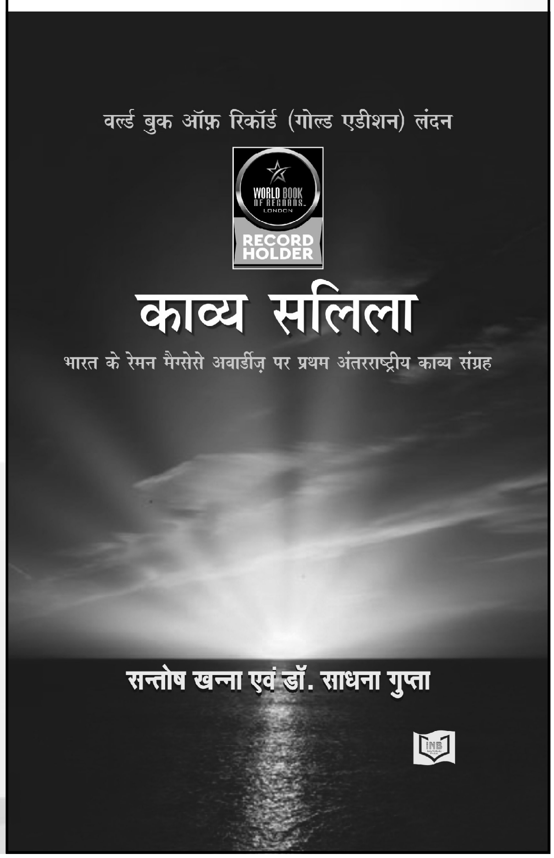

सौम्या दुआ की कविताएँ

इश्क़ अब जुनूं बना पता ना चला,
पाने की जुस्तजू कहां है ख़ता।

रोज़ मरते रहे तेरी चाहत में,
ना दे कसक ना दे सज़ा।
पाने की जुस्तजू...

है तमन्ना विसाल ए यार की,
सब्र टूटे इश्क़ कर दे अता।
पाने की जुस्तजू...

ना रस्मों में ना तुम हमसफ़र,
नियत ए शौक बदले हैं क्या।
पाने की जुस्तजू...

तुम जुदा हो के भी क़रीब हो,
ये इनायते करम क्या है बता।
पाने की जुस्तजू...

गीत

धड़कने दे रहीं हैं सदा,
ना तुम बिन अब गुजारा है।
चलें आओ वापस तुम,
तुम्हें दिल ने पुकारा है।

मुझे वो याद आता है,
संग बीता वो पल पल,
हदें जब पार हो जाये,
तो बहती खारी धारा है।

चलें आओ वापस तुम,
तुम्हें दिल ने पुकारा है।
मुझे हर लम्हा तुम कहते,
चलें जाना तुम रूककर,
बताओ छोड़ना तुमको,
हमें कहां गवारा है।

चलें आओ वापस तुम,
तुम्हें दिल ने पुकारा है।

मराहिल जो राहों में,
आ जाते जो कठिन,
मेरी राहों को हरदम,
तूने ही संवारा है।

चलें आओ वापस तुम,
तुम्हें दिल ने पुकारा है।

धड़कने दे रहीं हैं सदा,
ना तुम बिन अब गुजारा है।

महफूज़ हूं ज़िगर में तेरे यह तो ख़्याल है,
लापता हुए हैं हम यह भी सवाल है।

मैं शख़्स हूं वो जो तन्हाइयों से घिरा हूं,
मेरे दोस्त हजारों हैं यह भी कमाल है।

निसार तुझ पे हैं सारी यह नियामतें,
कुर्बतें होंगी अता यह भी अमाल है।

क़तरा क़तरा मैंने पिया
हर किसी के जाम का,
ढूंढ लाओ अब मुझे जिसको ख़्याल है।

कायनात रंगरेज है तेरे मेरे इश्क़ का,
इक दिन तो आएगा वह शब ए विसाल है।

निर्मला सिंह की कविताएँ

1. संगठित

दुर्गम खड़ी चढ़ाई चढ़ती
उस पथरीली पगडण्डी पर,
मेरे ही, कुछ थके से बोझिल पैरों की
पगध्वनियाँ गूँज रही थीं!
फूंक-फूंक पग धरती, आगे बढ़ती
अपने अंर्तमन से लड़ती,
मैं खुद ही खुद को,
भड़भूंजे सा भूंज रही थी!
कि, सहसा एक छाया सी काया
मुझे झकझोरती सी,
मेरे दायें बायें ओर चलती
मेरे स्व को संचयित कर,
संचालित करने लगी!
दिमाग ने कहा... ये तुम ही हो,
पर दिल नहीं माना!
तब मेरे स्व ने उथल-पुथल कर
अपनी समग्र चेतना को खंगाला!
एड़ी चोटी का जोर लगा
ओनों-कोनों में दूर तलक छिटके
अपनी ही दिनचर्या के क्रियाकलापों को
प्राणायाम बना, जीवन में बसा
मन के पतीले में डाल,
एकाकार कर डाला!

यहाँ-वहाँ नज़र डाली,
ईश का ध्यान कर
कलाई पर बंद घड़ी सी पड़ी,
सुमिरन माला सम्हाली...
किन्तु, चलते ही
रीढ़ की हड्डी का प्रत्येक तंतु,
मुझे असुरक्षा से भयभीत कर गया
पर, धमनियों में दौड़ता रक्त
पुराना न लग... लगा नया!
फिर, स्वयं ही मैंने,
अपने अस्तित्व में
नव सुलगता राग फूंका
धौंकनी से तालमेल कर
उसमें दिल झोंका दिमाग झोंका,
जब मोगरे की ढेरों कलियों से बनी वेणी
हाथों में थामते ही महकी...
एक नयी रागिनी मुदित सी बहकी,
पोर-पोर में समग्रहीत हो
मनचेतना की चिड़िया मोहित हो चहकी!

संग साथ प्रेम विश्वास
नेह आश्रय व अगम्य ऊर्जा
जीवन में बसाए
उसे संगठित ऊर्जित कर
मैं पुनः हुई ...
गयी से नयी...

2. मैं समय हूँ

मैं समय हूँ,
सुन रहा हूँ तुम्हारे आर्तनाद
पर रुक नहीं सकता,
नहीं रुकता!
कृष्ण का सुदर्शन चक्र
मैंने ही बनाया था,
रावण का पुष्पक विमान
नक्षत्रों की आज्ञा से
राम की कुटिया के आगे

मैंने ही उतारा था,
सीता को लक्ष्मण रेखा
मैंने ही पार कराई थी
तुम करो प्रतिवाद
पर मुझे सब है याद!

मैं समय हूँ
रुकता नहीं हूँ
थकता नहीं हूँ!
पंछियों की उड़ान से लटक
अवरोध की तख्तियां झटक,
ट्रैफिक में थमे हुए
एक जगह जमे हुए
गाड़ियों के बलवान
पहियों पर पैर रख
छलांगे लगा,
पतली गली से निकल जाता हूँ!
मैं समय हूँ
स्वतः ही बीत जाता हूँ!

तुमने ही मुझे अच्छा-बुरा कह
कितने उपमान दे दिये,
सोचो ज़रा...

तुम ही मुझे काटते हो
मैं तुम्हें नहीं काटता!
मैं समय हूँ,
एक बार सीख देता हूँ
पलट कर नहीं आता
मैं समय हूँ
मुझे गंवाओ मत
वादों में बसा लो
यादों में सम्हालो,
पन्नों पर उतारो
मेरी गणना कर
मौन मनन कर
सहेजकर, सहलाकर
अपना जीवन संवारो!
मैं समय हूँ!

3. ज़रा ठहरो

ज़रा ठहरो समय,
इन्द्रधनुष ओढ़ लूँ
साथ चलूँगी!

पौधा, जैसे धरती से उगता है
वैसे ही, आज सुबह खूब बड़ा
नारंगी सूर्य नहीं उगा,

नदी का निनाद सुनने में
ज़माना व्यस्त क्या हुआ...
लगा जैसे जलभुन कर
सदी की परंपरा तोड़
सूर्य काला कम्बल ओढ़
कुछ देर को और सो गया!

लोकगीतों सी ये पगडण्डी
जो पाँवों तले बिछी है,
पहले उन तमाम अनाम
सृजनकर्ताओं को नमन कर लूँ,
साथ चलूँगी!

ज़रा थम कर
दिशा का रुख़ मोड़ दूँ
फिर...
साथ चलूँगी!

सूर्यदीप कुशवाहा की कविताएँ

1. जीवन सतरंगी

मैं नहीं कहलाता फकीर
हो गया विचारों का कबीर

गुस्सा किस बात पर जाती,
विसंगतियों के जाल पर आती

मनुष्य छूता जब आकाश
अवरुद्ध इंसानियत का विकास

नहीं सही गलत का आकलन
अच्छाई क्षीण जैसे बर्फ गलन

झूठ बोलने पर ये जीभ कटती
सच वरना कहाँ कभी न मिटती

कहाँ गूढ़ रहस्य छिपा भरपूर
दिन दुनियां से दूर नहीं मजबूर

स्वार्थ के रथ पर सवार सब
हल्का नहीं मेरा यह कथ्य अब

मिथ्या बनकर रह गई दुनिया
जैसे अलग महकती धनिया

जाता भूल तब बाटी चोखा
खाता इंसान जिंदगी में धोखा

यह जीवन मिलती सतरंगी
बन सकता स्वर्ग सी बहुरंगी

2. विचार

मन में गहन विचार
है मानवता लाचार
मन मंदिर आलीशान
हैं पूजन को भगवान
फिर भी दुःखी संसार
क्या जीवन का सार
ऋषियों का किया शोध
अपनी गलतियों का बोध
आई विलासी अभिलाषाएं
जो छाई पाने की आशाएं
चाह पाली इच्छाएं भोगना
वह कहां कभी जोगना
रखता नहीं वह नियंत्रण
मिला दुःख को आमंत्रण

3. सच की कीमत

मन हुआ आहत
अब कैसे राहत

मैं संवेदनशील
जो हूँ गतिशील

मैं हूँ नहीं भद्र
भावना की कद्र

हर जगह अंतर
यह कैसा मंतर

जो नहीं स्थापित
हैं वही विस्थापित

जो सच की कीमत
मिलती कहाँ नेमत

डॉ. संजीव कुमार की कविताएँ

पिता से

तुम सौम्य गगन
तुम सूर्य सहज।
तुम सृष्टिकार
तुम मृदु मलयज॥

तुम सित निशिकर
तुम ध्रुव तारक।
तुम धैर्य प्रवण
तुम सुख कारक॥

तुम जीवन के
आधार स्तंभ।
तुम निर्देशक
तुम शुभारंभ॥

तुम प्रेमार्णव
तुम सुख किलोल।
मेरे अधरों के
प्रथम बोल॥

तुम प्रथमंगुलि
तुम पहला पग।
तुम क्रीड़ाकर
तुम पहला जग॥

तुम प्रथम संग
तुम अंतरंग।
तुम नट तुरंग
तुम राग रंग॥

मेरे सुख हित
तुम त्याग मूर्ति।
तुम अथक कर्म
तुम अमर कीर्ति॥

तुम संचालन
तुम संसाधन।
तुम अजर स्रोत
तुम पारगमन॥

तुम ही अक्षर
तुम वर्ण प्रखर।
तुम शब्द रूप
तुम वाक्य सुघर॥

तुम ही शिक्षा
तुम संस्कार।
तुम ही जीवन
सब विधि, प्रकार॥

तुम शीर्ष पुरुष
तुम निर्विकार।
तुम विश्वरूप
तुम महाकार॥

तुम मधुर गीत
संगीत राग।
तुम सकल तीर्थ
काशी प्रयाग॥

त्वम अभिनंदन
त्वम ह्रत्वंदन
मम नमस्कार
मम आराधन॥

जगदीश डागर की कविताएँ

कलियां नई खिला दें

कलियां नई खिला दें
आओ मिलकर इस भारत को खुशबू से महका दें हम,
आसमां को रंगी कर दें, कलियां नई खिला दें हम॥

हम भारत के लाल हैं, नहीं किसी से डरते हम
अपना सब से भाईचारा, प्यार सभी करते हम।
दुनिया के सरताज हैं, आओ आज बता दे हम
आसमां को रंगी कर दें, कलियां नई खिला दें हम॥

हम अल्लाह की औलादें, बेटे हैं महाकाल के,
सारे मिलकर रहते हैं, ज्यों पंछी एक डाल के।
सारे जग से न्यारा भारत, आओ इसे सजा दे हम,
आसमां को रंगी कर दें, कलियां नई खिला दें हम॥

गंगा जमुना कृष्णा गोदावरी, इस भारत की नदियां हैं,
पल-पल अपने हंस के बीते, मिलके बीते सदिया हैं।
कोई तिरंगे को ललकारे, उसको मार भाग दें हम,
आसमां को रंगी कर दें, कलियां नई खिला दें हम।

एक हार के मोती हैं हम, हिन्दी अपनी भाषा है,
हिन्दू मुस्लिम सिक्ख ईसाई, हर दिल में नई आशा है।
काले गोरे और मजहब के, झगड़े सभी भुला दें हम,
आसमां को रंगी कर दें, कलियां नई खिला दें हम॥

न रही वो जमीं

न रही वो जमीं, न आसमां ज़िन्दगी में
न मिला कोई तुमसा मेहरबां ज़िन्दगी में

चहकता था महकता था कभी बहारों में
उजड़ के रह गया वो गुलिस्ता ज़िन्दगी में

पलकों से चुन-चुनकर बनाया था
बेजार हो चुका वो आशियां ज़िन्दगी में

थे कितना हमरा, कितने हमदम थे
दिखता नहीं अब वो करवां ज़िन्दगी में

अपने अपने हिसाब से हर अपना जुख्म दे गया,
हर जख्म छोड़ गया एक निशां जिन्दगी में

गाता था गुनगुनाता था कभी डागर
बन के रह गया वो बेजुबां ज़िन्दगी में।

राग-विराग का महोत्सव

राग-विराग का महोत्सव
याद ही नहीं रहती
चैत की सप्तमी

याद ही नहीं रहता
महाश्मशान

याद ही नहीं रहतीं
नगरवधुएँ

सवेरे-सवेरे
याद दिलाकर
उदास कर देता है अख़बार
राग-विराग का महोत्सव
जो हो चुका होता है
गंगा की लहरों
और चिताओं की लपटों के बीच।

मुआवज़ा

शकुन्तला नहाने गई थी
जहाँ नदी में
उसकी अँगूठी गिरी
और अँगूठी के बिना
दुष्यंत ने उसे पहचानने से इन्कार कर दिया

वह शकुन्तला दूसरी थी
यह शकुन्तला दूसरी है
यह बहुमंज़िली आग में घिरी
आग में जलकर
काला पड़ गया उसका कंचन बदन
लेकिन वह पहचानी गई
अपनी सगाई की अँगूठी से
और पहचानने वाला
दुष्यंत यह दूसरा है
जिसका चेहरा
आँसुओं से भरा है

इस शकुन्तला के
जीवन का मुआवज़ा क्या हो सकता है
इस दुष्यंत के प्यार का।

पानी का संतुलन

साँस
लेने के लिए
तड़पती मछलियाँ देखीं
देखा उन्हें दम तोड़ते
वह एक लहर थी
जो रेत पर उन्हें उछाल गई

हम भी मछलियाँ हैं
इसलिए हमारे अंदर भी खलबलियाँ हैं
सुनकर कि आ रही है
वैसी ही एक लहर नई

पानी को छोड़ा नहीं जा सकता
लहर को मोड़ा नहीं जा सकता

बड़ी मछलियों ने
छोटी मछलियों को खाया है
लेकिन उससे बड़ा क़हर ढाया है
पानी का संतुलन बिगाड़कर

विज्ञान कविता :

कामधेनु है माँ वसुंधरा

खेतों का उपयोग कृषक गर,
वैज्ञानिकता ओढ़, करेंगे।
वही खेत बहुविध किसान के,
धन, वैभव भंडार भरेंगे॥
औद्यानिक फसलें उगवाकर
उपज वृद्धि भी हो सकती है
नाना फसलें एक साथ उग
सकल आय तक बढ़ सकती है
उसी खेत में नीचे फसलें,
ऊपर फल के पेड़ घने हों
बहु उपयोग, हो एक खेत का
खाके जो गर सही बने हों
इक मौसम में फसल कृषक को,
कई-कई संग मिल सकती हैं
वही आय फिर हर किसान की,
बुरी स्थिति को हर सकती हैं
मेंडों पर पादप, फलवाले
विकसित भले खिले हों
और किन्हीं मेंडों पर दुर्लभ
चारा पेड़ पले हों।
फल ही महज न दें वे चारा
गाढ़ी जब छाँह रचेंगे
उन पर पंचम स्वर में कितने
पंछी, मृदु गान करेंगे
सूखी धरती हरी-भरी हो,
नित मंगल गान करेगी
मातृवत्सला धरा, कृषक की
सच, जयगान करेगी

ऊपरी वृत्त हों, फल के पादप
निचले वृत्त हो घास हरा
बेर, आंवला, चीकू, इमली से
हर खेत सुसज्जित, हो हरा-भरा
कहीं आम, अमरूद, बेल के
पेड़, मेंड़ पर हैं उग सकते
कहीं टीक, सागौन, नीम के
चारा, ईंधन दे सकते।

कहीं चांदनी, गुड़हल, चंपा
पलाश गुलमोहर रंग भरे
शीशम, टीक, साल, टिम्बर, दे
आय, कृषक घर बार भरे

धनिया, मेथी, सौंफ व जीरा
अदरक, अरबी, शाक कई
हल्दी, तुरई, मूंग, राजमा
तिलहनी-फसलें भी कई-कई
चाय, कहवा, रबर, सुपारी
तुलसी, हरड़, लौंग सर्पगंधा
इनकी ही खेती गर कर लें
चले षक का, रफ्तारी धंधा
कामधेनु है माँ वसुंधरा
कोई अगर दुहना जाने।
यही अन्न की अमर खान है,
सामर्थ्य इसकी पहचाने॥

कर्नल प्रवीण त्रिपाठी की कविताएँ

1. भारतीय सैनिक

सीमाओं पर जो सेनानी, कभी नहीं वह थकते हैं।
देश चैन से सोये हर दिन, इसीलिये वह जगते हैं।

गश्त लगाते हर स्थिति में, सदा चौकसी वह बरतें,
हिम, जंगल, रेगिस्तानों में, नहीं कभी पग दुखते हैं।

शत्रु भले कितना बलशाली, हरदम वह खाये मुँह की,
सेनाओं के सम्मुख आकर, कभी नहीं वह टिकते हैं।

भेदी नज़रें खोजें दुश्मन, नाश करें अवसर पाकर,
बलिदानों की नई कहानी, नित्य रक्त से लिखते हैं।

अगणित किस्से बहादुरी के, भारत जिन पर गर्व करे,
शूरवीरता की गाथाएँ जाने कितनी रचते हैं।

कोई कितना ढोल पीट ले, थोथा चना समान रहै,
शौर्य पदक केवल वीरों के, सीने पर ही सजते हैं।

जो आया है वह जायेगा, बन कर वह गुमनाम यहाँ,
बन शहीद जो अमर हो गये, उन्हें याद सब करते हैं।

2. राष्ट्र सम्मान

हमें दुश्मनों के मस्तक को आज झुकाना ही होगा।
भारत रक्षा हित जो खायीं, कसम निभाना ही होगा।1

जनता की स्मृति से बिसरी, कितनी स्वर्णिम गाथाएं,
भारत गौरव की बातों को, पुनः बताना ही होगा।2

बन कृतघ्न जब जड़ें खोदते, नाम देश का हो नीचा,
राष्ट्र प्रतिष्ठा का अब बीड़ा, हमें उठाना ही होगा।3

भाँति-भाँति की नित्य भ्रांतियाँ, जनता में हैं फैलाते,
सच्ची बातें सर्व जनों के, ह्दय बिठाना ही होगा।4

चीरा लगा बहा दें सारा, दूषित रक्त प्रवाहित हो,
राष्ट्र प्रेम का हर धमनी में, रुधिर समाना ही होगा।।5

तार-तार कर डाली जिसको, चंद कुटिल नेताओं ने,
भारत माँ की अनुपम छवि को, पूज्य बनाना ही होगा।6

संचालित करते गतिविधियाँ, शत्रु कई बाहर बैठे,
बाहर बैठे आकाओं को, सबक सिखाना ही होगा।7

घृणा अस्मिता से जो करते, तज कर राष्ट्र प्रतीकों को,
राष्ट्र गीत चाहे अनचाहे है, उनको गाना ही होगा।8

जोड़ सके जो सभी नागरिक, देश गान सब मिल गायें,
वंदे भारत की प्यारी धुन, उन्हें बजाना ही होगा।9

3

1. जिस देह में बसते देश कई...

नीली कश्मीरी आँखों ने
आज़ाद सा ख़ुवाब सजाया था,
जब वीर मराठों ने माथे
केसरिया तिलक लगाया था।

उत्तर के उजले हिम से पिघल
जब गंगा नीचे आती है,
पंजाब की बलिदानी धरती,
धानी सी चुनर लहराती है।

मरु से तपती तलवार प्रखर
रजवाड़ी शान कहाती है
बंगाल की माँग में सिंदूरी
क्रांति की लाली सजाती है।

तब लाल किले की प्राचीरें
जन मन की धुन बिखराती है
दिल बनकर बसी हुई दिल्ली
आज़ादी याद दिलाती है।

दे ख़ून मुझे, आज़ादी लो
नारा नेताजी लगाते हैं
सुखदेव, भगत, आज़ाद, पटेल,
माटी को तिलक बनाते हैं।

हे ब्रह्मपुत्र तेरे पानी में
दांडी का नमक घुल जाता है
एक मोहन चंपारण आकर
महात्मा बनकर जाता है।

जहाँ राजमहल के राजकुंवर
पा ज्ञान शुद्ध हो जाते हैं
उस गया की पावन धरती पर
सिद्धार्थ बुद्ध बन जाते हैं।

गंगा की हर हर काया में
काशी जब भस्म लगाती है
उज्जैन की ओजस्वी धरती
महाकाल का वंदन गाती है।

अपने आलय जाकर मेघा
जब राग मल्हार सुनाता है
रोम रोम इस धरती का
प्रेम से भीग जाता है।

आकाश कुसुम सी कावेरी
कितनों का मन ललचाती है
अपनी कंचन की काया से
सीमाएँ छूकर जाती हैं।

ईश्वर के अपने ही घर में
जब शारद सुर में गाती हैं
दक्षिण की कन्या पुलकित हो
हिंदसागर गले लगाती है।

माला के मोती से बिखरे
कुछ द्वीप सुदूर मुस्काते हैं
जय हिंद के नारे लगा रहे
हिंद में ही गोते खाते हैं।

है बाँह पसारे सागर में
माँ भारती प्रेम लुटाती है

रिपु लिपटे तन से काँटों से
उन पर भी स्नेह लुटाती है।

धरती अंबर परिवार मेरा
ये भाव भारती लाती है
जिस देह में बसते देश कई
उसे एक गणतंत्र बनाती है।

2. राधारानी और श्रीकृष्ण : प्रेम और प्रश्न

क्या राधा कृष्ण सी पूजित होती
यदि वह भी कृष्ण सी होती
अनगिनत स्नेहाकांक्षाओं को
यदि पलकों में अपने संजोती

क्या संभव था उनको मिलना
गोपों का प्रेम समर्पण
क्या जग देता राधा को भी
कृष्ण सा ही समर्थन

राधे के अधरों की मुरली
जब छेड़ती प्रेम का राग,
सुधबुध बिसरा झूमते गोप
तन मन में भर अनुराग।

आनंद प्रेम के नृत्य में
लय ताल में बजते हस्तक,
राधारानी के पैरों पर
हो जाते सब नतमस्तक।

भेदयुक्त देह से परे
था संभव समभाव का रास
लौकिक दृष्टिवानों के
क्या अंतस में होता उजास

राधा को समर्पित ऐसा प्रेम
अलौकिक अनुपम कहलाता
इस ऐनकधारी समाज की
क्या सहज स्वीकृति पाता

या त्रेतायुग का धोबी
द्वापर युग में आ जाता
हृदय की रानी राधा को
राग विहाग सुना जाता।

क्या राधा का पावन प्रेम
अग्निपरीक्षा दे पाताघ
या संताप भार से दबकर
धरती में पुनरू समाता।

राधा में साहस था अदम्य
उन्हें सीमा बाँध न पायीं,
न बंधी वह लौकिक बंधन में
उन्हें प्रेम की दुनिया भायी।

वह पूरक नहीं किसी की
स्वयं में पूर्णता लाती हैं,
वह प्रेम का अनुपम भाव है
कृष्ण को विस्तार दिलाती हैं।

अपने उदात्त प्रेम के 'श्री' से
कृष्ण को 'श्रीकृष्ण' बनाती हैं,
कृष्ण न कहलाते राजा
पर राधा रानी कहलाती हैं।

1. नहीं भूली हूँ

नहीं भूली हूँ मैं आज तक
अपने बचपन का वो पहला मकान
पिताजी का बनाया वो छोटा मकान
कुछ ऋण ऑफिस से
बाकी गहने माँ के काम आए
मेरे लिए वो ताजमहल था
सफेद न सही लाल ही सही
छत पर सोने का मज़ा तो वैसे भी
ताजमहल में कहाँ आ सकता था
नहीं भूली हूँ आज तक वो मिट्टी का सोंधी महक
जब हम शाम को छत पर पानी उड़ेलते
तपिश कम हो तो रात को छत पर सोएँगे
छत की सफाई ने हमें जैसे टाइम मैनेजमेंट सिखा
दिया था
स्कूल जाना, फिर होमवर्क करना, खेलना, खाना
और फिर रात को ऊपर सोने के लिए
छत पर छिड़काव, वो माटी की भीनी-भीनी खुशबू
बिछौना व छत वाले पेड़ के नीचे मस्ती
आसमां में चमकीले तारे
चाँद को देखना, और फिर सोना
नहीं भूली हूँ आज तक, वो मेरे शहर की सुबह
चिड़ियों का चहचहाना
मुर्गे की बांग, माँ का नीचे से आवाज़ें लगाना
मेरा उस सोंधी खुशबू में लिपटे-लिपटे बड़े हो जाना
खुशबू में तैर कर सात समुंदर पार आना
यहाँ खुशबू के तो पंख निकल आए थे
मैं जब चाहे उड़ कर उस पुराने मकान
को छू आती थी
वो छुअन वाले मोह के धागे ही तो थे
जिन्होंने मुझे मेरे मकान से बांधे रखा
इसीलिए नहीं भूली हूँ मैं आज तक
अपने बचपन का वो पहला मकान
जिसकी यादें दिल में सीमेंट बन गई हैं
और दिल वही मकान बन गया है।

2. धूप की मछलियाँ

बनारस के घाटों पर
नयी करवटें बदलती ज़िंदगी
अंतिम यात्रा
एक बुलबूला फटता है
जिसमें जीवन कैद था।
बस यह तो बाहरी छिलका था जो गिर गया
बाहरी सतह टूट गयी
अंदर की तो फिर नयी यात्रा, नया चक्र और योनि
मिलन और विलय शुरू होता है
यही सृष्टि का सत्य है
जैसे जल किसी को रुका हुआ सा लगता है
दूसरा कहता है नहीं चल रहा है
तीसरा कोई बोल पड़ता है कि
देखो इस पानी में तो धूप की मछलियाँ तैर रही हैं
फिर कोई बोल उठता है
तैरती हुई तो एक ऊर्जा है
कर्मों के हिसाब से रूप बदलना ही उसका काम है
छलावा है या सत्य
ब्रह्मांड पर छोड़ दो
शिव से पूछो की क्या सत्य है
उसके पहले अपने अन्तर्मन में एक अपना
शिवलिंग बनाना होगा।
जर्जर मन के लिए पुरातत्वेता बनना होगा
कर्मों के रसायन में घाट की मिट्टी मिला कर
शिव पर छोड़ना होगा
फिर जब तुम अपनी अंतिम यात्रा के लिए
बनारस का द्वारा लांघोगे
तभी मोक्ष को पाओगे
धूप की मछलियाँ भी साफ-साफ देख पाओगे।

शैल अग्रवाल के छंद मुक्तक

1.
कौन हूँ मैं
वह आकुल लहर
जो अंतस में उठी
और बहा ले गई
या फिर शांत हठी
ठहरा समंदर...

2.
मौन हैं सब
आवाजें नहीं आतीं
चीजें नहीं बदलतीं
वक्त के साथ उड़ जाते हैं रंग
कठपुतलियों के देश में!

3.
अंतस के अंधियारे सूझे ना राह
पागल है यह बादल मन सा
गरजा बरसा और बिखरा
सब कुछ ही तो एक साथ

4.
आत्मा की भूख़
देह की जरूरत
कितने प्रवचन दिए
उसने नेह के नाम पर
जबकि दो ही शब्द
काफी थे नारी के लिए
पहला विश्वास और
दूसरा समर्पण

5.
पतझर के बाद
फल फूल क्या
एक कली एक पत्ता तक नहीं था
सूखी ठिठुरती उन डालों पर
फिर भी देखा है मैने इंतजार
एक उम्मीद, जमी थमी
चिड़िया की आँखों में

6.
राम ने राजपाट तज
धनुष उठाया
कृष्ण ने बांसुरी छोड़कर
चक्र चलाया
प्रेम की गलियों से गुजरकर ही
रणभूमि तक पहुंचे थे दोनों
बात जब अपनों की हो
अपनों पर हो
सबकुछ खोने और पाने की हो
तो लड़ना ही पड़ता है

7.
पूछा जब सूरज ने
घास के एक तिनके से
सूख-सूख कैसे तू हरियाता है
इतनी ज्वाला सह जाता है
बोला वह हंसकर
बैठा हूँ माँ की गोद में।

8.
बसंत एक प्रयास
सूखी जड़ों में सोते ढूंढ
प्यास बुझाने का
बसंत एक प्रकरण
जड़ से पुनः
चेतन हो जाने का

पुस्तक समीक्षा-1

आम आदमी का प्रतिनिधि है रामखेलावन

समीक्षक : विवेक रंजन श्रीवास्तव

हमारे परिवेश तथा हमारे क्रिया कलापों का, हमारे सोच विचार और लेखन पर प्रभाव पड़ता ही है। रणविजय राव लोकसभा सचिवालय में सम्पादक हैं। स्पष्ट समझा जा सकता है कि वे रोजमर्रा के अपने कामकाज में लोकतंत्र के असंपादित नग्न स्वरूप से रूबरू हो रहे हैं। वे जन संचार में पोस्ट ग्रेजुएट विद्वान हैं। उनकी वैचारिक उर्वरा चेतना में रचनात्मक अभिव्यक्ति की अपार क्षमता नैसर्गिक है।

29 धारदार सम सामयिक चुटीले व्यंग्य लेखों पर स्वनाम धन्य सुस्थापित प्रतिष्ठित व्यंग्यकार सर्वश्री हरीश नवल, प्रेम जनमेजय, फारूख अफरीदी जी की भूमिका, प्रस्तावना, आवरण टीप के साथ ही समकालीन चर्चित 19 व्यंग्यकारों की प्रतिक्रियायें भी पुस्तक में समाहित हैं। ये सारी समीक्षात्मक टिप्पणियां स्वयमेव ही रणविजय राव के व्यंग्य कर्म की विशद व्याख्यायें हैं, जो एक सर्वथा नये पाठक को भी पुस्तक और लेखक से सरलता से मिलवा देती है। यद्यपि रणविजय जी हिन्दी पाठकों के लिये कतई नये नहीं हैं, क्योंकि वे सोशल मीडिया में सक्रिय हैं, यू-ट्यूबर भी हैं और यत्र तत्र प्रकाशित होते ही रहते हैं।

कोई 20 बरस पहले मेरा व्यंग्य संग्रह रामभरोसे प्रकाशित हुआ था, जिसमें मैंने आम भारतीय को राम भरोसे प्रतिपादित किया था। प्रत्येक व्यंग्यकार किंबहुना उन्हीं मनोभावों से दो चार होता है। रणविजय जी रामखेलावन नाम का लोकव्यापीकरण भारत के एक आम नागरिक के रूप में करने में सफल हुये हैं। दुखद है कि तमाम सरकारों की ढेरों योजनाओं के बाद भी परसाई के भोलाराम का जीव के समय से आज तक इस आम आदमी के आधार भूत हालात बदल नही रहे हैं। इस आम आदमी की बदलती समस्याओं को ढूंढ़ कर अपने समय को रेखांकित करते व्यंग्यकार बस लिखे जा रहे हैं।

बड़े पते की बातें पढ़ने में आई हैं इस पुस्तक में मसलन जिंदगी के सारे महंगे सबक सस्ते लोगों से ही सीखे हैं विशेषकर तब जब रामखेलावन नशे में होकर भी नशे में नहीं था। हम सब यथा स्थितिवादी हो गये हैं, हम मानने लगे हैं कि कुछ भी बदल नहीं सकता। अंगूर की बेटी का महत्व तो तब पता चला जब कोरोना काल में मयखाने बंद होने से देश की अर्थव्यवस्था डांवाडोल होने लगी। रणविजय राव का रामखेलावन ऑनलाइन फ्राड से भी रूबरू होता है, वह सिर पर सपने लादे खाली हाथ गांव लौट पड़ता है। कोरोना काल के घटना क्रम पर बारीक नजर से संवेदनशील, बोधगम्य, सरल भाषाई विन्यास के साथ लेखन किया है रणविजय जी ने। चैनलों की बिग ब्रेकिंग, एक्सक्लूजिव, सबसे पहले मेरे चैनल पर तीखा तंज किया गया है। रामखेलावन को लोकतंत्र की मर्यादाओं का जो खयाल आता है, काश वह उलजलूल बहस में देश को उलझाते टीआरपी बढ़ाते चैनलों को होता तो बेहतर होता।

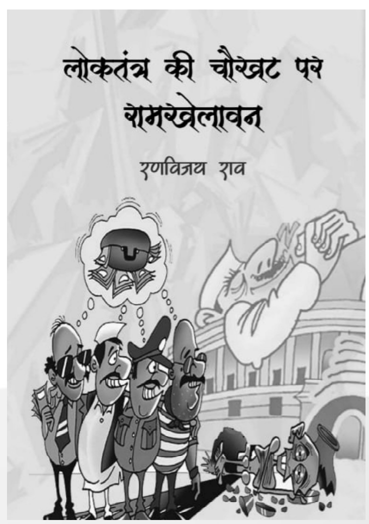

संग्रह का प्रत्येक व्यंग्य महज कटाक्ष ही नहीं करता, अंतिम पैरे में वह एक सकारात्मक स्वरूप में पूरा होता है। वे विकास के कथित एनकाउंटर पर लिखते हैं, विकास मरते नहीं भाषा से खिलंदड़ी करते हुये वे कोरोना जनित शब्दों

प्लाज्मा डोनेशन, कम्युनिटी स्प्रेड जैसी उपमाओं का अच्छा प्रयोग करते हैं। प्रश्नोत्तर शैली में श्सीधी बात रामखेलावन से किंचित नया और कम प्रयुक्त अभिव्यक्ति शैली है। व्हाट्सअप के मायाजाल में आज समाज बुरी तरह उलझ गया है। असंपादित सूचनाओं, फेक न्यूज और अविश्वसनीयता चरम पर है। व्हाट्सअप के दुरुपयोग से समाज को बचाने का उपाय ढूढ़ने की जरूरत है। वर्तमान हालात पर यह पैरा पढ़िये, जनता को लोकतंत्र के खतरे का डर दिखाया जाता है, इससे जनता न डरे तो दंगा करा दिया जाता है, एक कौम को दूसरी कौम से डराया जाता है, सरकार विपक्ष के घोटालों से डराती है, डरे नहीं कि गए। समझते बहुत लोग हैं पर रणविजय राव ने लिखा है और उसे अच्छी तरह संप्रेषित भी किया है। आप पढ़िये और मनन कीजिए।

हिन्दी के पाठकों के लिये यह जानना ही किताब की प्रकाशकीय गुणवत्ता के प्रति आश्वस्ति देता है कि लोकतंत्र की चौखट पर रामखेलावन भावना प्रकाशन से छपी है। पुस्तक पठनीय सामग्री के साथ साथ मुद्रण के स्तर पर भी स्तरीय, त्रुटि रहित है। मैं इसे खरीद कर पढ़ने के लिये अनुशंसित करता हूँ।

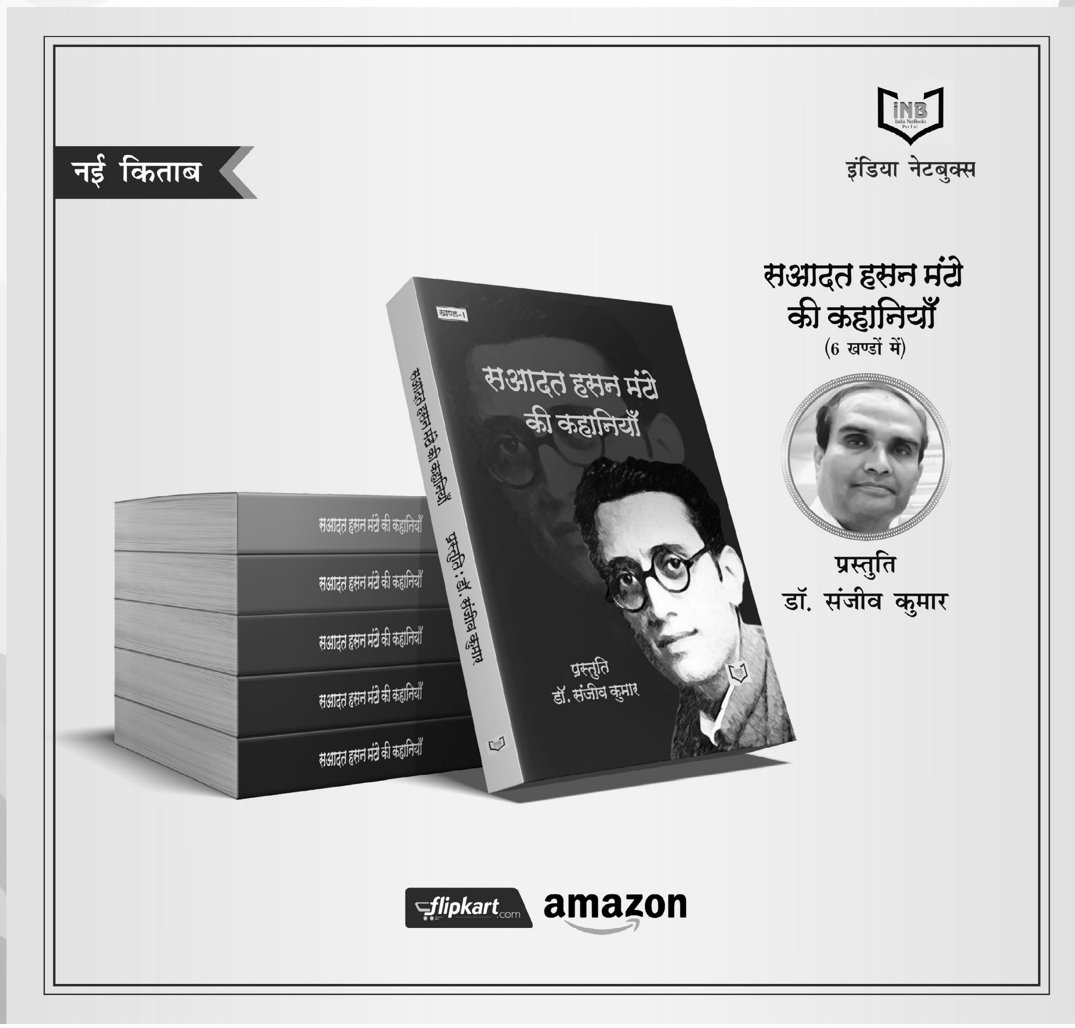

पुस्तक समीक्षा-2

कथाकार श्रीमती राज लक्ष्मी सहाय की कहानी संग्रह "जय हिंद" पर डॉ. विनय भरत की समीक्षा

कहानियां वक्त के साथ कम होती जा रही हैं किस्से ज्यादा कहे जा रहे जो कहानी आ भी रही है, खोखली रह जा रही है क्यूंकि समाज के लिए उनके पास देने को कोई बड़ा नैतिक संदेश नहीं रहता कहानियां या तो बौद्धिक जुगाली के लिए लिखीं जा रहीं या कोई नैरेटिव सेट करने के उद्देश्य से लिखी जा रहीं।

राज लक्ष्मी सहाय की १३ कहानियों की कहानी संग्रह "जय हिन्द" अपने आप में राष्ट्र भक्ति से रोम-रोम भीगा अपने आपमें एक अनूठा प्रयोग है। अगर ये कहानियां नहीं होतीं, तो राष्ट्र गीत होतीं कहने की शैली काव्यात्मक है पंक्तियों में लय है साथ ही, हर कहानी इतनी जीवंत हैं कि इसके किरदार पंक्तियों से निकल नाट्य मंचन को बेताब जान पड़ते हैं कुछ कहानियाँ मन में पढने के लिए होती हैं लेकिन राज लक्ष्मी की सारी कहानियां मंचन और पौडकास्ट के लिए बनी हैं।

लेखिका ने अपने 'दो शब्द' में यह साफ़ कर दिया है कि उनके लिए कहानियां उफनते विचारों उगदारों की सुनामी हैं। पन्द्रह अगस्त और छब्बीस जनवरी के ठीक पहले यह सुनामी हृदय की अथाह गहराई से उठती है... मानस में भूकंप उठता है दरारे नजर आती है हर दरार के दरीचे में अपना तिरंगा प्रश्नचिंह सा दिखाई देता है।"

लेखिका ने अपने अनेक पात्रों के माध्यम से प्री कोलोनियल और पोस्ट कोलोनियल भारत के बीच कॉन्ट्रास्ट खींचा है जेनेरेशन नेक्स्ट के नये इण्डिया के बीच से पुराने भारत को बचा लेने की जद्दोजहद स्पष्ट दिखती है चूँकि लेखिका खुद एक स्कूल शिक्षिका हैं और सास-ससुर की सेवा के बीच पुराने और नये जेनेरेशन के बीच सेतु हैं, उनकी अधिकांश कहानियों के protagon पेज या तो नई पीढ़ी है या दादा जी हैं लाजिम है, कहानियाँ लेखिका के खुद के जीये यर्थात से जीवन दर्शन के साथ बलखाती पन्नों पर उतरी हैं। लेखिका की पहली कहानी "क्यों पढूं मैं झूठी कविता" खुद में एक क्रांति बीज है कहानी खुलती है मुन्नी की एक राष्ट्र भक्ति गीत के रटने के जद्दोजहद से उसे एक कविता अपने स्कूल में मुन्नी इसे रट नहीं पा रही, क्यूंकि मुन्नी इन शब्दों के भाव पकड़ नहीं पा रही कविता है।

"केसरिया बल भरने वाला, सादा है सच्चाई, हरा रंग है हरी हमारी, धरती की अंगड़ाई। और चक्र कहता कि हमारा, कदम कभी न रुकेगा। झंडा ऊँचा सदा रहेगा।"

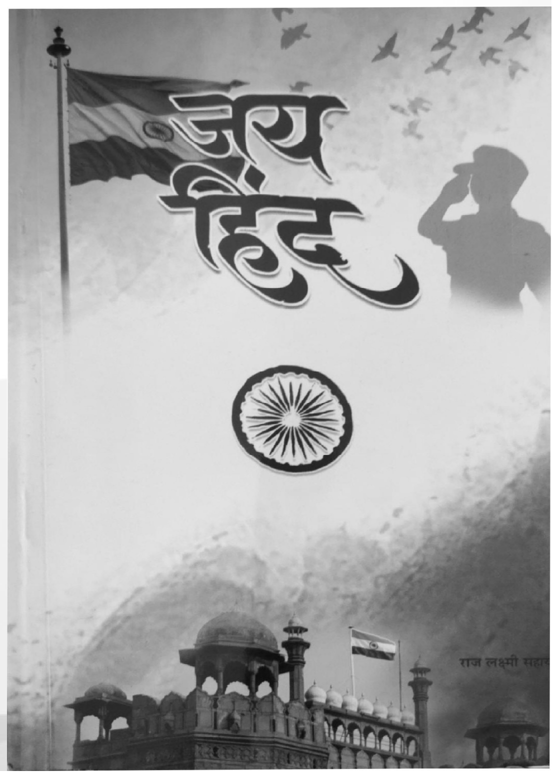

दादा जी के मार्फत ज्यों-ज्यों इन शब्दों का अर्थ तलाशती है, उसे हिंदुस्तान में ये सारे शब्द बेमानी लगने लगते हैं दादाजी एक जगह पर कहते हैं "अरे झंडा तो एक ही है हिन्द के झंडे को इण्डिया ने लूट लिया" और इसी महावाक्य से कथाकार ने आगे की कहानियों के लिए अपना टोन और टेम्पर सेट कर लिया है कथाकार के मार्फत मुन्नी ने जो नई पर सच्ची कविता रचा है, वह ब्लैक ह्यूमर सेट करता है : "केसरिया रंग उड़ा उड़ा/सादा पर है काली छाया/हरा रंग तो सूख गया/धरती अपनी दरक गयी/चक्र फंसा है दलदल में।" और अगली कहानी "और जीतन ने फहरा ही लिया अपना तिरंगा" में जीतन हाशिये पर खड़े उसे अंतिम व्यक्ति की देशभक्ति की ललक को दर्शाता है, जिसे मुफ्त सरकारी साईकल, चावल के साथ मुफ्त तिरंगे न बंटने की कशक है, पर जुनून ऐसा कि प्रकृति से रंग निचोड़कर और अपनी एकमात्र धोती की बलिदानी से वह अंततः तिरंगा बना ही लेता है और आज़ाद भारत के आकाश में फहरा के ही दम लेता है।

तीसरी कहानी "डायर जिन्दा है" यह बताने में सफल रही है कि जलियांवाला बाग़ कांड के दोषी को भले शहीद उधम सिंह ने मार दिया, पर आज़ाद भारत में कई जलियांवाला बाग़ उग आये हैं।

इस कहानी का किशोर नायक जब अपने दादाजी के साथ जलियांवाला बाग़ देख घर लौटता है, उसे नींद नहीं आती वह टीवी खोलता है, और स्क्रीन पर हैं, कई-कई जलियांवाला बाग़ "अब तक के बम विस्फोटों के चित्र दिखाए जा रहे थे जो देखा भगत ने वो जलियांवाला बाग से भी भयानक मुंबई का विस्फोट, टीवी पर हाहाकार, बारूद की आग से झुलसे लोग, चीख पुकार फिर देखा पूना बेकरी कांड, कोयले बने शरीर, अधजले भयंकर चेहरे भय से कांपते लोग बनारस बेंगलुरु दिल्ली एक के बाद एक विस्फोटों का सिलसिला" (प.32) और कह बैठे दादाजी, "अब पूरा मुल्क जलियांवाला बाग़ है।"

चौथी कहानी "तिरंगे से लिपटा भारत रत्न" में घर से बाहर छावनियों में रह रहे सैनिकों की रोज मर्रा के बलिदानों को बड़ी ही मार्मिक तरीके से कथाकार ने छुआ है और लेखिका किरदार जोखा के मार्फत यह संदेश देश के निति निर्धारकों और आम पाठकों तक पहुँचाने में सफल होती हैं कि दरअसल भारत रत्न वे नहीं, जिनको मिडिया दिन रात चमकाने में लगे रहते हैं।

बल्कि भारत रतन, "पत्थरों में रतन" (प.३८) अर्थात, अपने सैनिकों के बीच से भी मिलना चाहिए, क्योंकि तन और मन, प्रेम और निजी जज्बात की बलिवेदी देकर ये सपूत देश की चमक को बनाये रखने में लगे रहते हैं अनवरत उसी प्रकार अगली कहानी "बापू, नहीं बेचूंगा अब तिरंगा" में लेखिका ने एक उस बाल भारत का हृदयस्पर्शी चित्र किया है, जो तिरंगे बेच कर घर में रोटी लाता है, और दूसरी और उस अर्बन यंग इंडिया को दिखाया है, जो तिरंगे से सौदा कर "गोलगप्पे" गुलछर्रे पर पैसा लुटाता है उपभोगवादी नये इन्डिया के प्रति लेखिका की चिंता स्पष्ट दिखती है इसमें एक तस्वीर लेखिका ने बहुत मार्मिक खींचा है, जहाँ बाल नायक मोहना और गाँधी एक जैसे फटेहाल और जीर्ण-शीर्ण और जेन नेक्स्ट के इंडिया से हारे हुए खड़े हैं मोहना बापू की टूटी प्रतिमा को तिरंगे से भर देता है ए और यही लेखिका की शिल्प की जीत है कि मोहना सीधे पाठक के दिल पे काबिज हो जाता है।

"जरा याद करो कुर्बानी!" में नये इण्डिया के नन्दू बाबा को "क़ुरबानी" शब्द का अर्थ वृधा आश्रम में "डम्प" किये गये अपने परदादा से समझना पड़ता है, जिहोने अपनी पीठ पर अंग्रेजी हुकूमत की लाठियां झेली हैं जिनकी नसों में कृष्ण, अर्जुन, सम्राट अशोक, बुद्ध महावीर के संस्कार भरे हैं और जिन्होंने साबरमती आश्रम और जलियांवाला बाग़ का मंजर देखा है, समय के दो काल-खंड पे दौड़ती ये कहानी आधुनिक भारत के युवाओं को क़ुरबानी की विरासत देने में कामयाब होती है।

इसी प्रकार जहाँ एक "महादेव बाबू का तिरंगा" की कहानी के मार्फत लेखिका क्रिकेट के स्टेडियम में बैठ मुंह पे तिरंगे को पेंट सिगरेट के धुंए में उड़ते राष्ट्रभक्तों को एक्सपोज करती हैं और उनके अंदर तिरंगे के प्रति सम्मान

भरने में कामयाब होती दिख रही हैं, वही दूसरी ओर “दाल वाली चिट्ठी” के मार्फत आज़ाद भारत में भी सीमा पे तैनात सैनिकों को मिल रहे सब स्टैण्डर्ड खाने की थाली से क्षुब्ध हैं। ये यकीनी तौर से लेखिका का अदम्य राष्ट्र प्रेम ही है, जिसने उनकी कहानियों को “सादा है सच्चाई” की शक्ति से ओत-प्रोत किया है, और उनके पात्र सच कहने का माद्दा रखते हैं। “बरगद बोला” कहानी में कहानीकार ने बरगद को टूल्स बनाया है और बरगद के मार्फत झारखण्ड के संताल माटी के वीर सपूतों सिद्धू कान्हू की शाहदत के मौन शोर को पकड़ने की अद्भुत कोशिश किया है। लेखिका का कहानी कहते-कहते जो देश के मौजूदा हालात के प्रति दर्द है, उसका एंगर का क्लाईमैक्स है।

“अब और नहीं! बस मुक्ति चाहिए” कहानी लेखिका को इस कहानी में नाटकीय शिल्प का इस्तेमाल करते हुए यमराज को लाना पड़ा है और ये शीर्षक वाली कराह याचना उस देशभक्त की है, जो अब और जन्म इस देश में नहीं लेना चाहता। और जो कहानी कहने की पीड़ा राज लक्ष्मी ने “क्यों पढ़ूं मैं झूठी कविता” से उठाया था, उस पीड़ा की कथार्सिस आखिरी कहानी “कलपती है भारत माता, जब-जब फहरता है तिरंगा” जिसमें भारत माँ कैंसर ग्रस्त हैं और उनसे अब और इसे देश की हालत नहीं देखी जाती।

दरअसल, इन पूरी कहानियों का शिल्प ऐसा है जैसे किसी ईमानदार स्वंत्रत सेनानी के सामने दो नौजवान बैठे हैं एक ग्रामीण भारत से और एक बदलते शहरी इण्डिया से लेखिका ने पात्रों के मार्फत अपनी बात बड़े ही ऑब्जेक्टिव तरीके से कहने की कोशिश की है लेखिका की नाट्यमंचन की विधा पर पकड़ और काव्य प्रेम स्पष्ट दीखता है।

ये जरुर है कि कुछ कहानियां और विस्तार मांगती हैं पर ये भी समझना होगा कि इन कहानियों के पोटेंशियल पाठक कोक और वाले हैं और लम्बे कथ्य को सुनने का धैर्य अब इस पीढ़ी में नहीं है। इस लिहाज से ये काहनी संग्रह सफल है लेखिका ने अपना काम कर दिया है पर ये काम तब और सफल माना जाएगा, जब पाठकों के सामूहिक प्रयास से ये किताब हर स्कूली बच्चे के घर पहुंचे।

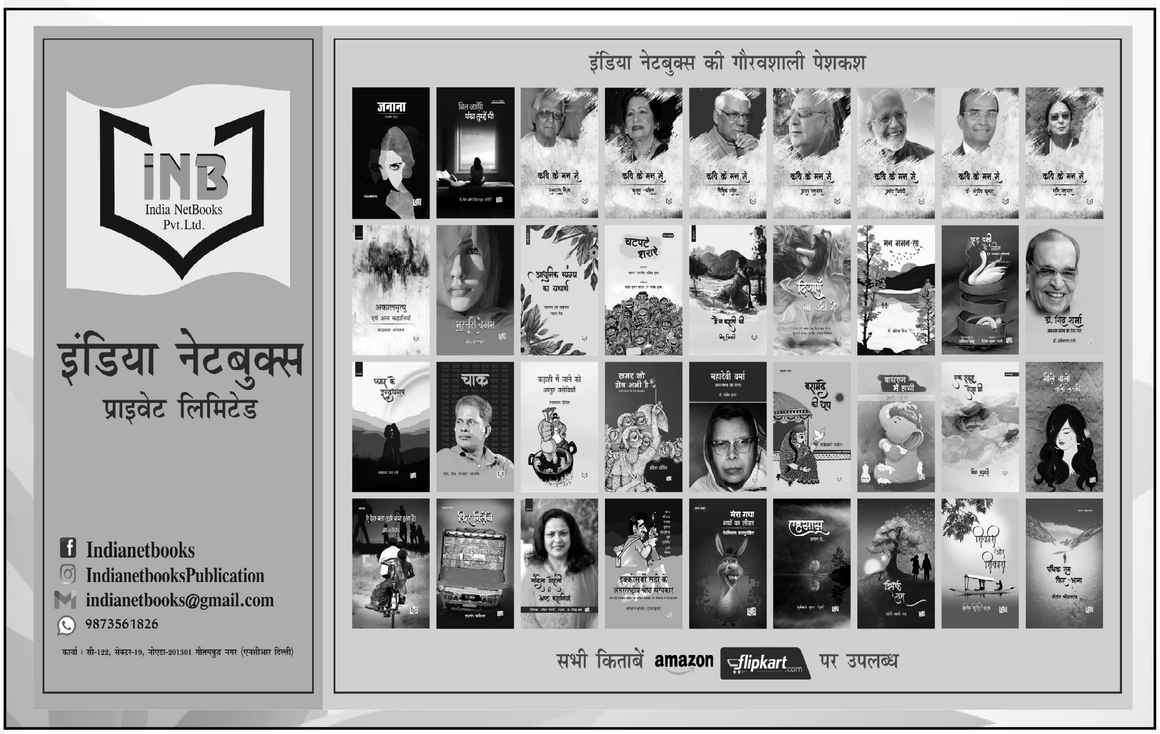

साहित्य समाचार-1

डॉ. संजीव कुमार की 100 पुस्तकों के प्रकाशन पर साहित्यकारों द्वारा अभिनंदन

जुलाई 16, होटल क्राउन प्लाजा में पूरे देश से वरिष्ठ साहित्यकारों का जमावड़ा था।
अवसर था डॉ. संजीव कुमार द्वारा 100 साहित्यिक पुस्तकें पूरी करने पर आशीर्वन एवं अभिनंदन समारोह का प्रस्तुत है दो वरिष्ठ साहित्यकारों द्वारा तैयार गई रिपोर्टः

1. बलराम अग्रवाल की रिपोर्ट

उर्दू में जिसे 'तहे दिल' कहते हैं, हिन्दी में शायद उसी को 'हृदय तल' नाम दिया जाता है।

आगंतुक का हृदय तल से सम्मान करने से बड़ा अश्वमेध इस काल में कोई नहीं है। इस सत्य का आभास कल यानी 16 जुलाई, 2022 की शाम मयूर विहार, दिल्ली के क्राउन प्लाजा में एकाएक हुआ।

मैं सभी के नाम न गिना पाकर बस इतना बता पाऊँगा कि व्यंग्ययात्रा पत्रिका तथा कुछेक अन्य संस्थाओं/मित्रों ने मिलकर एक कार्यक्रम आयोजित किया था। वह कार्यक्रम डॉ. संजीव कुमार की 100वीं पुस्तक 'आज की मधुशाला' के लोकार्पण का था। दिल्ली में पुस्तक लोकार्पण कोई अनूठी घटना नहीं है। लेकिन यह कार्यक्रम एकाएक मुझे अश्वमेध जैसा महसूस हुआ। अश्वमेध इसलिए कह रहा हूँ कि समूचा कार्यक्रम साधन सम्पन्नता के बावजूद बेहद सादा था। जितने भी आगन्तुक वहाँ नजर आए, सब के सब साहित्य के ऋषि तुल्य। अहंकार शून्य। मेरी इस अनुभूति पर किसी को भी ऐतराज हो सकता है, मुझे भी ऐसा लिखते हुए लग रहा है कि मैं कुछ ज्यादा तो नहीं आँक रहा हूँ! लेकिन यह उपमा कार्यक्रम की प्रकृति के मद्देनजर है। कोई औपचारिक मंच नहीं था। न कोई विशिष्ट अतिथि न अध्यक्ष। बड़े से एक हॉल में कुछ गोलाकार मेजें थीं जिनके चारों ओर कुर्सियाँ लगी थीं। मुझे लगता है, आगे की सीटें भी आरक्षित नहीं थीं जैसे कि इतने बड़े कार्यक्रम में सामान्यतः रखी ही जाती हैं। राहुलदेव, चित्रा मुद्गल, ममता कालिया, लक्ष्मीशंकर बाजपेयी, ममता किरण, रणविजय राव, दिलीप तेतरबे, रमेश सैनी, प्रताप सहगल, शशि सहगल, फारुख अफरीदी, डॉ. श्याम सखा श्याम, प्रेम जनमेजय, संजीव निगम, नीरज मित्तल, गिरीश पंकज, हरीश पाठक, हरिप्रकाश राठी, नीला प्रसाद आदि लगभग सौ आगन्तुक अपनी सुविधा के अनुसार जहाँ चाहें बैठें। राजेश कुमार और लालित्य ललित अपने-अपने हाथों में माइक लेकर लगभग हर आगन्तुक के पास गये और संजीव जी के व्यक्तित्व और कृतित्व के बारे में उनके विचार आमन्त्रित किये।

सभी ने संक्षेप में कुछ न कुछ कहा। गुजरे तो ललित जी मेरे निकट से भी थेए?ख लेकिन हवा की तरह। रुके नहीं। रुक भी जाते तो मैं क्या बोलता संजीव जी के बारे में! उनसे मेरा परिचय मात्र इतना था कि कुछ माह पहले एक प्रश्नावली उन्होंने मुझे भेजी थी जिसका उत्तर मैंने उन्हें

भेज दिया था। साहित्यिक प्रश्नावलियों के उत्तर मैं अक्सर टालता नहीं हूँ। उसके करीब छः माह बाद, जब फोन करके पूछा तो उन्होंने बताया कि वह प्रश्नावली वस्तुतः उनके द्वारा संपादित की जाने वाली एक पुस्तक के लिए थी, 'अनुस्वार' के लिए नहीं। मैंने इंडिया नेटबुक्स का नाम भी सुना हैए?ख लेकिन उससे जुड़ने का अवसर कभी तलाश नहीं पाया। इतने दाने अपने पास नहीं है जिन्हें भुनाने जाने की तीव्र उत्कंठा जागती हो। चार दाने हैं और बार-बार उन्हें ही घुमाते रहना भी प्रकृति में नहीं है।

बहरहाल, हॉल में बैठे विद्वजनों से संजीव जी के बारे में शनैः शनैः बहुत कुछ जानने को मिलता रहा। प्रताप सहगल और रमेश सैनी जी आदि संजीव जी के कुछेक अधिक निकट मित्रों ने चुटीले अंदाज में अपनी बातें कहीं। पढ़ाई के जमाने से ही मैं 'बैक बेंचर' रहा हूँ। यहाँ भी

लगभग सबसे पीछे की कुर्सियों पर ही था। वहीं बैठा-बैठा सामने चल रहे कार्यक्रम को देख सुन रहा था। लक्ष्मीशंकर बाजपेयी जी और ममता किरण जी ने शॉल ओढ़ाकर संजीव जी का अभिनंदन किया। उनके बाद लालित्य ललित ने अभिनन्दन किया फिर यह सिलसिला आगे चल निकला। मैंने मन में सोचा और साथ बैठी मीरा जी से कहा भी हमें भी अभिनंदन की तैयारी के साथ आना चाहिए था। ज्यादा नहीं, एक पुष्प गुच्छ ही सही। मैंने दरअसल इसे उनकी पुस्तक के लोकार्पण मात्र तक सीमित समझा था। दूसरे, उतनी निकटता मन में महसूस भी नहीं की थी।

अभी मैं सामने चल रहे अभिनंदन कार्यक्रम में डूबा हुआ ही था कि पीछे से आकर किसी ने मेरे कंधे पर हाथ

रखा। मैंने गरदन घुमाकर देखा। संजीव जी खड़े थे! आश्चर्य! अभी, एक पल पहले ही तो मैं इन्हें सामने देख रहा थाय वहाँ से निकलकर ये मेरे पीछे आ पहुँचे और पता तक न चला!! तुरन्त खड़े होकर मैंने उनसे कहा "आपको सामने देखते हुए मैं सोच ही रहा था कि जाकर मिलूँगा।"

"मुझे सबसे स्वयं ही मिलना है।" उन्होंने बड़ी सादगी से कहा और मेरे दोनों हाथ अपनी मुट्ठी में थाम लिए।

इतनी आत्मीयता इस व्यक्ति में है!

सावन माह चल रहा है। बाहर कभी तेज तो कभी झीनी-झीनी बारिश हो रही थी। उस बारिश में भीगने का आनन्द लेते हुए ही हम पति-पत्नी इस हॉल तक पहुँचे थे। सोचा नहीं था कि हॉल के अन्दर भी अमृत बरस उठेगा।

सबसे पहले तो जोधपुर निवासी मित्र हरिप्रकाश राठी की उपस्थिति ने आनन्दित किया था। और अब, इस पल संजीव जी ने। उसी पल, पता नहीं क्यों, मुझे लगा कि उनकी मुट्ठी में बंद मेरे दोनों हाथ सोने के हो गये हैं। और तभी महाभारत की एक कथा मेरे जेहन में उभर आई। सुनिए युद्ध की समाप्ति के पश्चात् युधिष्ठिर ने एक अश्वमेध यज्ञ करवाया। यज्ञ पूरा होने के बाद उपस्थित ऋषि एक जगह बैठे थे। एक ऋषि ने कहा कि यह अब तक के सभी यज्ञों में सर्वश्रेष्ठ था। अभी वे सब आपस में बात ही कर रहे थे कि एक नेवला उधर आ निकला जिसका आधा शरीर सोने का था। वह उस यज्ञ भूमि में इधर-उधर जाकर लोटने लगा।

ऋषि-मुनि उसे ऐसा करते देख चकित हुए। उन्होंने उससे ऐसा करने का कारण पूछा।

नेवले ने कहा "सत्ययुग में कुरुक्षेत्र में एक ब्राह्मणए उसकी स्त्रीए पुत्र और पुत्रवधू रहते थे। काफी दिनों से उन्हें खाने को अन्न का दाना तक नहीं मिला था। एक दिन ब्राह्मण कहीं से कुछ दाने बीनकर लाया। उसकी पत्नी और पुत्रवधू ने उन्हें पकाकर भोजन तैयार किया। जैसे ही वे लोग खाना जीमने लगे, एक भिखारी आ पहुँचा। उसने खाने के लिए कुछ माँगा। ब्राह्मण ने अपने हिस्से का भोजन उसे दे दिया। परन्तु इतने भर से उसका पेट नहीं भरा।

तब ब्राह्मण की पत्नी और पुत्र ने भी अपने-अपने हिस्से का भोजन उसे दे दिया। अंत में पुत्रवधू ने भी अपने हिस्से का भोजन उसको दे दिया। भोजन करने के बाद उस भिखारी ने तृप्ति की डकार ली, एक ओर जाकर अपने हाथ धोये और कुल्ला करके परिवार को आशीर्वाद देता हुआ वहाँ से चला गया।"

यह किस्सा सुनाकर नेवले ने कहा "इत्तेफाक से, भागता हुआ मैं उस स्थान से गुजरा। मेरे आश्चर्य की सीमा नहीं रही कि मेरे शरीर का जितना हिस्सा हाथ धोये और कुल्ला किये उस स्थान को छूता हुआ निकला थाए उतना सोने का हो गया! घर पहुँचा तो मेरे दादाजी ने कहा तुम्हारा आधा शरीर किसी अश्वमेध यज्ञ के स्थान को छूता हुआ गुजरा है, उसी से तुम्हारा उतना शरीर सोने का हो गया है। किसी अन्य अश्वमेध यज्ञ के स्थान से गुजरोगे तो शेष शरीर भी सोने का हो जाएगा। बस, तभी से, जहाँ भी अश्वमेध यज्ञ होने की सूचना पाता हूँ, जाकर खूब लोटता हूँय लेकिन सोने का नहीं हो पाता हूँ। यहाँ, धर्मराज युधिष्ठिर के अश्वमेध की जमीन पर भी वैसा नहीं हुआ!"

यह सुन सब चुप रह गए। युधिष्ठिर महाराज भी सन्न रह गये।

अस्वस्थता के बावजूद मेजबान में यदि एक-एक मेहमान से स्वयं मिलने जाने का ऐसा निरपेक्ष भाव है तो यह उक्त ब्राह्मण परिवार द्वारा किये गये 'अश्वमेध' जैसा ही यज्ञ है।

और उस समय तो मैं चकित ही रह गया, जब लालित्य ललित ने सम्मान वितरण के समय मेरे नाम की घोषणा की। मैं किसी से परिचित तो नहीं थाय लेकिन अनुमान है कि संजीव जी की बेटियों ने अपनी माँ के साथ इस दायित्व को सम्हाला हुआ था।

सम्मानित किए जाने वाले किसी भी व्यक्ति को मंच की यानी आगे की ओर नहीं बुलाया गया। परिजनों ने हरेक की सीट तक स्वयं जाकर उन्हें सम्मानित किया। मैंने भाभी जी (संजीव जी की धर्मपत्नी मनोरमा जी) से अनुरोध किया कि उपहार वे मेरी पत्नी को दें क्योंकि जैसे आपकी वजह से संजीव जी इस मुकाम पर हैं, वैसे ही पत्नी के सहयोग के बल पर ही मैं आज आपके सामने हूँ।

मेरी इस बात पर संजीव जी के संदर्भ में डॉ. शशि सहगल पहले ही मुहर लगा चुकी थीं, सो अनुरोध को सहज ही स्वीकार कर लिया गया। उपहार मीरा जी को ही सौंपा गया।

बहरहाल, कल शाम से मैं सोने के हाथ लिए घूम रहा हूँ दोस्तोय और मेरे माथे से बिटिया के लगाये चंदन की गंध फूट रही है। यह आजन्म फूटती रहेगी, मेरा विश्वास है। प्रिय नीरज मित्तल ने हाड़-मांस के हाथों को सोने में बदलता स्वयं देखा और अपने कैमरे में कैद किया। उनका आभारी हूँ।

2. डॉ.एस.एस. मुद्गिल की रिपोर्ट

अनूठे व्यक्तित्व के सम्मान में अनूठा समारोह

डॉ. संजीव कुमार एक बहुमुखी प्रतिभा हैं पेशे से एडवोकेट, कलम के धनी साहित्यकार, समाजसेवी एप्रकाशक और मेरे एक ऐसे अनूठे एवं विकट मरीज की उनकी अपने चिकित्सक के प्रति निष्ठा ने मेरे भीतर बैठे चिकित्सक को उन्हे प्रणाम करने को मजबूर कर दिया।

बहुत प्यारे दोस्त हम सभी से छीन लिए। लेकिन मेडिकल डॉ. होने की मेरी यह उपलब्धि रही कि मुझे इस भयावह काल में भी कुछ नए दोस्त मिले जिनमें सबसे पहले डॉ संजीव कुमार है।

भाई प्रताप सहगल ने मुझसे मेरे कोरोना पर जो लेख

कई दोस्त उनकी बहुमुखी प्रतिभा पर अलग अलग ढंग से रौशनी डाल रहे हैं लेकिन मैं आज उनके और अपने बीच घटे अनुभव पर ही बोल रहा हूं।

आप सभी जानते हैं कि इस नामुराद कोरोना ने कुछ

दैनिक अखबारों में छप रहे थे को किताब के रूप में डॉ. संजीव को भेजने को कहा और इनका नंबर दिया। पुस्तक कोरोना A2Z नाम से छपी।

लेकिन उससे पहले एक हादसा होते होते बचा किताब

प्रेस में थी मैं अमेरिका से लौटा ही था कि डॉ. संजीव का फोन आया उन्हे खुद कोरोना हो गया है। यह भयानक दूसरी लहर का दौर था, उस समय इन्हे जो सिम्पटम थे वे कोरोना के उग्रतम रूप को दिखला रहे थे यही नहीं उनकी हालात कुछ ऐसी थी कि रोग बढ़ता गया ज्यों ज्यों दवा की वाली स्थिति हो आई बुखार निमोनिया ऑक्सीजन लेवल का गिरना और तभी इनकी श्रीमती मनोरमा जी भी चपेट में आ गई। मैं चंडीगढ़ ये नोएडा मुझे दिन में रात 10/15 बार फोन आते हालत गंभीर हो रही थी मैं इन्हें रोज अस्पताल जाने को कहता था ये मानते नहीं थे। मेरे कहने पर ऑक्सीजन संयंत्र व सिलेंडर दोनों खरीद लिए लेकिन दिन पर दिन हालत बिगड़ती जा रही थी मैं सच कहूँ मेरे खुद की मानसिक स्थिति इनके हालात जानकर मेरी नींद उड़ा रही थी। अब तक मेरी ऑन लाइन हाउस सर्जन कम नर्स मनोरमा जी की बहन, कामिनी जी जो इस दम्पति की देखभाल में जुटी थी उन्हे भीं कोरोना हो गया।

मेरा धीरज टूट रहा था बार बार इन्हे अस्पताल जानें के लिए कह रहा था मगर ये मान नहीं रहे थे अमेरिका से इनकी बेटी के फोन भी आ रहे थे दिन में कई बार मैंने उन्हें आकर परिवार को संभालने को कहा इनका बेटा आया उसे भी कोरोना हो गया।

डॉ. साहिब व इनकी मिसिज को पहले से ही डायबटीज व ब्लड प्रेशर का रोग था। उम्र, डायबटीजव, ब्लड प्रेशर का होना हम चिकित्सक अति घातक मानते हैं।

शायद बाबा तुलसी ने इस परिवार हेतु ही यह चौपाई लिखी थी—

धीरज धर्म मित्र अरु नारी
आपत काल परखिए चारी

दोस्तो 50 वर्ष से अधिक चिकित्सीय क्षेत्र में काम करते हुए मैने ऐसा गजब का साहसी मरीज ऐसा धैर्य वान जीवन साथी कामिनी जैसी सेवा भाव वाली बहन व मित्र नहीं देखी।

मैं डॉ. साहिब, इनकी पत्नी इनके परिवार के धेर्य की जिजीविषा, की जितनी भी प्रशंसा करूँ थोड़ी पड़ेगी। डॉ संजीव कुमार ने मेरे जैसे दूरस्थए अनजाने कस्बाई चिकित्सक पर इतना विश्वास किया इसका मैं हृदय से आभारी हूं।

यही नहीं जब ये ठीक हो कर अमेरिका चले गए तो इनका फोन आयाबोले डॉ. साहिब क्या मैं मेरे एक मित्र जिन्हे कोरोना हो गया है उनको आपका फोन नम्बर दे दूं। उस मित्र ने आगे किसी को फोन दिया तो मैने भी सोचा कि इस लॉकडाउन में जाने कितने लोगों को चिकित्सीय सलाह की जरूरत होगी सो फेसबुक, आदि ट्विटर पर नंबर शेयर कर दिया। फिर सुबह आठ बजे से रात 8 बजे तक मेरा निरन्तर फोन बजने लगा।

असम से अहमदाबाद जम्मू से उड़ीसा तक लगभग 800 रोगियों को सलाह देता रहा। ईश्वर की कृपा से दो को छोड़ सब ठीक हुए दो भी ठीक होने के 20 दिन बाद डायबटीज के इलाज कंट्रोल हेतु अस्पताल में दाखिल हुए वे जरूर एम लोक गए यह मानव सेवा का अवसर मुझे इस हेतु भी मैं डॉ. साहिब का आभारी हूं उन्होंने दोस्त हेतु मेरा फोन नंबर मांग कर मुझे सोशल साइट्स पर नंबर शेयर करने की प्रेरणा दी।

समारोह भव्य ब सादगी भरा रहा, देश के हर कोने से स्वनाम धन्य साहित्यकारों ने उनकी 100वीं साहित्य पुस्तक के लोकार्पण अपनी शुभकामनाएं दीं।

वैसे उनकी साहित्य से इतर कॉर्पोरेट टैक्स पर भी अनेक पुस्तकें प्रकाशित हैं।

मैं डॉ. संजीव उनकी धर्मपत्नी मनोरमा जी, कामिनी जी व उनके समस्त परिवार को स्वस्थ, सक्रिय जीवन हेतु अकूत शुभकामनाएं प्रेषित करते हुए सिमटने की इजाजत लूंगा।

स्वस्थ रहें मस्त रहें
हर सुख-सुविधा के अभ्यस्त रहें
दुआगो।

व्यंग्य मानव के सभ्य होने का उद्घोष है

रिपोर्ट : रणविजय राव

विश्व हिंदी सचिवालय, मॉरीशस के अंतरराष्ट्रीय मंच पर पहली बार आयोजित होने वाली व्यंग्य की कार्यशाला के

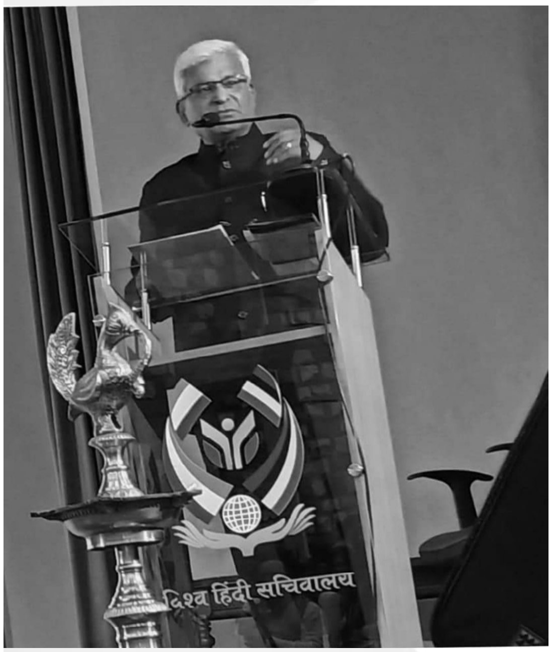

विषय विशेषज्ञ की भूमिका निभाने वाले प्रेम जनमेजय ने 22 जून को उद्घाटन सत्र में, व्यंग्य की अवधारणा पर अपनी बात कहते हुए कहा आज विश्व हिंदी सचिवालय मॉरिशस के अंतरराष्ट्रीय मंच पर हिंदी व्यंग्य अपनी उपस्थिति दर्ज कर रहा है। सचिवालय के मंच पर पहली बार विमर्श और व्यंग्य पाठ को अंतरराष्ट्रीय ज़मीन मिलना इतिहास रचने जैसा है। इस इतिहास को रचने के लिए मैं विश्व हिंदी सचिवालय की महासचिव, उपसचिव माधुरी रामधारी, शिक्षा मंत्रालय, महात्मा गांधी संस्थान एवं कला संस्कृति मंत्रालय का आभारी हूँ।

व्यंग्य मानव के सभ्य होने का उद्घोष है। पहले यह लोकोक्तियों और मुहावरों के रूप में सभ्य मानव जीवन का हिस्सा बना और बाद में साहित्य की दुनिया का। जहां-जहां विसंगतियों की घटाटोप कालिमा होती है वहां व्यंग्य की बिजली चमकती है।

शिक्षा तृतीयक शिक्षा, विज्ञान एवं प्रद्योगिकी मंत्रालय में प्रबंधक शिक्षा निरंजन बिगन ने कहा कि जैसे रात को चूहा काट जाता है पर पता अगले दिन चलता है व्यंग्य का काटा भी ऐसा होता है। व्यंग्य समाज के कान की मैल निकालता है।

सचिवालय की उपसचिव माधुरी रामधारी ने स्वागत भाषण में कहा कि आज के समय मे व्यंग्य की समझ बहुत आवश्यक है। व्यंग्य हिंदी साहित्य का महत्वपूर्ण अंग बन गया है। इसे समझना आवश्यक है। इस कार्यशाला का उद्देश्य यही है। प्रसन्नता है कि व्यंग्य विशेषज्ञ प्रेम जनमेजय हमारे आमंत्रण पर आए हैं। उनके आने से मॉरिशस का हिंदी जगत व्यंग्यमय हो गया है।

भारतीय उच्चायोग में द्वितीय सचिव सुनीता पाहुजा ने कहा कि भारत मे हिंदी व्यंग्य पर विमर्श के लिए प्रेम जनमेजय ने बहुत काम किया है। हिंदी व्यंग्य की एक सुदृढ

परम्परा है।

उद्घाटन सत्र में विशिष्ट वक्ताओं के वक्तव्यों के मध्य, मंच पर प्रेम जनमेजय की व्यंग्य रचना, 'हिंदी माथे की बिंदी' नाटक 'सोते रहो' और कविता 'वो गन्ध कहाँ है' के कुछ अंशो की, महात्मा गांधी संस्थान के बीए हिंदी ऑनर्स प्रथम वर्ष, द्वितीय और तृतीय वर्ष के छात्रों ने, नाट्य प्रस्तुति प्रस्तुत की।

उद्घाटन सत्र के उपरांत तीन सत्रों में प्रेम जनमेजय ने खचाखच भरे सभागार में बीए और एमए के छात्रों को व्यंग्य के स्वरूप, व्यंग्य की परंपरा, व्यंग्य के मनोविज्ञान और व्यंग्य की भाषा पर चालीस चालीस मिनट के व्याख्यान दिए। छात्रों इस न केवल इन्हें केवल सुना अपितु प्रश्न भी किए, एक दो नहीं हर सत्र में 5-6 प्रश्न। यह प्रश्न पूछने की औपचारिकता मात्र नहीं जिज्ञासायें थी जो प्रतिप्रश्न के रूप में भी समक्ष आईं।

विश्व हिंदी सचिवालय के पुस्तकालय ने प्रेम जनमेजय का समस्त साहित्य खरीदा। प्रेम जनमेजय सचिवालय के पुस्तकालय को समृद्ध करने के लिए अन्य अनेक रचनाकारों की कृतियाँ भी ले गए थे।

23 जून को खचाखच भरे सभागार में 'एक शाम, हिंदी व्यंग्य के नाम' आयोजन में मॉरिशस के वरिष्ठ रचनाकार श्री उदय नारायण गंगू, श्री रामदेव धुरंधर, डॉ. वीरसेन जागासिंह, डॉ. हेमराज सुंदर, श्रीमती कल्पना लालजी, एवं नवोदित रचनाकार श्री सोमदत्त काशीनाथ और प्रेरणा ने व्यंग्य पाठ किया। प्रेम जनमेजय ने अपनी व्यंग्य रचना 'कबीरा क्यों खड़ा बाजार' का पाठ किया। हर व्यंग्य रचना के मध्य भारतेंदु, परसाई, नरेंद्र कोहली, हरीश नवल, प्रेम जनमेजय और गिरीश पंकज की रचनाओं के नाट्य अंश भी प्रस्तुत किए गए।

हिंदी व्यंग्य को समृद्ध करने के लिए व्यंग्य यात्रा ने स्थानीय व्यंग्यकारों को अंगवस्त्र और अपने सद्य प्रकाशित अंक कबीरी धार की कविता और द्वारा सम्मानित किया।

मॉरिशस में हिंदी व्यंग्य का वातावरण निर्मित करने में वहां की आकशवाणी मॉरिशस ब्रॉडकास्टिंग कॉर्पोरेशन की महत्वपूर्ण भूमिका रही जिसका माध्यम बनी चौनल की अध्यक्षा डॉ. शशि दुकन। प्रकाश और क्षितिज कार्यक्रम विश्व हिंदी सचिवालय के सौजन्य से प्रसारित होते हैं।

श्रीमती अंजू घरबरन ने प्रकाश कार्यक्रम के लिए प्रेम जनमेजय से संवाद के अंतर्गत 'बर्फ का पानी' के पाठ करने का आग्रह किया। इसे सुन अंजू घरबरन तो भावुक हुई ही रिकार्ड करने वाले शंभु जी भी हो गए।

श्रीमती कल्पना लाल जी ने प्रेम जनमेजय से 'क्षितिज' कार्यक्रम के लिए 'व्यंग्य यात्रा' एवं व्यंग्य के वर्तमान परिदृश्य पर संवाद किया। श्री धनराज शंभु ने प्रेम जनमेजय से 'क्षितिज' कार्यक्रम के लिए उनके व्यंग्य नाटकों और व्यंग्य नाटकों के परिदृश्य पर बात की।

प्रेम जनमेजय को मिला 'पंडित माधवराव सप्रे छत्तीसगढ़ मित्र साहित्यिक पत्रकारिता सम्मान!'

रिपोर्ट : विनोद पाराशर

साहित्य व विचार पर केंद्रित मासिक पत्रिका 'छत्तीसगढ़ मित्र' एवं हिंदुस्तानी भाषाओं के संरक्षण व संवर्धन को समर्पित स्वयंसेवी संस्था 'हिंदुस्तानी भाषा अकादमी' के

संयुक्त प्रयास से, दिल्ली के हिंदी भवन में, कल दिनाँक 19-6-2022 को, एक कार्यक्रम किया गया। यह कार्यक्रम 'छत्तीसगढ़ मित्र' के संस्थापक संपादक पंडित माधव राव स्प्रे की 150वीं जयंती के समापन पर किया गया।

इस अवसर पर, साहित्य की व्यंग्य विधा को समर्पित त्रैमासिक पत्रिका 'यंग्य यात्रा' का 'श्पंडित माधवराज स्प्रे छत्तीसगढ़ मित्र साहित्यिक पत्रकारिता सम्मान' से नवाजा गया। 'व्यंग्य यात्रा' की ओर से, यह सम्मान स्वीकार करते हुए पत्रिका के संपादक प्रेम जनमेजय ने कहा कि यह इस पत्रिका के सहयात्रियों और शुभचिंतकों की शुभकामनाओं का फल है। इस समारोह में ममता कालिया, प्रदीप ठाकुर त्रिलोक दीप, सुशील त्रिवेदी, अशोक माहेश्वरी, अभिषेक अवस्थी गिरीश पंकज, सुधीर शर्मा, सुधाकर पाठक, तृषा शर्मा जैसे वरिष्ठ साहित्यकार, कवि, लेखक, पत्रकार, भाषाविद व साहित्य प्रेमी मौजूद थे।

प्रेम जनमेजय ने, उपस्थित सभी साहित्यिक मित्रों का आभार प्रकट करते हुए, यह भी कहा कि यह सम्मान उनका नहीं, व्यंग्य यात्रा के सभी शुभचिंतकों का है। यह सम्मान एक भिक्षुक का सम्मान है। इस अवसर पर, 'हिंदी भाषा पर केंदित, उनकी पुस्तक 'हिंदी का राष्ट्र और राष्ट्र की हिंदी' का भी लोकार्पण किया गया।

इतिहास, संस्कृति, भाषा, साहित्य, शिक्षा और समाज के संदर्भ में 'भारतीयता और विश्वबोध' को लेकर, एक राष्ट्रीय संगोष्ठी का भी आयोजन इस अवसर पर किया गया

था, जिसमें, अनेक विद्वानों ने अपने विचार रखे।

मुख्य अतिथि के रूप में आमंत्रित वरिष्ठ साहित्यकार ममता कालिया ने अपने उद्‌बोधन में कहा कि भारतीय संस्कृति, भाषा, राष्ट्रीय चेतना को जगाने में, जिन महान विभूतियों का सबसे ज्यादा योगदान रहा उनमें, महात्मा गांधी, महावीर प्रसार द्विवेदी और पंडित माधवराव राव स्प्रे का नाम मुख्य रूप से लिया जा सकता है। माधवराव जी ने वर्ष 1900 में 'छत्तीसगढ़ मित्र' की शुरुआत की, जब न तो देश स्वतंत्र था और न ही प्रकाशन की आज जैसी सुविधाएं थीं। पत्रिका के संपादक होने के नाते, उसके लिए सामग्री जुटाना, कितना कठिन रहा होगा।

वरिष्ठ पत्रकार सुदीप ठाकुर ने कहा कि स्प्रे जी का जीवन केवल 55 वर्ष का था, लेकिन अपने इस छोटे से जीवनकाल में भी पत्रकारिता व भाषा के क्षेत्र में उन्होंने अतुलनीय योगदान दिया। डॉ मैनेजर पांडेय ने उनके उनके लेखन पर अद्‌भुत कार्य किया है।

डॉ. सुशील त्रिवेदी का कहना था कि पंडित माधवराव स्प्रे जी ने धर्म, अध्यात्म और विचारधारा से आगे जाकर, भारत को विश्वबोध करवाया। गिरीश पंकज ने कहा की भारतीयता में, वसुधैव कुटुम्बकम की भावना पहले से ही समाहित है।आज कुछ संकीर्ण मानसिकता के लोग, भारतीयता की इस भावना को आहत कर रहे हैं। इनसे हमें सावधान रहने की आवश्यकता है।

'हिंदुस्तानी भाषा अकादमी' के अध्यक्ष सुधाकर पांडेय ने कहा कि कोई भी भाषा केवल विचारों का आदान प्रदान करने का माध्यम मात्र नहीं होती, वह उस समुदाय की सभ्यता व संस्कृति की भी वाहक होती है। आज भारतीय भाषायें लुप्त होती जा रहीं हैं। यदि हमारी भाषायें बचेंगी, तो हमारी संस्कृति भी बचेगी। आज भारतीयता को यदि बचाना है, तो हमें हिंदुस्तान की सभी भाषाओं का न केवल संरक्षण, बल्कि संवर्धन भी करना पड़ेगा। हमारी अकादमी पिछले अनेक वर्षों से, अपने सीमित संसाधनों के बावजूद, यह कार्य लगातार कर रही है।

इस अवसर पर कई अन्य पुस्तकों का लोकार्पण व एक कवि गोष्ठी का भी आयोजन किया गया।

वैश्विक हिंदी : संभावनाएँ एवं चुनौतियाँ

रिपोर्ट : डॉ. मनोरमा

हिंदी दिवस पर वैश्विक हिंदी की संभावनाओं पर इंडिया नेटबुक्स एवं अनुस्वार पत्रिका द्वारा गंभीर परिचर्चा का आयोजन किया गया। प्रथम परिचर्चा भारत के वरिष्ठ विशेषज्ञों के पैनल के द्वारा 11 सितंबर को हुई थी, जिसमें श्री राहुल देव, श्रीमती नीरजा माधव, श्री संजय द्विवेदी, श्री रोहित कुमार हैप्पी, प्रो. राजेश कुमार, श्री राकेश पांडेय, प्रो. बली सिंह, डॉ. संजीव कुमार, डॉ. लालित्य ललित एवं रणविजय राव ने अपने-अपने विचार रखे।

कार्यक्रम के आरंभ में डॉ संजीव कुमार ने विषय को स्थापित करते हुए कहा कि हिंदी भाषा लगातार समृद्ध हो रही है। इसका स्वरूप बहुत व्यापक है और संभावनाएं अपार हैं। आज विश्व के अनेक देशों में हिंदी बोली और समझी जा रही है।

कार्यक्रम के विशिष्ट अतिथि वरिष्ठ साहित्यकार श्रीमती नीरजा माधव ने अपने आरंभिक वक्तव्य में कहा कि हिंदी का चेहरा उदार है और उसने अन्य भाषाओं के शब्दों को स्वीकार किया है। उन्होंने कहा हिंदी बाहर के देशों तक पहुंच रही है और विदेशी भाषा में स्वदेश प्रेम की बात करना निरर्थक है।

वरिष्ठ साहित्यकार और 'प्रवासी संसार' के संपादक डॉ. राकेश पांडे ने अपने वक्तव्य में कहा कि अनेक देशों में बसे प्रवासी भारतीय और गिरमिटिया मजदूर बनकर गए लोगों ने हिंदी को जीवंत और वैश्विक बनाए रखा है। उन्होंने इस संदर्भ में फिजी, सूरीनाम, मॉरीशस आदि अन्य देशों का भी उल्लेख किया।

वरिष्ठ साहित्यकार प्रो. राजेश कुमार ने कहा कि बहुतों को यही नहीं पता कि हिंदी राष्ट्रभाषा और विश्व भाषा कैसे बनेगी और संयुक्त राष्ट्र की भाषा सूची में कैसे शामिल होगी। उन्होंने कहा कि सिर्फ कहने से ऐसा नहीं होगा। कई तरह के मानक हैं, पहले उस पर खरा उतरना होगा। उन्होंने साहित्य लेखन, अनुवाद, कामकाज, बोलचाल आदि अनेक मापदंड भी बताए जिनका अनुपालन कर हिंदी समृद्ध हो सकती है और विश्व भाषा भी बन सकती है।

किरोड़ीमल कॉलेज के प्रो. बली सिंह ने कहा कि हिंदी संघर्ष की भाषा है। आम आदमी के दुख दर्द उसकी पारिवारिक एवं सामाजिक स्थिति और उसके संघर्ष का सजीव चित्रण हमें हिंदी में देखने को मिलता है। उन्होंने कहा कि दिल्ली विश्वविद्यालय जैसे संस्थानों में यदि कोई इतिहास, भूगोल हिंदी भाषा में पढ़ना चाहे तो उसे मुश्किल होती है और यह चिंता की बात है।

न्यूजीलैंड निवासी और 'भारत दर्शन' ई-पत्रिका के संपादक श्री रोहित कुमार हैप्पी ने हिंदी के वैश्विक परिदृश्य पर प्रकाश डाला। उन्होंने हिंदी भाषियों द्वारा हिंदी पत्रिकाएं और किताबें न खरीदने पर चिंता प्रकट की। उन्होंने जोर देते हुए कहा कि हम सभी को हिंदी बोलने एवं हिंदी में अपना काम करने की शुरुआत घर से ही करनी चाहिए।

कार्यक्रम के विशिष्ट अतिथि और भारतीय जनसंचार संस्थान के महानिदेशक श्री संजय द्विवेदी ने स्पष्ट करते हुए कहा कि हिंदी को जितना समृद्ध हिंदी मीडिया, हिंदी न्यूज़ चैनल्स, धारावाहिक एवं सिने जगत ने किया है, उतना किसी ने नहीं किया। उन्होंने कहा कि आज की स्थिति में राजनीतिक जनसंचार यपॉलिटिकल कम्युनिकेशनद्ध हिंदी में जितना प्रभावी है, अन्य किसी भाषा में नहीं। उन्होंने जोर देते हुए कहा कि आज केंद्र सरकार हिंदी भाषा को विशेष रूप से प्रोत्साहित कर रही है।

अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में वरिष्ठ पत्रकार एवं हिंदी सेवी श्री राहुल देव ने कहा कि केवल भावनात्मक लगाव की वजह से ही हिंदी विश्व भाषा बन जाएगी, यह संभव नहीं है। साहित्य की भाषा तो हिंदी बन गई है, ज्ञान की भाषा जब तक नहीं बनेगी तब तक राष्ट्रभाषा और

विश्व भाषा बनाने की बात करना निरर्थक है। उन्होंने जोर देते हुए कहा कि हिंदी को विश्व भाषा बनाने में एक बड़ा काम गीतांजलि श्री की श्रेत समाधि ने किया है जिसे बुकर पुरस्कार मिला है। ऐसे ही हमारे साहित्य का यदि अन्य भाषाओं में अनुवाद होता है तो हिंदी का अवश्य भला होगा।

लोकप्रिय कवि एवं व्यंग्यकार डॉ. लालित्य ललित ने कहा कि हिंदी भाषा में प्रचुर लेखन हो रहा है और लोग किताबें भी खरीद रहे हैं। उन्होंने इस संदर्भ में राष्ट्रीय पुस्तक न्यास द्वारा प्रकाशित पुस्तकों की बड़ी मात्रा में खरीदारी का भी उदाहरण दिया।

द्वितीय परिचर्चा अंतरराष्ट्रीय पैनल द्वारा 13 सितंबर को संपन्न हुई जिसमें विभिन्न देशों के प्रवासी साहित्यकारों ने भाग लिया, जिनमें प्रमुख थे यूके से श्री पद्मेश गुप्ता (अध्यक्ष) एवं श्री तेजेंद्र शर्मा, यूएसए से श्री अनूप भार्गव, श्री सुरेन्द्र गंभीर श्री अशोक व्यास एवं श्रीमती नीलू गुप्ता आस्ट्रेलिया से हरिहर झाए सिंगापुर से श्रीमती संध्या सिंह, तजकिस्तान से श्री जावेद खोलोव, कनाडा से श्री धरमपाल जैन एवं डा संजीव कुमार आदि ने अपने अपने विचार रखे। सान्निध्य में रहे श्री लालित्य ललित श्रीमती शकुंतला, श्रीमती सुषमा, डॉ. मनोरमा, श्रीमती कामिनी मिश्रा आदि।

संक्षेप में विद्वानों के विचार में हिंदी के विकास एवं विस्तार के लिए हिंदी के सामाजिक यसमाज में हिंदी की स्वीकार्यता एवं लोगों द्वारा व्यवहार में हिंदी के प्रयोगद्ध आर्थिक यहिंदी में रोज़गार सृजन एवं व्यवसाय के अवसरों की उपलब्धिद्ध एवं सांस्कृतिक और साहित्यिक (साहित्य सृजन, सांस्कृतिक क्रिया कलाप आदि) पक्षों को मज़बूत बनाना आवश्यक होगा।

श्रीमती संध्या सिंह ने साहित्य के साथ-साथ भाषा के विकास पर भी बल दिया और कहा कि सभी पक्षों पर समन्वित काम करने की ज़रूरत है। श्री तेजेंद्र शर्मा ने हिंदी के विकास में आने वाली चुनौतियों का आलोचनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत किया।उन्होंने कहा कि भारत सरकार को हिंदी का एक मानक पाठ्यक्रम बनाने के साथ साथ प्रशिक्षण केंद्र भी खोलने चाहिए।

श्री हरिहर झा ने हिंदी को व्यवहार में और दैनिक प्रयोग तथा संवाद में लाने का प्रयास करना ज़रूरी है।

श्री सुरेन्द्र गंभीर ने समीक्षात्मक विचारों के साथ कहा कि युवा पीढ़ी का हिंदी के विकास हेतु समावेश करना चाहिए।

श्री धरमपाल जैन ने सामुदायिक स्तर पर कनाडा में किए जा रहे कार्यों का विस्तार से विवरण दिया।

श्रीमती नीलू गुप्ता ने भी कैलिफ़ोर्निया में उनके द्वारा किए जा रहे कार्यक्रमों का आशावादी चित्र विस्तार पूर्वक बताया।

श्री अशोक व्यास ने भी व्यवहारिक स्तर पर हिंदी के प्रयोग की बात को दोहराया।

श्री अनुप भार्गव ने हिंदी के विकास के। लिये निरंतरता की बात कही और वेब पत्रिका अनन्या का परिचय भी दिया।

अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में श्री पद्मेश दी भी हिंदी के व्यवहार की भाषा बनाने की ज़रूरत बताई और कहा कि संयुक्त राष्ट्र संघ की भाषा बनवा लेना मात्र हिंदी के विकास का फाटक नहीं खोल देगा हमें सामूहिक प्रयास करना होगा और हर क्षेत्र में काम करना होगा।

परिचर्चा आभार प्रस्ताव के साथ समाप्त हई।

श्रीमती नीरजा माधव का सम्मान

11 सितम्बर को वैश्विक हिंदी की परिचर्चा के दरमियां अनुस्वार मंच द्वारा श्रीमती नीरजा माधव को “वागीश्वरी पुरस्कार” एवं अंग वस्त्र से डॉ. संजीव कुमार एवं विशिष्ट अतिथि द्वारा द्वारा सम्मानित किया गया।

सलाहकार संपादक उवाच : चौराहे पर हिंदी

प्रेम जनमेजय

सारे वर्ष हिंदी डूबते सूरज की तरह, शाम की गोद में बैठी, अपनी सुबह का इंतज़ार करती है। यह सुबह सितंबर माह में आती है। इस दिन, एकला चलो वाली हिंदी का चौराहा खुल जाता है। इस चौराहे में हिंदी का सूर्य चहुं ओर से उदित होता है। 'अनुस्वार' के इस अंक में धर्मपाल महेंद्र जैन की व्यंग्य रचना 'संस्कृति चौराहे पर एक शाम' में यही स्वर प्रमुख है।

संस्कृति के इस चौराहे पर हिंदी भी है। चौराहे में विराजमान हिंदी के रूप सौंदर्य का वर्णन करते हुए धर्मपाल महेंद्र जैन लिखते है, हम एक छतरी देख कर ही थका-थका महसूस कर रहे थे। हिंदी मार्ग तो छोटी-बड़ी कई छतरियों से अटा पड़ा था।

सभी अपनी दुकानें चमकाने में लगे थे। आगे बढ़ते हुए हमें सुरीलीजी की चेतावनी याद आ रही थी नकली छतरीवालों से सावधान रहना। आज छतरी खोलते हैं, अनुदान बटोरते हैं और कुछ दिनों में छतरी सहित गायब हो जाते हैं। फिर वे पुरानी छतरी पर नया नाम लिख देते हैं, झकास कशीदाकारी करते हैं और हमारी नकल उतारते हुए गाते हैं 'मेरी छतरी के नीचे आजा'।

उन्होंने हमें आगाह करते हुए कहा था हमारी छतरी में नहीं आओ तो कोई बात नहीं, किसी और की छतरी में घुसे तो मुश्किल होगी। उन्होंने हमें समझाया था कि 'उनकी छतरी सबसे प्रामाणिक है। यह धूप में छाँह देगी, बारिश में छत देगी। दूसरी छतरी वाले, जब बारिश होती है आपको छतरी में से भगा देते हैं और जब बर्फ गिरने लगती है तो वे अपने दड़बे में दुबक जाते हैं। जब धूप निकलती है तो वे बेरंग उग आते हैं, वे केवल रौशनी बटोरना चाहते हैं। हिंदी मार्ग बहुत प्रसिद्ध मार्ग है, पर स्वर्ग तो नहीं है। सुना है, इसके आगे संस्कृति चौराहा है, वह स्वर्ग बन रहा है। संस्कृति चौराहे पर पूरा पैकेज मिलता है, पूरा मतलब, जो चाहिए वो। हम सोचते रहे, एक अकेले हिंदी के नाम पर किस कदर देश लूटा जा सकता है।

धर्मपाल महेंद्र जैन की यह चिंता उन सबकी है जो हिंदी के चिन्तक हैं, तथाकथित 'हिंदी सेवी' नहीं। जैसे भाँति-भाँति की हिंदी है वैसे ही इसके भाँति-भाँति के सेवक हैं। मेरे पड़ोस में हिन्दी के महान सरकारी सेवक रहते हैं। मैंने को हिन्दी सदैव उनके चरणों में देखा है। जो जितना बड़ा सेवक है उसके चरणों पर उतने ही उसके स्वामी पाए जाते हैं। यह कबीर की उलटबांसी नहीं प्रजातंत्र की सीधी साधी व्यवस्था है।

देश की सेवा करने वालों के चरणो पर जनता पाई जाती है, सुरक्षा करने वाली पुलिस की चरणों पर कानून पाया जाता है, धर्म के सेवकों के तले धर्म और साहित्य के सेवकों के चरणों में साहित्य। ऐसे लोग जब भी उठते है तो चरणों के आसपास पड़ी चीजें हिल जाती है और वे उन्हें चरणो तलों दबाते चलते हैं जिससे दबी चीजें अपनी औकात जान सकें और चरणों तले ही रहें। इसी दबावतंत्रा को संत लोग प्रगति भी कहते हैं।

जो जितना दबा सकता है उतना ही प्रगति पथ पर आगे बढ़ता है। अब चाहे यह दबाव लेखक को पुरस्कार दिलाने का हो, दूसरे देशों पर आर्थिक प्रतिबंध लगाने का हो, भेड़ों की सेवा करने के लिए चुनाव जीतकर 'सेवा' करने का हो अथवा अपरहण नारी का थाने में बुलाकर ब्यान लेने का हो।

वे हिन्दी के सेवक हैं सो प्रजातंत्रीय सेवावृत्ति से अलग कैसे रह सकते हैं। अपने चरणों में पड़ी हिन्दी को वे निरंतर इस अंदाज में सहलाते रहते हैं जैसे अपने किसी कूं कूं करते पालतू कुत्ते को सहला रहे हों। वे हिंदी के परम् भक्त है। पर स्वयं को हिंदी सेवी कहते हैं। मेरा मानना है कि भक्त आंख मूंद भक्ति करता है और सेवक मेवार्थ सेवा करता है। पर कुछ दोनो होते हैं परम् भक्त और परम् सेवी। हिंदी दिवस पर आयोजित होने वाले सप्ताहों और पखवाड़ों में देख लीजिएगा, कितना मेवा बंटता है और कौन-कौन खाता है। मेवे का बजट होता है। बजट की बहती गंगा में हाथ धुलते है। बजट सुंदरी घूंघट ओढी मुस्कान से हिंदी प्रेमियों में प्रेम बांटती है। भारतवर्ष में चारों ऋतुएं आती हैं। भारतीय राजनीति में भी चारों ऋतुएं आती हैं। हिंदी में भी चारों ऋतुएं आती हैं। दक्षिण में विरोध की गमी में हिंदी झुलसती है। चुनाव के समय पूरे भारत में हिंदी की बरसात होती है। हिंदी इतनी बरसती है कि बाढ़ आ जाती है। पांच सितारा होटलों, बड़े लोगों की बड़ी-बड़ी पार्टियों आदि में हिंदी का सूखा छाता है। वेटर, हाउसकीपर, बॉय आदि तक हिंदी को इस निगाह से देखते हैं जैसे कोई लिजलिजी छिपकली हो। हिंदी में वसन्त ऋतु भी आती है। हिंदी में वसन्त प्रतिवर्ष सितम्बर माह में आता है। हिंदी में वसन्त विश्व हिंदी सम्मेलन के समय भी छाता है। वसन्त ऋतुओं का राजा हैए वह मर्द है इसिलिए राजा के रूप में आता है। भारत में केवल एक भाषा मर्दानी है अंग्रेजी। अंग्रेजी भारतीय भाषाओं का राजा है। अन्य भारतीय भाषाओं का क्या लिंग है, नहीं जानता। पर हिंदी माथे की बिंदी है, स्त्रीलिंग है। हिंदी दिवस पर रानी जैसी सजती है।

विश्वरूपेन हिंदी देवी की छटा अब भारत में बिखरने वाली है। हिंदी दिवस आने वाला है। अफवाहों का और आहों का बाजार पुनः गर्म होने वाला है। अफवाहों की तासीर ही ऐसी है कि इनका बाजार गर्म ही रहता है। साहित्य और भाषा में भी अनेक बाजार खुल गए हैं और उनमें गर्मागर्म अफवाहें बेचीं जा रही है। अपने-अपने बाजार हैं और अपने-अपने उत्पाद। मैं पाउं तो रामधन और तूं पा, तो रावणधन।

देख, सब बंद कमरों में विश्वव्यापी हिंदी की सेवा के लिए बजट बना रहे हैं। वे सब हिंदी की सेवा के चिंतामगन हैं। वे हिंदी के अंतरराष्ट्रीय सेवक हैं। ये सेवी बहुत अर्थवान चिंताएं करते हैं डॉलर पौंड येन आदि में। इन्हें पूरे यूरोप में हिंदी की सेवा करनी है।

इंडिया नेटबुक्स द्वारा प्रकाशित प्रेम जनमेजय की दो महत्वपूर्ण कृतियाँ

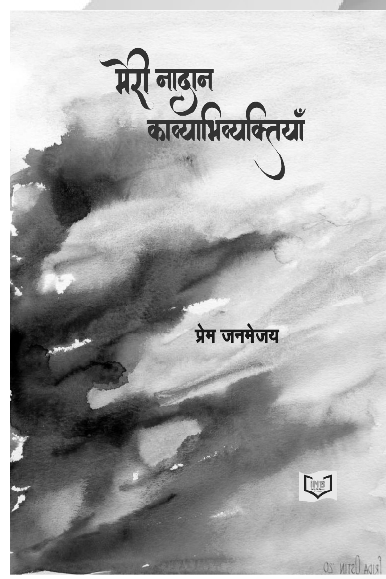

फार्म-5

समाचार पत्र के स्वामित्व एवं अन्य विवरणों सम्बन्धी उद्‌घोषणा, जिसे प्रत्येक वर्ष के प्रथम अंक में फरवरी के अन्तिम दिवस के बाद प्रकाशित किया जाना है।

1. **प्रकाशन का स्थान :** सी-122, सेक्टर-19, नोएडा-2.13.1, गौतमबुद्ध नगर, (दिल्ली, एनसीआर)

2. **प्रकाशन का समय काल :** त्रैमासिक

3. **मुद्रक का नाम :** बालाजी ऑफसेट,
राष्ट्रीयता : भरतीय
एड्रेस : (न्यू-एम-28), 111844, उल्धनपुर, नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

4. **प्रकाशक का नाम :** डॉ. संजीव कुमार
राष्ट्रीयता : भरतीय
एड्रेस : सी-122, सेक्टर-19, नोएडा-201301, गौतमबुद्ध नगर, (दिल्ली एनसीआर)

5. **सम्पादक का नाम :** डॉ. संजीव कुमार
राष्ट्रीयता : भरतीय
एड्रेस : सी-122, सेक्टर-19, नोएडा-201301, गौतमबुद्ध नगर, (दिल्ली एनसीआर)

6. समाचार पत्र का स्वामित्व रखने वाले व्यक्ति ओर साझेदार या आंधरक जो कुल पूंजी का 1 प्रतिशत से अधिक धरित करते हों, का नाम और पता (1.. प्रतिशत), डॉ. संजीव कुमार

मैं डॉ. संजीव कुमार, एतद्वारा घेषित करता हूँ कि उपरोक्त विवरण मेरे संज्ञान एवं विश्वास में सत्य है।